GHN S2 01

गद्य, पद्य एवं हिन्दी व्याकरण–रचना

सेकेण्ड सेमेस्टर

हिन्दी (आधुनिक भारतीय भाषा)

कृष्णकान्त हैण्डिक राज्यिक मुक्त विश्वविद्यालय

पाठ्यक्रम विशेषज्ञ समिति

डॉ. ताराकान्त झा, पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, पाण्डु महाविद्यालय, गुवाहाटी

डॉ. रफिकुल हक, हिन्दी विभाग, पाण्डु महाविद्यालय, गुवाहाटी

पाठ्यक्रम – संयोजक : डॉ. मृणाल ज्योति गोस्वामी, कृष्णकान्त हैण्डिक राज्यिक मुक्त विश्वविद्यालय, गुवाहाटी

पाठ्यक्रम – निर्माण

इकाई	**लेखक**
1, 2, 3, 4, 9.10,11, 14 एवं 15	डॉ. कामाख्या नारायण सिंह हिन्दी विभाग, रंगापारा महाविद्यालय
5, 6 एवं 7	डॉ. ताराकान्त झा पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, पाण्डु महाविद्यालय, गुवाहाटी
8	मनोलिसा चक्रवर्ती हिन्दी विभाग, प्राग्ज्योतिष महाविद्यालय, गुवाहाटी
12 एवं 13	डॉ. नवकांत शर्मा प्रवक्ता, कन्या महाविद्यालय, गुवाहाटी

सम्पादक

भाषा एवं विषय वस्तु : डॉ. ताराकान्त झा, पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, पाण्डु महाविद्यालय, गुवाहाटी

रूपरेखा : डॉ. मृणाल ज्योति गोस्वामी, कृष्णकान्त हैण्डिक राज्यिक मुक्त विश्वविद्यालय, गुवाहाटी

प्रथम प्रकाशन – जनवरी, 2018

This Self Learning Material (SLM) of the Krishna Kanta Handiqui State Open University is made available under a Creative Commons Attribution-Non Commercial-Share Alike 4.0 License (international): http://creativecommons.org/licenses/by-nc-sa/4.0/

कृष्णकान्त हैण्डिक राजकीय मुक्त विश्वविद्यालय की ओर से पंजियक द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित।

मुख्यालय : पाटगॉव, रानी गेट, गुवाहाटी – 781 017 ; Web : www.kkhsou.in
उप-मुख्यालय : हाउसफेड कम्प्लेक्स, दिसपुर, गुवाहाटी-781 006

यह विश्वविद्यालय, इस शिक्षण सामग्री के प्रस्तुतीकरण में आर्थिक अनुदान मुहैया करने के लिये नयी दिल्ली स्थित ***'दूर शिक्षा परिषद'*** *के समक्ष कृतज्ञ है।*

विषयसूचि

पृष्ठा नं

इकाई 1 ः **भक्ति काव्य** 7–23
सूरदास : जीवन दर्शन एवं साहित्य, भ्रमर गीत, पाठ का सारांश ; तुलसीदास : जीवन दर्शन एवं साहित्य, केवट–प्रसंग, पाठ का सारांश

इकाई 2 ः **सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' : 'तोड़ती पत्थर'** 24–33
सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' : जीवन दर्शन एवं साहित्य, 'तोड़ती पत्थर' का पाठ, पाठ का सारांश

इकाई 3 ः **रामधारी सिंह 'दिनकर' : किसको नमन करुँ मैं** 34–43
रामधारी सिंह 'दिनकर' : जीवन दर्शन एवं साहित्य, 'किसको नमन करुँ मैं' का पाठ, पाठ का सारांश

इकाई 4 ः **नागार्जुन : 'अकाल और उसके बाद'** 44–52
नागार्जुन : जीवन दर्शन एवं साहित्य, 'अकाल और उसके बाद' का पाठ, पाठ का सारांश

इकाई 5 ः **मुक्तिबोध : 'अंधेरे में'** 53–63
मुक्तिबोध : जीवन दर्शन एवं साहित्य, 'अंधेरे में' पाठ, पाठ का सारांश

इकाई 6 ः **भगवती चरण वर्मा : चित्रलेखा** 64–81
भगवती चरण वर्मा : व्यक्तित्व एवं कृतित्व, भगवती चरण वर्मा की औपन्यासिक विशष्ताएँ ; चित्रलेखा : कथावस्तु तथा जीवन दर्शन, चरित्र चित्रण, कथोपकथन, वातावरण, भाषाशैली, भावात्मक शैली एवं लक्ष्य

इकाई 7 ः **प्रेमचन्द : ठाकुर का कुआं** 82–100
प्रेमचन्द : जीवन दर्शन एवं साहित्य, ठाकुर का कुआं – कहानी, प्रतिपाद्य विषय की समीक्षा

इकाई 8 ः **जैनेन्द्र कुमार : जाह्नवी** 101–115
जैनेन्द्र कुमार : जीवन दर्शन एवं साहित्य, जाह्नवी – कहानी, प्रतिपाद्य विषय की समीक्षा

इकाई 9 ः **आचार्य रामचन्द्र शुक्ल : मित्रता** 116–125
आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ; मित्रता : कथ्य एवं उद्देश्य ; मित्रता : महत्त्वपूर्ण प्रसंग

इकाई 10 ः **आचार्य शिवपूजन सहाय : साहित्य** 126–134
आचार्य शिवपूजन सहाय : का जीवन एवं साहित्य ; साहित्य : कथ्य एवं उद्देश्य ; साहित्य : महत्वपूर्ण प्रसंग

इकाई 11 ः **डॉ. बिरिंचि कुमार बरूआ : कौआ** 135–141

डॉ. बिरिंचि कुमार बरूआ : जीवन एवं साहित्य ; कौआ : कथ्य एवं उद्देश्य;
कौआ : महत्वपूर्ण प्रसंग

इकाई 12 ः **डॉ. राम कुमार वर्मा : कौमुदी महोत्सव** 142–153

एकांकी की परिभाषा ; एकांकी के तत्व ; डॉ. राम कुमार वर्मा: जीवन एवं साहित्य;
कौमुदी महोत्सव : कथावस्तु : चरित्र चित्रण, संलाप, वातावरण, उद्देश्य, भाषा शैली,
रंगमंच निर्देश

इकाई 13 ः **जगदीश चन्द्र माथुर : बन्दी** 154–164

जगदीश चंन्द्र माथुर : व्यक्तित्व एवं कृतित्व ; बन्दी : एकांकी की कथावस्तु एवं
विश्लेषण : चरित्र चित्रण, संवाद, वातावरण, भाषा शैली, उद्देश्य, रंगमंच निर्देश

इकाई 14 ः **हिन्दी रचना** 165–175

हिन्दी रचना : निबन्ध, कहानी, नाटक एवं एकांकी

इकाई 15 ः **हिन्दी व्याकरण** 176–190

कारक और विभक्ति, लिंग, वाक्य विचार, लोकोक्ति और मुहावरा

सन्दर्भ ग्रन्थ 191- 193

पाठ्यक्रम परिचय : गद्य, पद्य एवं व्याकरण-रचना

आधुनिक भारतीय भाषा के अंतर्गत 'हिन्दी' विषय के पाठ्यक्रम में मुख्यत: निम्नलिखित विषयों का अध्ययण किया जाएगा-

1. कविता (मध्य युगीय और आधुनिक)
2. उपन्यास
3. कहानी
4. हिन्दी गद्य (निबंध)
5. हिन्दी एकांकी
6. व्याकरण एवं रचना

कविता की इकाई में भक्तिकालीन कवि तथा उनकी कविता सम्बन्धी जानकारी उपलब्ध कराई गई है। इन दोनों कालों में से भक्तिकाल के तीन कवियों के जीवन दर्शन एवं उनके साहित्य पर चर्चा की गई है। जबकि आधुनिक काल के चार कवियों के जीवन दर्शन एवं उनके साहित्य पर संक्षिप्त विचार विमर्श किया गया है। इन कवियों का समय तथा वातावरण की विभिन्नता के बावजूद इन सबका उद्देश्य मानव धर्म, मानव- सेवा तथा मानवीय मूल्य की स्थापना ही रही है।

आधुनिक उपन्यास पूजीवादी युग की देन मानी जाती है। आधुनिक युग में उपन्यास का महतवपूर्ण स्थान है। इस पाठ्यक्रम में भगवती चरण वर्मा लिखित लोगप्रिय तथा यशस्वी उपन्यास ''चित्रलेखा'' को रखा गया है। आशा है शिक्षार्थियों को यह अभिरुचिपूर्ण लगेगा। कहानी भी आधुनिक युग की देन है। साहित्य में इसकी भी प्रशंसनीय भूमिका है।

यहाँ कहानी सम्राट प्रेमचन्द रचित प्रसिद्ध काहनी - ''ठाकुर का कुआँ'' तथा जैनेन्द्र कुमार रचित मनोवैज्ञानिक काहनी ''जाह्नवी'' को प्रस्तुत किया गया है जो हृदय स्पर्शी तथा उद्देलित करनेवाली कहानियाँ हैं।

उन्नीसवीं सदी के मध्यभाग से हिन्दी साहित्य का आधुनिककाल आरंभ होता है, तथा इसका श्रेय भारतेन्दु हरिश्चन्द्र को जाता है। भारतेन्दु अपने आप में एक बृहत् संस्था हैं। इन्होंने न केवल स्वयं बल्कि अपने समकालीन विद्वानों को भी आधुनिक हिन्दी के विकास के लिए प्रेरित किया और यहीं से खड़ी बोली की दशा और दिशा भी बदली। वस्तुत: यह काल राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं सुधारवादी, बौद्धिक आन्दोलनों के लिए विख्यात है। यह वह समय है जब गद्य का विकास हुआ। अत: हिन्दी साहित्य का आधुनिक युग अपनी विषय-वस्तु एवं अभिव्यक्ति-शिल्प दोनों ही दृष्टिकोणों से प्राचीन एवं मध्य युग से बहुत ही भिन्न होने के कारण ही यह अपनी अलग एवं नई पहचान बनाने में सफल रहा है। इस समय के प्रत्येक साहित्यिक विधा पर बौद्धिकता, ज्ञानात्मकता, संवेदनात्मकता आदि का आग्रह देखा जा सकता है। अपने पूर्व परम्परा के प्रति सम्मान और वर्तमान एवं भविष्य के प्रति सुधारवादी दृष्टिकोण रचनाकारों में दिखायी देता है। अत: मानवतावादी, आदर्शवादी एवं यथार्थवादी दृष्टियों के माध्यम से समाज को प्रेरित करने वाले रचनाकार आधुनिक साहित्य को नवीन रूप, नवीन संस्कार देते पाये जाते हैं।

व्याकरण की इकाई में मुख्य रूप से हिन्दी व्याकरण को स्थान दिया गया है। विश्वास है कि विद्यार्थी इस पाठ्य क्रम से भी लाभान्वित होंगे।

आप प्रस्तुत पाठ्यक्रम का अध्ययन करते समय मूल पाठ के दाँयें-बाँयें कुछ आयताकार बॉक्स देखेंगे। इन बॉक्सों में, मूल पाठ में आये नये शब्दों के साथ परिभाषाओं के अर्थ भी सन्निविष्ट हैं। इसी प्रकार 'यह भी जानें' शीर्षक में मूल पाठ के साथ बॉक्स में पाठ से सम्बन्धित महत्त्वपूर्ण तथ्यों का संकेत दिया गया है। अध्ययन के साथ-साथ ऊपरि लिखित प्रश्नों के उत्तर बाद में दिये गये हैं। 'स्वनिरीक्षण के पुनर्निरीक्षण' के साथ तुलनात्मक दृष्टि डालने पर आप अधिक लाभान्वित होंगे। प्रत्येक अध्याय में 'विस्तृत जानकारी हेतु पढ़ें' के अधीन कुछ पुस्तकों के नाम सुझाये गये हैं, जो उक्त अध्याय के लिए विस्तृत जानकारी हेतु महत्त्वपूर्ण सिद्ध होंगे। अन्त में सम्भावित प्रश्न दिये गये हैं, जिनसे निरन्तर अभ्यास से आप विषय से भली-भाँति परिचित होंगे।

इकाई 1 : भक्ति काव्य

इकाई की रूपरेखा

1.1 उद्देश्य

1.2 प्रस्तावना

1.3 सूरदास

1.3.1 जीवन दर्शन एवं साहित्य

1.3.2 भ्रमर गीत

1.3.3 पाठ का सारांश

1.4 तुलसीदास

1.4.1 जीवन दर्शन एवं साहित्य

1.4.2 केवट-प्रसंग

1.4.3 पाठ का सारांश

1.5 प्रस्तुत अध्याय से हमने सीखा

1.6 विस्तृत जानकारी हेतु पढ़ें

1.7 स्वनिरीक्षण का पुनर्निरीक्षण

1.8 सम्भावित प्रश्न

1.1 उद्देश्य

प्रस्तुत अध्याय में आप सीखेंगे-

- सूरदास का जीवन दर्शन एवं साहित्य के विषय में
- सूर साहित्य की विशेषताए
- तुलसीदास का जीवन दर्शन एवं साहित्य के विषय में
- तुलसीदास की विचारधारा
- तुलसी की काव्य-कला

1.2 प्रस्तावना

यह हिन्दी पाठ्य क्रम का प्रथम इकाई है। आप अच्छी तरह जानते है कि भक्तिकाल हिन्दी साहित्य का स्वर्णयुग है। यहाँ हम भक्तिकालीन दो महान सन्त कवियों के जीवन दर्शन एवं साहित्य का अध्ययन करेंगे। वे है - सूरदास एवं तुलसी दास। ये दोनों ही भक्त कवि है। इनकी काव्य साधना उदात्त भावना तथा ''बहुजन हिताय-बहुजन सुखाय'' की कामना से प्रेरित

है। ये युग द्रष्टा हैं, युग स्रष्टा कवि हैं। अत: हमारे लिए हैं वन्दनीय, प्रात: स्मरणीय हैं एवं हैं आलोक-स्तम्भ के समान।

1.3 सूरदास

सूरदास भक्ति आन्दोलन के सगुण धारा के कृष्ण भक्त कवि रहे हैं। सूरदास अन्य भारतीय तत्त्ववेत्ता, दार्शनिक, भक्त-कवियों की तरह ही सदैव लौकिक व्यामोह से दूर रहे हैं। इन लोगों ने सदैव ही परलोक सुधार पर विशेष बल दिया। पारलौकिक चिन्तन में विशेष रूप से मग्न रहने के कारण इन लोगों का लौकिक परिचय हमें नहीं मिलता। आत्माभिव्यक्ति से परहेज करने वाले ये लोग ईश्वर भक्ति में ही अपना समय व्यतीत करते थे। सूरदास प्रथम भक्त कवि हैं जिन्होंने ब्रजभाषा को साहित्यिक रूप प्रदान किया था। सूर हिन्दी साहित्य में अमर कवि हैं। इनकी कविता मानो कविता नहीं, बल्कि हृदय- झंकार है। हिन्दी साहित्येतिहास में कबीर, सूर, तुलसी ऐसे भक्त कवि की श्रेणी में आते हैं जिनपर सर्वाधिक समालोचनाएँ हुई हैं। वे एक ऐसे कवि हैं जिनकी कविता में कवित्त्व, भक्तिभाव और जीवन-व्यापार सभी एक रस में घुल मिल गये हैं।

1.3.1 जीवन दर्शन एवं साहित्य

आधुनिक काल के पूर्व जितने साहित्यकार, भक्त, साधु-संत, कवि पैदा हुए थे उनके विषय में विस्तृत जानकारी हमें नहीं मिलती। अन्तर्साक्ष्यों एवं बाह्य साक्ष्यों के आधार पर ही उनके व्यक्तिगत जीवन सम्बन्धी तथ्यों को जान पाते हैं। सूर भी इससे अछूते नहीं हैं।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के मतानुसार सूरदास का जन्मकाल सम्वत् 1540 और मृत्युकाल सम्वत् 1620 के आस-पास है। किन्तु विद्वानों में मतभेद है। कुछ विद्वान इनका जन्म काल वि. स. 1535, वि. सं. 1500 मानते हैं। मृत्युकाल भी थोड़ा-बहुत इधर-उधर ही मानते हैं।

सूरदास के जन्म एवं मृत्यु की तरह ही इनके जन्म स्थान, जाति, गोत्र, वंश परिचय इत्यादि भी संदिग्ध हैं। इनकी जन्मभूमि के विषय में पाँच स्थानों का उल्लेख मिलता है। यथा - मथुरा जिले का गाँव, गोपांचल गाँव, रूनकाटा, सीही, साही। गोपांचल ग्वालियर का पुराना नाम है, गौ घाट के विषय में मतभेद है। साही गाँव आगरा-मथुरा रोड पर स्थित है जिसे प्राय: विद्वान इनका गाँव एवं जन्म स्थान मानते हैं। प्राय: विद्वान सूर को सारस्वत ब्राह्मण मानते हैं। ये बहुत निर्धन परिवार से सम्बन्ध रखते थे। हरिदास के 'भाव प्रकाश' की टीका के अनुसार सूर के तीन भाई थे और स्वयं सूर जन्मांध थे जिसके कारण माता-पिता ने इन पर विशेष-ध्यान नहीं दिया।

इससे तंग आकर वे घर त्याग मथुरा आ गये। मथुरा से रूनकाटा और रूनकाटा से गौ घाट में बस गये और यहीं इन्होंने संगीत एवं काव्य की साधना शुरु की।

गौघाट में ही वल्लभाचार्य से इनकी मुलाकात हुई और उनसे दीक्षा ली। पुष्टि मार्ग में दीक्षित होने के बाद सूर वल्लभाचार्य के साथ हो लिये। सूरदास के हृदय में श्रीमद्भागवत् की कथा सुनकर कृष्ण लीला के प्रति आकर्षित हो गए। सूर ने भागवत् के आधार पर बाल-लीलाओं का वर्णन किया। उनकी भक्ति दास्य भाव से हटकर सख्य भाव की ओर बढ़ी।

नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी की खोज रिपोर्टों के आधार पर सूरदास द्वारा रचित ग्रन्थ इस प्रकार से हैं। 'सूर सारावली', 'साहित्य लहरी', 'सूर सागर', 'भागवत भाषा', 'दशम-स्कन्ध पुराण', 'नागदी लीला', 'सूरदास के पद', 'गोवर्धन लीला', 'सूर पचीसी', 'व्याहलो', 'भँवर गीत', 'सूर रामायण', 'दान लीला', 'सूरसाठी', 'मानलीला', राधा रस केली', 'सेवा फल', 'सूरशतक', 'नल दमयन्ति', 'हरिवंश टीका', 'रामजन्म', 'एकादशी महात्म्य', 'प्राण प्यारी या श्याम सगाइ', 'दृष्टकूट के पद'।

सूर की काव्यगत विशेषताओं को इस प्रकार से देखा जा सकता है। सूरदास भक्ति साहित्य के सार्वकालिक अमर कृष्णभक्त एवं कवि रहे हैं। इन्होंने ज्ञान एवं कर्म के ऊपर भक्ति की श्रेष्ठता सिद्ध की है। इनकी भक्ति पद्धति में ईश्वर का अनुग्रह एवं इसके प्रेम को ही भक्त अपना सर्वस्व समझता है जिसकी उपलब्धि के लिये विभिन्न मानवीय सम्बन्धों - वात्सल्य, सख्य, माधुर्य भाव के माध्यम से सदैव प्रयत्नशील रहता है। वस्तुतः सूरदास अपने सखा एवं अपने प्रभु के सुख-दुःख, हास-परिहास और राधाकृष्ण के बीच विभिन्न लीलाओं में भाग लेने के अधिकारी हैं। सूर के लिए अपने इष्ट देव कृष्ण का कोई भी कार्य गोपनीय नहीं है। यही कारण है कि उन्होंने कृष्ण की बाल-लीला, राधा-कृष्ण प्रेम प्रसंगों- अर्थात् संयोग-वियोग का भी इतनी तन्मयता से वर्णन किया है।

वल्लभाचार्य के पुष्टि मार्ग में वात्सल्य भक्ति को विशेष महत्व दिया जाता है। अतः सूर के कृष्ण बाल-लीला में इसकी विस्तृत जानकारी मिलती है। इसके अन्तर्गत कृष्ण के जन्म से लेकर घुटने के बल चलते, बड़े होने, दूध पीने, मखन चुराने, गोपाल सखाओं के साथ खेलने इत्यादि का बड़ा ही मनोरम चित्रण मिलता है। वस्तुतः कृष्ण लीला के माध्यम से सूर, ईश्वर की महत्ता और वैभव के आवरण को उठाकर उसके निर्विकार शिशु स्वरूप के निकट पहुँच गये हैं। वात्सल्य भाव के अन्तर्गत भगवान का यह स्वरूप भक्तों को अधिक प्रिय है। सूर साहित्य में वात्सल्य, साख्य एवं माधुर्य को विशेषत्व प्राप्त है एवं यह विशेष रूप से अंकुरित एवं पल्लवित भी हुआ है।

सूर के कृष्ण परमब्रह्म हैं, किन्तु राधा के बिना वे अधूरे हैं। 'रा' का दार्शनिक अर्थ होता है शक्ति और 'धा' का दार्शनिक अर्थ है धारण करने वाला (या वाली) इस

प्रकार से राधा का अर्थ है शक्ति को धारण करने वाली। राधा, कृष्ण के लिए पहले शक्ति है फिर प्रेमिका या प्रमुख गोपिनी। राधा स्वकीया है। सूर ने राधा के माध्यम से प्राय: स्वकीया भक्ति को प्रधानता दी है। इस प्रकार से सूर की राधा नितांत मौलिक बन पड़ी है। राधा को 'सूरसागर' में निम्नलिखित रूप में चित्रत किया गया है: राधा–कृष्ण का प्रथम प्रेम दीर्घ सहवास का स्वाभाविक परिणाम है, वह स्वकीया प्रेमिका, विशुद्ध उच्चकोटि की गर्विता प्रेयसी और विरह के क्षण मौन, गम्भीर एवं करुणा की प्रतिमूर्ति है। अधीत पुरुष और नारी (प्रकृति) के बीच का प्रेम अपने उच्च शिखर को पाता है।

सूर की भाषा ब्रजभाषा है। वह अपनी कोमल, मधुर, समासपूर्ण एवं अलंकृत शब्दावली से सुसज्जित है। सूर के काव्य में माधुर्य एवं ओजगुण आये हैं; किन्तु प्रसाद गुण इनके काव्य की मुख्य विशेषता है। इनकी शैली गेय है, साथ ही साथ सूर साहित्य में गीतिपरक पद भी उपलब्ध हैं जो विभिन्न राग–रागिनियों पर आधारित हैं। उनके काव्य में अलंकारों का सुन्दर चयन है। इसके अतिरिक्त बिम्ब, प्रतीक आदि के द्वारा भी सूर ने ईश्वर एवं भक्त के बीच एक सेतु का निर्माण किया है।

''वार्ता–साहित्य से पता चलता है कि सूरदास का यश सुनकर बादशाह अकबर भी उनसे मिले थे। ... सूरदास के साहित्य को पढ़ते समय हमें इस बात को याद रखना चाहिए कि निखिलानन्द–संदोह भगवान श्रीकृष्ण ही उसमें अभिव्यक्त प्रेम के आलम्बन हैं।'' (आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी – हिन्दी साहित्य : उद्‌भव और विकास – पृ. 150) सूरदास अष्टछाप के कवियों में से एक हैं। (अष्टछाप के कवि – सूरदास, कृष्णदास, परमानन्ददास, कुम्भनदास, नन्ददास, चतुर्भुजदास, छीतस्वामी, गोविन्दस्वामी) अष्टछाप के सभी कवियों में लीलागान एवं ईश्वर का रूप–माधुर्य वर्णन करने की प्रवृत्ति पायी जाती है। इनके भक्तिभाव की रचनाओं के प्रचार–प्रसार के बाद लौकिक रस की परम्परा फीकी पड़ती नजर आई। इन कवियों ने उसमें नये प्राण डाले। कालान्तर में ब्रजभाषा को लीलानिकेत ईश्वर श्रीकृष्ण के गुणगान के साथ एकांत भाव से बाँधने का श्रेय इन्हीं अष्टछाप के कवियों को प्राप्त है।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने सूर की भक्ति को एकान्त साधना का विषय माना है। उनकी दृष्टि में वह लोक धर्म का आदर्श नहीं प्रतिष्ठित करती। इसलिये कृष्ण–चरित्र के माध्यम से पारिवारिक एवं सामाजिक जीवन सम्भव स्फुरण नहीं हो सकता है।

भ्रमर एक कीट है जो रसपान के लिये एक पुष्प से दूसरे पर मंदराता रहता है। वह अस्थिर होता है। अपनी इस विशिष्टता के कारण वह प्रेम–प्रवंचकों एवं रसलोलुप युवकों का प्रतीक बन गया है। नायक की लम्पटता एवं निष्ठुरता को दर्शाने के लिए कवियों ने भ्रमर को प्रतीक स्वरूप चुना। भ्रमरगीत प्रसंग सर्वप्रथम कालिदास के 'अभिज्ञानशकुंतलम्' में मिलता है। इसके पश्चात् संस्कृत के जन कवियों ने भ्रमर का प्रयोग रसलोलुप, निर्मोही प्रेमियों के लिए करना प्रारंभ किया। हालाँकि सूर ने

'भ्रम' शब्द का प्रतीक प्रयोग श्रीमद्भागवत् के प्रभाव में आकर किया है। श्रीभद्भागवत् के दशमस्कन्ध के छिहेयालिसवें एवं सैतालिसवें अध्याय में भ्रमरगीत का प्रसंग मिलता है। यहाँ गोपियाँ भ्रमर को अपने कपटी प्रियतम का सखा कहकर सम्बोधित करते हुए उसे उपालम्भ देती हैं। सूरदास के भ्रमरगीत प्रसंग का उद्गम यद्यपि श्रीमद्भागवत् है तथापि सूर का भ्रमरगीत प्रसंग अपेक्षाकृत अधिक आकर्षक, सरस, विस्तृत, नवीन, उक्ति वैचित्र्यपूर्ण, वाग्विदग्धतापूर्ण, व्यांग्यात्मक, विनोदपूर्ण, चामत्कारिक, विरहपूर्ण एवं काव्यपूर्ण है। कहने का तात्पर्य यह कि हिन्दी साहित्य में भ्रमरगीत के प्रथम प्रणेता सूरदास हैं। श्रीमद्भागवत् में कृष्ण के विरह में विकल गोप-गोपियों एवं नन्द-यशोदा को सांत्वना देने के लिये कृष्ण अपने ज्ञानी सखा उद्धव को गोकुल भेजते हैं। सूर ने इस कथा-सूत्र को ग्रहण कर अपने साधनात्मक सिद्धान्तों के अनुसार अपने काव्य का विषय बनाया। 'सूरसागर' में संगृहीत भ्रमरगीत प्रसंग के दो उद्देश्य हैं - विरहाकुल ब्रज गोप-गोपिकाओं तथा यशोदा-नन्द को सांत्वना देना एवं दूसरा उद्धव के ज्ञान-गर्व का दलन करना। 'सूरसागर' में यह दूसरा उद्देश्य अधिक महत्वपूर्ण है। सूर ने इस दूसरे परिवेश में ज्ञान पर प्रेम (भक्ति) की श्रेष्ठता प्रदर्शित की है। यहाँ ज्ञान पर भक्ति की विजय हुई है। निर्गुण ब्रह्म पर सगुण ब्रह्म की तथा ज्ञानयोग पर प्रेमभक्ति की वरीयता - श्रेष्ठता स्थापित की है। सूर का 'भ्रमरगीत' यद्यपि निर्गुण ब्रह्म पर सगुण ब्रह्म के विजयनिरूपणार्थ प्रणीत हुआ तथापि उसमें काव्य रस का समुद्र लहराता दृष्टिगत होता है। भ्रमरगीत प्रसंग के माध्यम से सूर ने प्रेम एवं भक्ति को जिस तन्मयता से प्रतिष्ठित किया है, वह विलक्षण है।

इसे भी जानें



आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी अपनी पुस्तक हिन्दी साहित्य की भूमिका में लिखते हैं कि - भक्तों में मशहूर है कि सूरदास उद्धव के अवतार थे। यह उनके भक्त और कवि-जीवन की सर्वोत्तम आलोचना है। वृहद्भागवतामृत के अनुसार उद्धव भगवान के महाशिष्य, महामृता और महाप्रियकर थे। वे सदा श्रीकृष्ण के साथ रहते थे। शयन के समय, भोजन के समय, राज-कार्य के समय-कभी भी भगवान का साथ नहीं छोड़ते थे, यहाँ तक कि अंत:पुर में भी साथ रहते थे। केवल एक बार उन्होंने भगवान का साथ छोड़ा था और वह उस समय जब उन्हें भगवान ने ब्रज में गोपियों की खबर लेने को भेजा था। इस बार उन्हें भगवत्संग से दूना आनंद मिला था। उनके तीन काम थे, भगवान् की पद-सेवा, उनसे परिहास करना और क्रीड़ा में साथ रहना। पहले काम में वे इतने तन्मय रहते थे कि अबोध लोगों को यह भ्रम हो जाता था कि वे पागल हो गये हैं।

सूरदास के जीवन का यही परिचय है। उद्धव के सभी गुण उनमें वर्तमान थे। अपने काव्य में एक ही जगह उन्होंने भगवान का साथ छोड़ा हौ, 'भ्रमरगीत' में। और इस बात में कोई संदेह ही नहीं कि इस अवसर पर सूरदास को भी दूना रस मिला था। इसी तरह इस कथन का यह भी अर्थ है कि सूरदास की भक्ति में हास्य, (प्रीति-रीति) सरव्य और मधुर इन तीनों भावों का सम्मिश्रण है।

अत: कहा जा सकता है कि उद्धव और सूर में कोई अन्तर नहीं और सूर, उद्धव के अवतार हैं। 'सूरसागर' का 'भ्रमरगीत' सर्वोत्कृष्ट अंश है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल भी अपनी सम्पादित पुस्तक 'भ्रमरगीत-सार' में एक स्थान पर लिखा है - ''भ्रमरगीत सुरसागर के भीतर का एक सार रत्न है।'' श्रीमद्भागवत् की तरह ही सूरदास के भ्रमरगीत प्रसंग का प्रथम पद श्री कृष्ण के वचन उद्धव के प्रति हैं और अन्त में पुन: कृष्ण के वक्तव्य उद्धव के प्रति हैं। वस्तुत: भ्रमरगीत परम्परा का मूल उत्स श्रीमद्भागवत् के दशम स्कन्ध के छियालिसवें एवं सैंतालिसवें अध्याय से है; किन्तु मध्यकालीन जनभाषाओं की परम्परा में इसका सूत्रपात सर्वप्रथम सूर ने ही किया था।



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 1 : सूरदास के गुरु कौन थे ?

.....

प्रश्न 2 : भ्रमरगीत का मूल प्रेरणा स्रोत क्या है।

.....

1.3.2 भ्रमरगीत

(1)

ऊधौ कोकिल कुजत कानन।
तुम हमकौं उपदेश करत हौ, भस्म लगावन आनन॥
औरौ सिखी सखा संग लै लै, टेरत चढ़े पखानन।
बहुरौ आइ पपीहा कैं मिस, मदन हनत निज वानन॥
हमतौ निपट अहीरि बावरी, जोग दीजिऐ जानन।
कहा कथत मासी के आगैं, जानत नानी नानन॥
तुम तौ हमैं सिखावन आए, जोग होइ निरवानन।
सूर मुक्ति कैसें पूजति है, वा मुरली के तानन॥

(2)

लरिकाई की प्रेम कहौ अलि कैसें छूटत।
कहा कहौं ब्रजनाथ चरित, अंतरगति लूटत॥
वह चितवनि वह चाल मनोहर, वह मुसकानि मंद-धुनि गावनि।
नटवर-भेष नंद-नंदन कौ वह विनोद, वह वन तैं आवनि॥
चरन कमल की सौह करति हौं, यह संदेस मोहिँ विष लागत।
सूरदास पल मोहि न बिसरति, मोहन मूरति सोवत जागत।

1.3.3 पाठ का सारांश

(**1**)

प्रस्तुत पद में गोपियाँ उद्धव से कहती हैं कि हे उद्धव, कोयल वन में कूकती है। तुम हमें मुँह में भस्म मलने का उपदेश देते हो। मोर अपने मित्रों के साथ पहाड़ के टीले पर चढ़कर टेरते हैं। पपीहा के बहाने कामदेव आकर उस पर अपने वाणों से वार करता है। हम तो बावरी (अल्हड़) अहीर की लड़कियाँ हैं। अत: योग की शिक्षा किसी समझदार, गहन गम्भीर ज्ञानी को दो, हमें नहीं। मौसी से पूछते हो कि नाना-नानी को जानते हो अर्थात् हम कृष्ण को जानती हैं। तुम हमें योग और ज्ञान की शिक्षा देने आये हो जिससे हमें मोक्ष मिलेगा, लेकिन मोक्ष तो हमें कृष्ण की मुरली की तान से ही मिलेगा, अन्य किसी वस्तु से नहीं। हमारे लिये मुरली की तान ही सबकुछ है।

(**2**)

प्रस्तुत पद में गोपियाँ उद्धव से कहती हैं कि हे उद्धव, तुम क्या जानो, प्रथम प्रेम तो बचपन में ही प्रारम्भ हुआ। यह छूटे नहीं छूटता। हम कृष्ण के चरित्र के विषय में क्या कहें, वह तो हृदय के भीतर बैठ कर लूट गया। कृष्ण की आँखें, उनकी सुन्दर चाल, प्यारी मुस्कान, मन्द-मन्द स्वर में गाये गीतों की तान, उनका वेष, उनका विनोद, हास-परिहास, वन से वापस लौटना, सब कुछ मानो हृदय को मोह लेने वाले हैं। कृष्ण के चरणों की सौगन्ध खाकर कहती हूँ, तुम्हारा संन्देश विष के समान लगता है। सूरदास के अनुसार गोपियाँ कहती हैं कि वह मोहनी सूरत सोते-जागते हम कभी नहीं भूलती। कृष्ण ही हमारे सब कुछ हैं।

सूरदास कृष्ण भक्ति शाखा के अमर भक्त कवि हैं। वह उच्च कोटि के भक्त हैं। उनकी भक्ति अन्त:करण की प्रेरणा और अन्तर की अनुभूति की अभिव्यक्ति थी। उनकी साधना में ज्ञान, भक्ति और कर्म का पूर्ण सामंजस्य है। सूर ने अपने काव्य के माध्यम से लौकिक-अलौकिक कथाओं का सम्मिश्रण कर पूरी कृष्ण कथा को उच्चता प्रदान की है। भ्रमरगीत में सूर की भाषा का साहित्यिक सौंदर्य इतने निखार पर है तथा उपमाओं का

चुनाव इतना सार्थक एवं उपयुक्त है कि कवि की कोई तुलना नहीं है। भ्रमरगीत सूरदास के अमूल्य एवं अद्वितीय सृष्टि है जिसकी रचना इन्होंने बन्द आखों से की।

भ्रमरगीत में उद्धव के ज्ञान योग पर ब्रज की गोपियों का कृष्ण प्रेम भारी पड़ता है। गोपियाँ किसी भी प्रकार से उद्धव के किसी भी तर्क से सहमत नहीं हैं। प्रेम प्रताड़ित अवस्था में भी गोपियाँ चुभते व्यंग्य-विनोद तथा आँसुओं से आर्द्र उपलम्भ उद्धव के सामने झड़ी लगा देता है। इतना ही नहीं, गोपियों ने अनेक तर्क एवं दृष्टांत देकर उद्धव का मुँह बन्द करने का प्रयत्न किया है। पीड़ा की गहराई में गोपियों की प्रणयवृत्ति ने हास्यविनोद का ऊपरी कवच पहन लिया है।

भ्रमरगीत के माध्यम से सूर आत्मा-परमात्मा के सफल मिलन की बात करते हैं।

स्वनिरीक्षण



प्रश्न 3 : सूरदास किस मुगल बादशाह से मिले थे ?

.....

प्रश्न 4 : सूरदास किस प्रकार के इष्ट को महत्व देते हैं ?

.....

1.4 तुलसीदास

तुलसीदास हिन्दी साहित्य के इतिहास के कवियों-साहित्यकारों में सबसे अधिक लोकप्रिय रहे हैं। ज्ञान-भक्ति और साहित्य के मध्य में रहकर उन्होंने समाज को देखा था। उन दिनों भक्ति, ज्ञान और धर्म के नाम पर विभिन्न सम्प्रदायों की स्थापना हुई थी और वे अलग-अलग दिशाओं की ओर तत्कालीन जनताओं को आकर्षित-प्रेरित एवं प्रभावित करते रहे थे।

भक्तिकाल की विषम परिस्थितियों ने तुलसीदास जैसे महान एवं युग प्रवर्तक व्यक्तित्व के धनी कवि को जन्म दिया था। उनके समाज में मूलत: दो ही वर्ग थे-सम्भ्रांत और गरीब। सम्भ्रान्त में सब धर्मों के लोग थे और वे गरीबों को दोनों हाथों से लूटते ही नहीं थे, अत्याचार-अन्याय, पारम्परिक रूढ़ियों-धर्म विश्वासों आदि के द्वारा परेशान भी करते थे। तुलसी ने इन विषम आधार भूमियों में रहकर एक व्यापक शुद्ध लोकधर्म की स्थापना की थी। उन्होंने रामराज्य की स्थापना के स्वपनों द्वारा एक नया आदर्श समाज के सामने रखा था। ऐसा करते समय कदापि वे अशुभ सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक शक्तियों (तत्वों) से समझौता नहीं करना चाहते थे यद्यपि उन्हें समन्वयवादी कहा जाता है। अपने आदर्श पर खड़ा होने के लिए वे कबीर की ही भाँति दो प्रकार की भाषाओं को अपनाया करते थे। एक साहित्यिक भाषा और दूसरी लोकभाषा। शंकरदेव एवं माधवदेव की 'ब्रजाबुली' की तरह उनकी लोकभाषा एक ऐसी जहाज है जिससे

लक्ष्य पर आसानी से पहुँचा जा सकता है। उनका 'मानस' व्यापक लोकधर्म के प्रचार-प्रसार का एक माध्यम है तो 'विनय पत्रिका' (विनय की पत्रिका) परमब्रह्म के प्रति भक्ति भाव प्रसूनों की सौरभ से युक्त माला है।

तुलसीदास का महत्व बताने के लिये अनेक विद्वानों ने अनेक प्रकार की तुलनात्मक उक्तियाँ प्रस्तुत की हैं। नाभादास इन्हें 'कलिकाल का वाल्मीकि', स्मिथ इन्हें 'मुगलकाल का सबसे महान व्यक्ति', जॉर्ज ग्रियर्सन ने इन्हें 'बुद्धदेव के बाद सबसे बड़ा लोक-नायक कहा है।

1.4.1 जीवन दर्शन एवं साहित्य

तुलसीदास सगुण भक्ति धारा के अन्तर्गत राम भक्ति शाखा के अग्रणी कवियों में से हैं। तुलसी के राम विष्णु के अवतार एवं दशरथ के पुत्र हैं। हिन्दी साहित्येतिहास में कबीर, केशव, सूर आदि के समान तुलसीदास बहुचर्चित सार्वकालिक भक्त एवं कवि रहे हैं। तुलसीदास के सर्वाधिक लोकप्रिय होने का कारण यह है कि अपने भोगे हुए जीवन, सत्य, समाज इत्यादि को ही उन्होंने अपने काव्य का माध्यम बनाया। तुलसी के राम भी परम्परागत रूप में नहीं रह कर तुलसी के अनुरूप बने। तुलसी के यहाँ राम का संघर्ष, समकालीन संसार और जीवन का संघर्ष है। तुलसी के लिये राम एक ओर दर्शन एवं चिन्तन के माध्यम हैं तो दूसरी ओर इनके साहित्य में लोक नायक, पुरुषोत्तम हैं। राम के माध्यम से विषमता, धर्मभीरूता, प्रवंचना, अनैतिकता, वैषम्य इत्यादि को हटाकर राष्ट्र को, विश्व को एक सुखद भविष्य की ओर ले जाने की छटपटाहट तुलसी में स्पष्ट दिखायी देती है। तुलसी ने मनुष्य की शाश्वत वृत्तियों का अत्यन्त सूक्ष्म उद्‌घाटन किया है। तुलसी लोकनायक हैं।

उत्तर भारत को रामभक्ति की प्रेरणा देने का श्रेय स्वामी रामानन्द को है। उन्होंने संस्कृत के साथ जनसाधारण की भाषा में भी रामभक्ति का प्रचार किया। यद्यपि स्वामी रामानन्द के शिष्य भारतवर्ष में रामभक्ति का उपदेश जनता को दे रहे थे, पर हिन्दी साहित्य क्षेत्र में इस भक्ति का पूर्ण विकास विक्रम की 17 वीं शताब्दी के पूर्वाद्ध में गोस्वामी तुलसीदास की वाणी से हुआ। वास्तव में रामभक्ति को प्रकृत रूप में प्रवाहित करने का श्रेय महाकवि तुलसीदास को है। रामकथा को तुलसी ने बड़े ही धार्मिक एवं मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किया है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि तुलसीदास एक ऐसे समय में साहित्य-संसार (भक्ति के क्षेत्र) में आते हैं जब पूरा-का-पूरा भारतवर्ष त्रस्त था। लेकिन तुलसी को पारम्परिक भक्ति साधना, सांस्कृतिक चेतना हाथ में लग गयीं और इसी के बल पर उन्होंने भारतीय समाज का भूत-वर्त्तमान-भविष्य की अति सुन्दर व्याख्या प्रस्तुत की। इससे पूरा-का-पूरा साहित्य संसार गौरवान्वित हुआ।

प्राचीन कवियों एवं भक्तों की भाँति तुलसीदास के जीवन, जन्म, परिवार इत्यादि के सम्बन्ध में विशेष जानकारी नहीं मिलती है। 'शिवसिंह सरोज' में इनका जन्म सं. 1583 दिया गया है। इनका देहावसान सम्वत् 1680 में श्रावण शुक्ला सप्तमी को गंगा किनारे हुआ। बाबा बेनीमाधव के अनुसार सं. 1680 में श्रावण कृष्णा तीज शनि को बताया गया जो ठीक तिथि जान पड़ता है। कारण काशी में इनके बड़े एवं घनिष्ठ मित्र और भक्त अदौनी के एक भूमिहार जमींदार टोडर जिनके वंशज थे, आज भी इसी तिथि को गोस्वामी जी के नाम सीधा दिया करते हैं।

जन्म वर्ष की ही भाँति इनके जन्म स्थान के विषय में भी मतभेद है। कोई इनका जन्म स्थान सोरो मानता है जो एटा जिले में है। कुछ लोगों के अनुसार इनके पिता राजापुर के राजगुरु थे। तुलसी दास के पिता का नाम आत्माराम दुबे था एवं माता हुलसी थी। पिता ने इनके मूल-नक्षत्र में जन्म लेने के कारण इन्हें त्याग दिया था। इनके पालन-पोषण का भार माँ ने मुनिया नामक दासी को सौंप दिया।

बचपन में इन्हें रामबोला के नाम से पुकारा गया, कालान्तर में तुलसी राम, तुलसी दास, गोसाईंजी के नाम से ज्ञात हुए। ये जाति के ब्राह्मण थे। इनके जन्म के पाँच वर्ष बाद मुनिया दासी मर गयी; किन्तु इनके पिता ने इन्हें घर लाने से साफ मना कर दिया, हालाँकि कुछ दिनों बाद ही इनके माता-पिता का भी देहांत हो गया। तुलसी ने भीख माँगकर अपना गुजर बसर आरंभ किया। सन् 1554 के आस-पास इनका विवाह बदरिया गाँव के निवासी दीनबंधु पाठक की पुत्री रत्नावली से हुआ। वैवाहिक जीवन सफल नहीं हुआ और कुछ दिनों बाद ही इन्होंने वैराग्य धारण कर लिया।

राजापुर के रामभक्त नरहरिदास इनके गुरु बने। नरहरिदास रामानन्द के शिष्यों में से एक थे। नन्ददास इनके चचेरे भाई थे। वे भी नरहरिदास के ही शिष्य थे। '' इन्हीं अपने गुरु नरहरि दास के साथ गोस्वामी जी काशी में आकर पंचगंगा घाट पर स्वामी रामानन्द के स्थान पर रहने लगे। वहाँ पर एक विद्वान महात्मा शेष सनातनजी रहते थे, जिन्होंने तुलसी दासजी को वेद, वेदांग, दर्शन, इतिहास, पुराण आदि में प्रवीण कर दिया। 15 वर्ष तक अध्ययन करके गोस्वामी जी फिर अपनी जन्मभूमि राजापुर को लौटे, पर वहाँ इनके परिवार में कोई नहीं रह गया था और घर भी गिर गया था।''

हिन्दी का रामकाव्य एक ओर संस्कृत वाङ्मय की परम्परा से सम्बद्ध है तो दूसरी ओर दक्षिण के वैष्णव आन्दोलन से भी प्रभावित है। अन्यतम रामभक्त तुलसी एक ओर 'नानापुराणनिगमागम' का उल्लेख करते हैं, तो दूसरी ओर उनके काव्य में रामानुज के दर्शन का प्रभाव भी देखा जा सकता है। अलवार भक्तों में से पाँचवें शठओप अथवा नम्मालवार रामभक्ति के प्रथम आचार्य माने जाते हैं। ब्राह्मण सम्प्रदाय के आचार्य माध्वाचार्य एवं श्री सम्प्रदाय के रामानुजाचार्य की परम्परा ही आगे चलकर हिन्दी में रामानन्द के माध्यम से राम कथा आगे बढ़ी है। हिन्दी में तुलसी एक प्रमुख

कवि एवं भक्त हुए। इनके द्वारा रचित ग्रन्थ निम्नलिखित हैं – वैराग्य संदीपनी, रामललानहछू, रामाज्ञाप्रश्न, वरवैरामायण, पार्वतीमंगल, जानकी मंगल, श्रीकृष्ण गीतावली, गीतावली, दोहावली, कवितावली, विनयपत्रिका, रामचरितमानस, सतसई, बाहुक।

हिन्दी साहित्येतिहास में तुलसी का जिस समय आगमन हुआ था उस समय आपसी वैमनस्यता, अहंकार, तुच्छ राजनीति के कारण शासन व्यवस्था की नींव तक हिल चुकी थी। विचार, विषाद और विवाद का रूप धारण का चुका था, युद्धों की विभीषिका से हमारे सारे ज्ञान–विज्ञान, दर्शन–पुराण, स्मृति–योगानुष्ठान, नाथ–पंथ–तांत्रिक सम्प्रदाय अपने–अपने अखाड़ों में फँसे थे एवं मौन धारण कर चुके थे। मुसलमान भारत में सुदृढ़ हुए एवं विजयी शासक होने के नाते उनकी मनमानी आरम्भ हो चुकी थी। तुलसी की भक्ति एवं साहित्य ने राम को आदर्श बनाया। समन्वयवादी तुलसीदास की रचनाओं ने टूटते समाज को जोड़ दिया। भक्ति के परिवेश में उन्होंने राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, आध्यात्मिक, सांस्कृतिक इत्यादि सभी क्षेत्रों में रामभक्ति द्वारा समन्वय की स्थापना की। एक भक्त के नाते उन्होंने कर्म, ज्ञान व भक्ति का समन्वय करके उससे तत्कालीन भक्ति की आड़ में होने वाले अनर्थों पर भी आक्षेप किया।

तुलसी की रचनाओं में जहाँ सर्वत्र समन्वय की भावना दृष्टिगत होती है, वहीं दूसरी ओर कलापक्ष, भाषा, भाव, शैली की दृष्टि से भी परिपक्वता दिखाई पड़ती है। ब्रजभाषा एवं अवधी पर इनका एकाधिकार था, यह कहना गलत न होगा। आत्म निवेदन करने के लिये लिखे–गाए जाने वाले 'विनय पत्रिका' के पद ब्रजभाषा की स्थायी सम्पत्ति है। 'रामचरित मानस', 'कवितावली' आदि में अवधी का प्रयोग कर इस भाषा को तुलसी ने राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में एक उत्कृष्ट भाषा के रूप में खड़ा किया। शैली के सम्बन्ध में भी उन्होंने शास्त्रीय पद्धति के अनुसार काव्य–शरीर की रचना अलंकार, छन्द, रस, गुण, वृत्ति, रीति का कुशल निर्वाह किया। इनमें इन्होंने महाकाव्य, मुक्तक, गीति– तीनों शास्त्रीय शैलियों को सफलता से प्रयुक्त किया। वीरगाथा काल में बहुप्रचलित छप्पय पद्धति के कृष्ण भक्त कवियों की गीति पद्धति, चारणों की सवैया पद्धति, गीतिकारों की दोहा पद्धति, प्रेमाख्यानों की दोहा–चौपायी पद्धति का सुरूचिपूर्ण ढंग से सफल प्रयोग किया। इन्होंने अलंकारों का भी अत्यन्त सुन्दर प्रयोग किया। तुलसी ने अपने काव्य में अनुप्रास, यमक, श्लेष, उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, व्यतिरेक, दृष्टान्त, समासोक्ति, अतिशयोक्ति, सांगरूपक इत्यादि अलंकारों का सार्थक प्रयोग किया।

वस्तुत: तुलसी का वर्ण्य विषय बहुआयामी एवं व्यापक है। तुलसी जीवन के किसी एक पक्ष को लेकर नहीं चले, बल्कि मानव जीवन के समग्र पक्ष का सांगोंपांग चित्रण उनके साहित्य का विषय रहा है। इनके काव्य में मानव के समस्त भावों और व्यवहारों का चित्रण है। इनकी भक्ति और लोक जीवन साथ–साथ चलते हैं जिससे मर्यादा का संतुलन बना रहे।

''रामानन्द के बाद रामभक्ति के प्रचारकों में तुलसीदास जी का सबसे महत्त्वपूर्ण स्थान है। महाकाव्य काल में ईश्वर-भक्ति करने वालों की दो प्रधान धाराएँ थीं - सगुण-निर्गुण। दोनों ही एक दूसरे को अमान्य समझते थे, पर तुलसीदास ने सगुण, निर्गुण में कोई भेद नहीं माना। इस प्रकार तुलसीदास जी का दृष्टिकोण समन्वयवादी है। उनके मतानुसार ब्रह्म निर्गुण है, पर भक्तों के दु:ख के हरण के लिये सगुण रूप धारण कर लेते हैं।'' तुलसी रामभक्ति शाखा के सगुणोपासक भक्त कवि हैं। इन्होंने श्री रामचन्द्र को ही सच्चिदानन्दघन माना और यही राम परम तत्त्व भी हैं। तुलसी मानते थे कि ज्ञान और भक्ति द्वारा ब्रह्म को पाया जा सकता है। जप, तप, व्रत, नियम को मानते हुए भक्ति को सर्वोपरि माना। तुलसी, नवधा भक्ति पर विशेष बल देते हैं। (सत्संग, ईश्वर के गुणों का श्रवण, गुरू चरणों की सेवा, ईश्वर के गुणों का गान, मंत्रजप एवं ईश्वर में श्रद्धा एवं विश्वास रखना, वैराग्य, सम्पूर्ण जगत् को राममय देखना, सन्तोष, राम का आश्रय) तुलसी के अनुसार भक्ति के तीन साधन हैं - पहले तो ब्राह्मणों के चरणों में प्रीति हो और वेद के अनुसार सभी अपने-अपने कामों को करें। संतों, गुरुओं के चरणों में प्रेम हो और जो ईश्वर के प्रति पूर्ण रूप से समर्पित हो, उसके हृदय में साक्षात ईश्वर निवास करते हैं और वैसा व्यक्ति भक्ति के माध्यम से सद्गति को पाता है। तुलसी ने राम की भक्ति को एक अवलम्ब के रूप में स्वीकारा है। व्यष्टि एवं समष्टि जीवन के सभी विकारों और विकृतियों के बीच चूँकि जीवन के विकास और समृद्धि की स्वस्थ स्थितियाँ सम्भव नहीं है, इसलिये सहारे के लिए प्रयास करना अथवा कारगार अवलम्ब ढूँढ़कर आगे बढ़ना ही मनुष्य का चरम लक्ष्य होता है। इसे तुलसी ने भक्ति का जामा पहनाया।

तुलसी भक्ति के माध्यम से ईश्वर के सान्निध्य में जाने की बात करते हैं। इनका मूल मंत्र भक्ति है, वह भी राम की, जो सर्वव्यायी हैं। प्रस्तुत पाठ्यांश 'रामचारित मानस' के 'अयोध्या काण्ड' से आपके पाठ्यक्रम के लिए रखा गया है। तुलसीदास का 'रामचरितमानस' एक अद्वितीय एवं अमूल्य महाकाव्य है। केवट प्रसंग में एक भक्त का मार्मिक, सूक्ष्म एवं जीवन्त चित्रण है। यह चित्रण इतना हृदय-स्पर्शी है कि पाठक भाव-विभोर हुए बिना नहीं रह सकते।



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 5 : केवट-प्रसंग किस रचना से उद्धृत है ?

.....

प्रश्न 6 : तुलसीदास के माता-पिता का क्या नाम था ?

.....

1.4.2 केवट - प्रसंग (रामचरितमानस से)

मागी नाव न केवटु आना। कहइ तुम्हार मरमु मैं जाना॥
चरन कमल रज कहुँ सबु कहई। मानुष करनि मूरि कछु अहई॥
छुअत सिला भइ नारि सुहाई। पाहन तें न काठ कठिनाई॥
तरनिउ मुनि धरिनी होइ जाई। बाट परइ मोरि नाव उड़ाई॥
एहि प्रतिपालउँ सबु परिवारू। नहि जानउँ कछु अउर कबारू॥
जौं प्रभु पार अवसि गा चहहू। मोहि पद पदुम पखारन कहहू॥
पद कमल धोइ चढ़ाइ नाव न नाथ उतराई चहौं।
मोहि राम राउरि आन दसरथ सपथ सब साची कहौं॥
वरु तीर मारहुँ लखनु पै जब लागि न पाय पखारिहौं।
तब लगि न तुलसीदास नाथ कृपाल पार उतारिहौं॥

सुनि केवट के बैन प्रेम लपेटे अटपटे।
बिहसे करूनाऐन चितइ जानकी लखन तन॥
कृपासिंधु बोले मुसुकाई। सोइ करु जेहिं तब नाव न जाई॥
बेनि आनु जल पाय पखारू। होत बिलंबु उतारहिं पारू॥
जासु नाम सुमिरत एक बारा। उतरहिं नर भवसिंधु अपारा॥

सोइ कृपालु केवटहि निहोरा। जेहिं जगु किय तिहु पगहु ते थोरा॥
पद नख निरखि देवसरि हरषी। सुनि प्रभु बचन मोहँ मति करषी॥
केवट राम रजायसु पावा। पानि कठवता भरि लेइ आवा॥
अति आनंद उमगि अनुरागा। चरन सरोज पखारन लाया॥
बरषि सुमन सुर सकल सिहाहीं॥ एहि सम पुन्यपुंज कोउ नाहीं॥

पद पखारि जलु पान करि आपु सहित परिवार।
पितर पारु करि प्रभुहि पुनि मुदित गयउ लेइ पार॥

उतरि ठाढ़ भए सुरसरि रेता। सीय रामु गुह लखन समेता॥
केवट उतरि दंडवत कीन्हा। प्रभुहि सकुच एहि नहिं कछु दीन्हा॥
पिय हिय की सिय जाननिहारी। मनि मुदरी मन मुदित उतारी॥
कहेउ कृपाल लेहि उतराई। केवट चरन गहे अकुलाइ॥
नाथ आजु मैं काह न पावा। मिटे दोष दुख दारिद दावा॥
बहुत काल मैं कीन्हि मजूरी। आजु दीन्ह बिधि बनि भलि भूरी॥
अब कछु नाथ न चाहिअ मोरें। दीनदयाल अनुग्रह तोरें॥
फिरती बार मोहि जो देवा। सो प्रसादु मैं सिर धरि लेबा॥

बहुत कीन्ह प्रभु लखन सियैं नहि कछु केवटु लेइ।
बिदा कीन्ह करूनायतन भगति बिमल बरु देइ॥

1.4.3 पाठ का सारांश

पाठ्य क्रम में आपके लिये तुलसी कृत रचना 'रामचरितमानस' के अयोध्या कांड के केवट प्रसंग को रखा गया है। केवट प्रसंग के माध्यम से तुलसी ने अपनी भक्ति भावना को स्पष्ट किया है।

प्रस्तुत पंक्तियों से पहले का प्रसंग : राम का वनवास निश्चित हो गया है और वे अपनी पत्नी, भाई लक्ष्मण के साथ वनगमन कर रहे हैं। जंगल जाने के रास्ते में गंगा नदी है जिसे नाव से पार करना होगा। राम विष्णु के अवतार हैं, यह उनका अनन्य भक्त केवट जानता है। अब उनका चरण कैसे छुए, उनके पैरों को धोकर चरणामृत कैसे पीये।

अत: वह यह कहते हुए नाव लाने से इनकार कर देता है और कहता है कि जब पत्थर ही आपके पैर के स्पर्श से स्त्री हो जाता है, तब तो यह मात्र लकड़ी की बनी नाव है। अगर यह भी स्त्री हो गयी तो हमारे परिवार का क्या होगा। हम तो भूखे मर जायेंगे। इसी से हमारे परिवार का प्रतिपालन होता है। यदि आपको नदी पार जाना है तो आप अपने पैरों को धोने की आज्ञा मुझे दीजिए। आपके चरण-कमल को धोकर ही आपको नाव पर चढ़ाऊँगा, भले ही आप मुझे उतरायी (किराया) न दें। भले ही लक्ष्मण मुझे तीर मारें, लेकिन मैं शपथ खाकर कहता हूँ जब तक आपके पैर नहीं धो लेता मैं आपको पार नहीं उतारूँगा। केवट के इस प्रेम को देखकर लक्ष्मण, जानकी भी मंद-मंद मुस्करा देते हैं। राम अन्तत: मुस्कुरा कर बोले, ''जो तुम चाहते हो वही करो, जल्द जल लाओ, मेरा पैर धोओ और अविलम्ब हमें नदी पार करा दो।'' जिसके नाम लेने मात्र से व्यक्ति को मुक्ति मिल जाती है, कष्टों का निवारण हो जाता है आज वही व्यक्ति केवट (भक्त) के समक्ष विनीत भाव से खड़ा है, विनय कर रहा है। इनका सुन केवट पानी बड़े कठवते में ले आया और बड़े आनन्द से उसने राम के चरणों को धोना प्रारम्भ किया। इस दृश्य को देखकर आकाश से देवों ने पुष्प की वर्षा की और कहा कि इसके समान कोई पुण्य नहीं है। चरणों को धोने के बाद, जलपान आदि करा कर ही केवट ने परिवार सहित राम को नदी के पार पहुँचाया। पार पहुँचते ही राम, सीता, लक्ष्मण नाव से नदी की रेत पर उतरे। केवट ने भी राम को दण्डवत प्रणाम किया। पर राम सकुचा गये। कारण कि वे कुछ दे पाने में असमर्थ थे। इस स्थिति को सीता भाँप गयीं और उन्होंने मणि उतार कर अपने पति की ओर बढ़ा दी और राम केवट को उतरायी देने लगे। इस पर केवट ने कहा, हे प्रभु, मुझे कुछ भी नहीं चाहिए 'मेरे तो आज दुख, दर्द सब मिट गया। मैंने बहुत दिनों तक मेहनत-मजदूरी की है। आज मुझे

विधाता ने सब कुछ दिया। अब मुझे कुछ नहीं चाहिए। आपका अनुग्रह बना रहे' यही मेरे लिये सबसे बड़ा प्रसाद होगा। लौटते समय आप जो देंगे वह मैं प्रसाद मानकर ले लूँगा। राम, सीता, लक्ष्मण के बहुत कहने पर भी केवट ने कुछ नहीं लिया और भीगी आखों से प्रभु, सीता, लक्षण को विदा किया।

तुलसीदास की यह भक्ति भावना लोकसंग्रह (मंगल) की भावना से ओत-प्रोत है। वस्तुत: तुलसी द्वारा रचित 'रामचरितमानस' अपनी मार्मिकता, चरित्र की महानता, सांस्कृतिक गरिमा, कलात्मकता तथा प्रबन्धात्मकता के लिए प्रसिद्ध है। उपरोक्त पंक्तियों से तुलसी की भक्ति भावना स्पष्ट हो जाती है।



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 7 : तुलसीदास के गुरु का क्या नाम था?

.....

.....



1.5 प्रस्तुत अध्याय से हमने सीखा

- भक्तिकाल के रचानकारों में सूरदास महत्वपूर्ण हैं। सूरदास भक्त, कवि एवं कृष्ण के उपासक रहे हैं। पुष्टिमार्गी होने के कारण सूरदास की भक्ति प्रेमाभक्ति रही है। इसमें अपने इष्ट के प्रति पूर्ण समर्पण ही सब कुछ है। सूरदास ने अपने काव्य में उपास्य कृष्ण के प्रति प्रेम प्रकट करने के लिये उनके रूप, व्यक्तित्व, परिवेश, क्रिया-कलाप, लीला आदि का चित्रण सहज मानवीय रूप में किया है। श्री कृष्ण कथा को सूर ने श्री मद्भागवत् से अवश्य लिया; किन्तु उसका नकल कर निष्प्राण, नीरस, असहज नहीं होने दिया, बल्कि उसे अपने विचार, दर्शन, सम्वेदना का जामा पहनाकर एक नया रूप प्रदान किया।
- भ्रमरगीत के पद स्वतंत्र मुक्तक की अपेक्षा प्रबन्धात्मक प्रगीत की विशिष्टता के कारण अद्वितीय प्रतीत होते हैं। कृष्ण ने गोपियों की भक्ति की तन्मयता का दिग्दर्शन कराकर उनका ज्ञान गर्व दूर किया। इसके माध्यम से सूर ने लौकिक जीवन की रूपविभूति, लीला, दैनंदिन जीवन के क्रिया-कलाप, पारिवारिक-सामाजिक सम्बन्धों के राग-विराग आदि की महत्त स्थापित कर सगुण भक्ति का औचित्य प्रतिपादित किया है। भ्रमरगीत सूरदास की मौलिक उद्भावना है। यह उच्च कोटि का मर्मस्पर्शी काव्य है।
- हिन्दी साहित्य के सर्वश्रेष्ठ कवि, भक्त, विचारक तुलसी रहे हैं और *रामचरितमानस* जैसा

दूसरा लोकप्रिय और श्रेष्ठ महाकाव्य हिन्दी संसार में अब तक उपलब्ध नहीं है। इसके माध्यम से तुलसी ने रामकथा को जिस ऊँचाई पर पहुँचा दिया, फिर कोई दूसरा कवि उस ऊँचाई को न छू सका। एक कवि के रूप में तुलसी की श्रेष्ठता नि:संदिग्ध है। भक्तिकाल में किसी रचनाकार के कृतित्व में तत्कालीन यथार्थ का इतना विशुद्ध और पवित्र चित्र नहीं मिलता, जितना तुलसीदास के साहित्य में मिलता है।

- लोक कवि तुलसी ने तत्कालीन जनभाषा (अवधी, ब्रज) में कवितायें लिखीं। इन्होंने अपनी रचनाओं में जीवन के अनेक प्रसंगों का विस्तृत और सूक्ष्म अंकन किया है। निर्दय एवं हृदयहीन संसार में तुलसी के रामराज्य की परिकल्पना उत्पीड़ित जनसाधारण के लिए असंदिग्ध रूप से चिरकाम्य आश्रय स्थली बनती है।



1.6 विस्तृत जानकारी हेतु पढ़ें

1) डॉ. धीरेन्द्र वर्मा : *हिन्दी साहित्य कोश*
2) आचार्य राम चन्द्र शुक्ल : *हिन्दी साहित्य का इतिहास*
3) आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी : *हिन्दी साहित्य उद्‌भव एवं विकास*
4) आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी : *हिन्दी साहित्य की भूमिका*
5) डॉ. हरवंश लाल शर्मा (सं.) : *सूरदास*
6) डॉ. मैनेजर पाण्डेय : *भक्ति आन्दोलन और सूरदास का काव्य*
7) आचार्य रामचन्द्र शुक्ल : *सूरदास*
8) आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी : *सूरदास*
9) डॉ. उदयभानु सिंह (सं.) : *तुलसीदास*
10) डॉ. नगेन्द्र (सं) : *हिन्दी साहित्य का इतिहास*

1.7 स्वनिरीक्षण का पुनर्निरीक्षण

प्रश्नोत्तर 1 : वल्लभाचार्य।

प्रश्नोत्तर 2 : श्रीमद्‌भागवत का 46 वाँ एवं 47 वाँ अध्याय।

प्रश्नोत्तर 3 : अकबर से।

प्रश्नोत्तर 4 : परमब्रह्म, रसरूप श्री कृष्ण को महत्व देते हैं।

प्रश्नोत्तर 5 : रामचरितमानस के अयोध्याकाण्ड से।

प्रश्नोत्तर 6 : हुलसी एवं आत्माराम दुबे।

प्रश्नोत्तर 7 : नरहरि दास।



1.8 सम्भावित प्रश्न

प्रश्न 1 : सूर के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर एक लेख लिखिए।

प्रश्न 2 : कृष्ण भक्ति परम्परा में सूर का स्थान निर्धारित कीजिए।

प्रश्न 3 : भ्रमरगीत पर एक समीक्षात्मक लेख प्रस्तुत कीजिए।

प्रश्न 4 : सूर के दर्शन एवं साहित्य पर एक लेख लिखिए।

प्रश्न 5 : सूर की काव्यभाषा पर विचार कीजिए।

प्रश्न 6 : तुलसीदास के जीवन-चरित्र को स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न 7 : राम-केवट-सम्वाद को स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न 8 : भक्ति काल में तुलसीदास के महत्व की समीक्षा कीजिए।

प्रश्न 9 : व्याख्या कीजिए-

अ) ऊधै कोकिल कूजत कानन।
तुम हमको उपदेश करता हौ, भस्म लगावन आनन॥
औरो सिखी सखा संग लैलै, टेरत चढ़त पखानन।
बहुरौ आइ पपीहा कै मिस, मदन हनत निज बानन॥

आ) लरिकाई की प्रेम कहौअलि कैसे छूटत।
कहा कहौ ब्रजनाथ चरित अंतरगति लूटत॥
वह चितवनि वह चाल मनोहर, वह मुसकानि मंद-धुनि गावनि।
नटवर-भेष नन्द-नन्दन कौ-वह विनोद, वह वन है आवनि॥

(इ) माँगी नाव न केवटु आना। कहई तुम्हार मरमु मैं जाना।
चरण कमल रज कहुँ सबु कहई। मानुष करनि मूरि कछु अहई॥

(ई) बहुत-कीन्ह प्रभु लखन सियै नहि कछु केवटु लेई।
बिदा कीन्ह करुनायता भगति विमान बरु देई॥

*** ***** ***

इकाई 2 : सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' – 'तोड़ती पत्थर'

इकाई की रूपरेखा

2.1 उद्देश्य

2.2 प्रस्तावना

2.3 सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

2.3.1 जीवन दर्शन एवं साहित्य

2.3.2 'तोड़ती पत्थर' का पाठ

2.3.3 पाठ का सारांश

2.4 प्रस्तुत अध्याय से हमने सीखा

2.5 विस्तृत जानकारी हेतु पढ़ें

2.6 स्वनिरीक्षण का पुनर्निरीक्षण

2.7 सम्भावित प्रश्न

2.1 उद्देश्य

इस अध्याय से आप जान सकेंगे-

- कवि 'निराला' के विषय में आपको जानकारी मिलेगी
- 'निराला' की साहित्य-साधना के विषय में जान सकेंगे
- पाठ में निर्धारित कविता के पाठावलोकन की प्रक्रिया से गुजरते हुए कविता के बहुअर्थी, बहुआयामी रूप की जाँच-पड़ताल कर सकेंगे।

2.2 प्रस्तावना

पाठ्यक्रम के इस इकाई में आप हिन्दी साहित्य के आधुनिक युग के सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' जी दूसरे ऐसे महान कवि हैं जिनके जीवन दर्शन एवं साहित्य का मनन करेंगे। महाप्राण 'निराला' सचमुच निराला हैं और हैं बहुमुखी प्रतिभा से सम्पन्न साहित्यकार ये विशेषत: विद्रोह, पौरुष, औज एवं आत्म विशास कवि माने जाते हैं। निराला ने समाजिक कुरीतियों, रुढ़ियों तथा अन्ध विशासों पर प्रहार किया तो दूसरी ओर हिन्दी कविता को छन्द के बन्धन से भी मुक्ति करने का प्रयास किया। इनकी सहृदयता तथा मानवतावादी चेतना का हृदय-स्पर्शी रूप वह ''तोड़ती पत्थर'' कविता में दिखाई पड़ता है।

2.3 सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

हिन्दी संसार में सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' को उच्च स्थान प्राप्त है। छायावाद के चार स्तम्भों (निराला, प्रसाद, पंत, महादेवी) में से एक 'निराला' भी हैं। अत: 'निराला' का मूल सम्बन्ध छायावाद से है जो स्वतंत्रता आन्दोलन के चरम विकास का भी युग था। किन्तु निराला मात्र छायावाद युग में ही नहीं रहे थे, बल्कि इनका रचना–संसार छायावाद से लेकर पूर्व साठोत्तरी साहित्य तक विस्तृत रहा है। कहा जाता है कि इनकी पहली कविता, जो 'सरस्वती' पत्रिका में प्रकाशनार्थ भेजी गयी थी, को तत्कालीन सम्पादक महावीर प्रसाद द्विवेदी ने वापस कर दिया था, किन्तु यह कविता सन् 1916 में द्विवेदी के ही सम्पादन में 'जूही की कली' नाम से छपी। इसी कविता को कुछ साहित्येतिहासकारों ने छायावाद की पहली रचना मानी।

निराला ने अपनी रचनाओं के द्वारा हिन्दी भाषा को आगे ले जाने के लिए काफी चिन्तन किया था। यही चिन्तन इन्हें हिन्दी साहित्य जगत् में प्रयोक्ता के रूप में भी ख्याति दिला देता है। हम इन्हें साहित्य का 'ट्रेड सेटर' भी कह सकते हैं। निराला इसलिए 'ट्रेड सेटर' हैं कि उन्होंने साहित्यिक परम्पराओं से हटकर भाषा, काव्य–रूप आदि के क्षेत्रों में नवीनता लाई थी। कवि के ऐसे प्रयोगों के पीछे उनके युग के वैचारिक तथा सांस्कृतिक दबाव होते हैं। जो रचनाकार जितना सम्वेदनशील होता है, जितना अधिक प्रतिभाशाली और व्यापक जीवन दृष्टि सम्पन्न होता है, अपनी रचनाओं में प्रयोग करने की उसकी सामर्थ्य उतनी ही अधिक होती है।

आधुनिक हिन्दी कविता में प्रयोग करने की ऐसी सामर्थ्य हमें निराला में दिखायी पड़ती है। उन्होंने अपने युग के 'मुक्ति के स्वप्न' को काव्य में बंधी–बंधायी रूढ़ियों से मुक्त किया है। उन्होंने छन्द, काव्य–रूप, गीतिकाव्य, लम्बी कविता आदि में नये प्रयोग कर हिन्दी काव्य की दिशा को नया आयाम दिया है। वास्तव में निराला के काव्य में विषय और काव्यरूपों की जैसी विविधता, गहनता और नवीनता हैं वैसी हिन्दी के किसी दूसरे आधुनिक कवियों में नहीं हैं।



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 1 : छायावाद के चार स्तम्भ (चार मुख्य) कवियों के नाम लिखिए।

.....

2.3.1 जीवन दर्शन एवं साहित्य

सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' (1897-1962) का जन्म मेदिनीपुर के महिषादल में हुआ था। इनके पिता पं. रामसहाय त्रिपाठी उन्नाव में गढ़ाकोला के कान्यकुब्ज

ब्राह्मण थे। इनके पिता महिषादल रजबाड़े में कार्यरत थे, अत: इनकी शिक्षा–दीक्षा बंगाल में ही सम्पन्न हुई। संस्कृत, दर्शन, बंगला, उर्दू, फारसी, अरबी, अंग्रेजी और हिन्दी साहित्य का बड़े मनोयोग से इन्होंने अध्ययन किया था। इनकी पहली रचनाएँ बंगला में मिलती हैं; किन्तु पत्नी मनोरम के कहने पर वे हिन्दी में रचना रचने लगे। 'समन्वय' एवं 'मतवाला' पत्रिका का सम्पादन भी उन्होंने किया और 'मतवाला' के पर्यायवाची शब्द को 'निराला' अपना उपनाम रखा।

अनामिका (काव्य–1923), परिमल (काव्य–1930), अप्सरा (उपन्यास–1931), अलका (उपन्यास–1933), लिली कहानी–1933), प्रबन्धपद्म (निबन्ध–1934), प्रभावती (उपन्यास–1936), तुलसीदास (काव्य–1939), कुल्लीमॉट (जीवन–चरित–1939), प्रबन्ध प्रतिमा (निबन्ध–1940), सुकुल की बीबी (कहानी–1941), विल्लेसुर बकरिहा (उपन्यास–1942), अपरा (काव्य–1948), कुकुरमुत्ता (काव्य–1948), चतुरी चमार (कहानी–1946), बेला (काव्य–1946), अपरा (काव्य–1946), अर्चना (काव्य–1960), चोटी की पकड़ (कहानी–1960), काले कारनामे (उपन्यास–1960), सखी (कहानी–1961), चाबुल (निबन्ध–1962), रवीन्द्र नाथ कविता कानन (अनुवाद), समाज (नाटक), शकुंतला (नाटक) आदि इनकी रचनायें हैं।

''निराला को हिन्दी साहित्य का शिव कहा जाता है।'' निराला बहुमुखी प्रतिभा के धनी रचनाकार हैं। इन्होंने साहित्य की प्रत्येक विधा पर अपनी लेखनी चलायी। इतना ही नहीं, इन्होंने समाज के प्रत्येक व्यक्ति के चरित्र को अपने साहित्य में उकेरा। निराला ने छायावादी एवं रहस्यवादी दोनों तरह की रचनाएँ लिखी हैं। इनकी छायावादी रचनाओं में रहस्यवादी धारा की रचनाओं पर भारतीय दर्शन (अद्वैत दर्शन) का विशेष प्रभाव देखा जा सकता है। इनमें बुद्धिवाद तथा हृदयवाद का सुन्दर समन्वय देखा जा सकता है। इनकी मौलिकता में जीवात्मा एवं परमात्मा के सम्बन्ध में चिन्तन पाया जाता है। कुछ रचनाओं में करुणा के साथ सहानुभूति अत्यंत प्रबल हो उठी है। आर्य संस्कृति के इस भक्त कवि ने राष्ट्रीयता को ओज की भाषा में व्याख्यायित किया। निराला ने अपने समय की नब्ज को पहचाना एवं अतीत–वर्तमान–भविष्य को एक सीधी रेखा में खड़ा किया। एक अनुभूतिवादी कवि होने के नाते ये व्यक्तिगत एवं सामाजिक परिस्थितियों से बहुत प्रभावित थे। इसके फलस्वरूप इनकी कविताओं में व्यंग्योक्तियों के साथ–साथ निषेधात्मक जीवन की गहरी अभिव्यक्ति पायी जाती है। निराला भारतीय संस्कृति के द्रष्टा कवि भी रहे हैं। अत: गलित रूढ़ियों के विरोधी तथा संस्कृति के युगानुरूप पक्षों के उद्घाटक और पोषक रहे हैं। इनकी अध्यात्मिकता, सांस्कृतिक चेतना में बदल गई थी।

हिन्दी साहित्य के कवियों में निराला कई दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण रहे हैं।

इनका व्यक्तित्व अतिशय विद्रोही एवं क्रान्तिकारी तत्वों से निर्मित हुआ है। उसके कारण वे एक ओर जहां अनेक क्रान्तिकारी परिवर्तनों के स्रष्टा हुए, वहाँ दूसरी ओर परम्पराभ्यासी हिन्दी काव्य प्रेमियों द्वारा लम्बे अरसे तक सबसे अधिक गलत समझे गये। उनके विविध प्रयोगों-छन्द, भाषा, शैली, भाव सम्बन्धी नवीन दृष्टि ने नवीन काव्य को दिशा देने में सर्वाधिक महत्वपूर्ण योगदान दिया। किन्तु व्यक्तिगत जीवन में बचपन से लेकर मृत्यु पर्यन्त सर्वाधिक कष्टमय उन्होंने जीवन जीया। समकालीनों से विरोध, आर्थिक तंगी, प्रकाशकों द्वारा शोषण आदि के द्वारा इनके जीवन में विसंगतियाँ भरी रही हैं। इनके अधिकांश उपन्यास अपने अधिकांश आर्थिक तंगी से उबरने के लिये लिखे गये। किन्तु फिर भी इनके साहित्य का स्तर न केवल बने रहे बल्कि ऐसे में भी रचनागत प्रयोग तक चलते रहे। यह इनके सबल मानसिकता को दर्शाता है। इसीलिये इनके व्यक्तित्व की जैसी निर्बाध अभिव्यक्ति इनकी रचनाओं में हुई है वैसी अन्य छायावादी रचनाकारों में नहीं। इनमें पायी जानेवाली विविधता भाषागत भी है और भावगत भी, विचारगत भी, और शिल्पगत भी। हिन्दी काव्य क्षेत्र में निराला का पदार्पण मुक्त वृत्त के साथ होता है। वे इस वृत्त के प्रथम प्रयोगकर्ता हैं।

निराला की भाषा संस्कृतनिष्ठ खड़ी बोली है। इनके काव्य में ओज अधिक है। अलंकरण एवं छन्द की स्वाभाविकता इनके काव्य की एक विशेषता है। बिम्ब, प्रतीक के साथ संगीतात्मकता, ओज, नाटकीयता, अनुप्रास-योजना और नवीन उपमाओं का प्रयोग इनकी शैलीगत कुछ अन्य विशेषतायें हैं। इनकी शैली में श्रृंगार की माधुरिमा और वीर रस का ओज दोनों साथ-साथ पाये जाते हैं। इनकी भाषा में ओज एवं प्रसादगुण का आधिक्य है जिससे सरल भावों की व्यंजना हुई है। शब्दचित्र प्रस्तुत करने में निराला अद्वितीय हैं।

महाप्राण निराला को क्रान्ति, पौरुष, ओज एवं यथार्थ का कवि कहा जाता है। कबीर के बाद उन्होंने ही जीवन में सबसे अधिक विरोधों के गरल का पान किया, इसलिए उनमें कबीर के समान ही अखण्ड आत्म विश्वास, रूढ़ियों के प्रति आक्रामक भाव और क्रान्तिकारी रूप के दर्शन होते हैं। निराला का सम्पूर्ण जीवन सामाजिक कुरीतियों, अंधविश्वासों और मानवता को कुण्ठित करने वाली अर्गलओं पर प्रहार करते बीता है। उनके साहित्य का एक बहुत बड़ा अंश उनके इसी संघर्ष का दस्तावेज है।

निराला-काव्य में हमें नारी के विभिन्न रूप मिलते हैं, जो सर्वत्र कलुष से रहित हैं। इस प्रकार ''निराला'' का नारी के प्रति स्वच्छ, स्वस्थ एवं समादरणीया दृष्टि एवं पूज्य भाव हैं। कहना न होगा कि 'नारी एवं प्रकृति भावना ही ओज कवि को कोमलता प्रदान करती है।'

निराला विद्रोह और क्रांति के कवि हैं। उन्होंने भाव, भाषा, छंद सभी दिशाओं

में नवीनता का प्रवर्त्तन किया। कबीर जैसे अक्खड़ और फक्कड़ स्वभाव को लेकर वे साहित्य क्षेत्र में अवतरित हुए और छायावाद के एक महत्वपूर्ण आधार-स्तम्भ बने।

विकास के प्रथम चरण में निराला के काव्य की सर्वप्रमुख विशेषता उसकी स्वच्छन्दता रही है। भाव और शिल्प – दोनों दृष्टियों से उसमें परम्परा का उच्छेदन है। भावों की स्वच्छन्दता कभी क्रांति के आह्वान द्वारा प्रकट हुई है तो कभी भावों के उद्दाम वेग के द्वारा। शिल्पगत स्वच्छन्दता मुक्त छंद के रूप में प्रकट हुई है। निराला की काव्य-कला के विकास का यह प्रथम चरण सन् 1916 से 1927 तक है। निराला के काव्य-विकास का द्वितीय चरण 1927-28 से लेकर 1935-36 तक है, जिसमें अधिकांश गीतों का सृजन हुआ है।

विविध छंदों में उनके गीत रचे गए हैं। कुछ गीतों में कवि की सामाजिक चेतना भी मुखरित हुई है और कुछ में दार्शनिकता। संगीतात्मकता इन गीतों की महत्वपूर्ण विशेषता है। श्रृंगार के साथ आध्यात्मिकता का अपूर्व समन्वय उनके गीतों में है। निराला के काव्य-विकास का तीसरा चरण सन् 1935 से 1942 तक है, जिसमें एक ओर उन्होंने उदात्त भूमि पर पहुँचकर महाकाव्योचित गरिमा से युक्त रचनाएँ लिखी हैं और दूसरी ओर हास्य-व्यंग्य परक कविताएँ लिखी हैं। अपने काव्य-विकास के तृतीय चरण में निराला का कवि-व्यक्तित्व दो धाराओं में विभक्त हो गया है। एक ओर तो हास्य-व्यंग्य परक कविताएँ हैं और दूसरी ओर महाकाव्योचित शैली में 'तुलसीदास' और 'राम की शक्ति पूजा' जैसी काव्य वृत्तियां लिखी गई है। 'राम की शक्ति पूजा' में निराला की कल्पना नि:सीम व्योम में विचरण करती हुई महाकाव्योचित गरिमा से मंडित दिखाई देती है। चरित्र-चित्रण, भाव-चित्रण, रस-निरूपण एवं उदात्त भावना ने इस रचना को विशिष्ट महत्व प्रदान किया है। भाषा प्रौढ़ और परिमार्जित है। 'तुलसीदास' सौ छंदों का प्रबंध काव्य है। इसका प्रणयन कवि ने तुलसी के जीवन में घटित पत्नी की फटकार पर गृहत्याग की घटना के आधार पर किया है। कथावस्तु संक्षिप्त है, परन्तु उस पर भावों का अत्यंत मनोरम प्रासाद निर्मित है। बाह्य घटनाओं के विस्तार में अधिक रुचि न लेकर उन्होंने तुलसी के मन के आवर्त-विवर्त में प्रविष्ट होने की चेष्टा की है। इस कृति की भाषा ओज और प्रवाहमय है। वह संस्कृति बहुल एवं क्लिष्ट भी हो गई है। उसमें प्रकृति-वर्णन एवं रूपकों की भरमार है। निराला के काव्य-विकास का चतुर्थ चरण सन् 1942 से 1950 तक का है। 'कुकुरमुत्ता', 'बेला', 'नए पत्ते' आदि इस चरण की रचनाएं हैं। इस काल में निराला की प्रयोगवादी प्रवृत्ति विशेषतया परिलक्षित होती है। निराला ने पराधीन भारत को अतीत के गौरव गान सुनाए थे। परन्तु जब उन्होंने देखा कि स्वतंत्रता के बाद जनता की दशा बद से बदतर होती जा रही है और बेकारी, भुखमरी, गरीबी और अभाव की मार से साधारण जनता पिस रही है, तो कवि की दृष्टि जीवन की विभीषिकाओं के चित्रण की ओर

गई। 'कुकुरमुत्ता' उनकी इसी सामाजिक चेतना, प्रगतिशील विचारधारा और व्यंग्यात्मक प्रवृत्ति का परिणाम है। यथार्थ का चित्रण करने के लिए कवि ने तीखे व्यंग्य और हास्य का सहारा लिया है। सन् 1950 से 1961 तक निराला के काव्य-विकास का पंचम और अंतिम चरण है। 'अर्चना' (1950), 'आराधना' (1953), और 'गीतगुंज' (1953) इस चरण के ग्रंथ हैं। इनमें आध्यात्मिक, श्रृंगारिक और प्रकृतिपरक गीत संगृहीत हैं। जीवन-संघर्ष से थके हुए कवि ईश्वर से बार-बार भवसागर पार करने की प्रार्थना करते हैं। निराला की मृत्यु के उपरान्त उनका 'सांध्य काकली' नामक अंतिम कविता-संग्रह प्रकाशित हुआ, जिसमें लोक संगीत की मादकता और भावना की सरसता विद्यमान है।

निष्कर्ष रूप में निराला ने हिन्दी साहित्य के लिए निम्नलिखित देन दी है –

उदात्त रचनाएँ, इसमें 'राम की शक्ति पूजा' और 'तुलसीदास' हैं।

पौरुषमय ऊर्जस्वित स्वर, इसमें 'बादल-राग' और 'जागो फिर एक बार' जैसी ओजस्वी कविताएँ हैं।

मानवतावादी चेतना का स्फूरण, जिसमें 'भिक्षुक', 'विधवा' और 'वह तोड़ती पत्थर' जैसी कविताएं हैं।

व्यंग्यपरक दृष्टि, जो 'कुकुरमुत्ता', 'नए पत्ते' आदि में दिखाई देती है।

नाद-सौंदर्य और संगीतात्मकता निराला के गीतों की विशेषता है।

वातावरण-चित्रण, सौंदर्य का प्रभावशाली परन्तु तटस्थ अंकन निराला के गीतों में विद्यमान है।

मुक्त छंद निराला की अंतिम महत्वपूर्ण देन है।



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 2 : 'निराला' अपनी रचनाओं में किस प्रकार की भाषा का प्रयोग करते हैं?

.....

2.3.2 'वह तोड़ती पत्थर' का पाठ

वह तोड़ती पत्थर,
देखा उसे मैंने इलाहाबाद के पथ पर --
वह तोड़ती पत्थर।
नहीं छायादार
पेड़ वह जिसके तले बैठी हुई स्वीकार;
नत-नयन, प्रिय-कर्म-रत मन,

गुरु हथौड़ा हाथ,
करती बार-बार प्रहार -
सामने तरु-मालिका अट्टालिका, प्राकार।
चढ़ रही थी धूप;
गर्मियों के दिन,
दिवा का तमतमाता रूप,
उठी झुलसाती हुई लू,
रुई ज्यों जलती हुई भू,
गर्द चिनगीं छा गई,
प्राय: हुई दुपहर --
वह तोड़ती पत्थर।
देखते देखा, मुझे तो एक बार
उस भवन की ओर देखा, छिन्न-तार;
देख कर कोई नहीं
देखा मुझे उस दृष्टि से,
जो मार खा रोई नहीं;
सजा सहज सितार,
सुनी मैंने वह नहीं जो थी सुनी झंकार।
एक क्षण के बाद वह काँपी सुधर,
ढुलक माथे से गिरे सीकर,
लीन होते कर्म में फिर ज्यों कहा --
'मैं तोड़ती पत्थर।''

2.3.3 पाठ का साराश

प्रस्तुत कविता में निराला एक मजदूर स्त्री (मजदूरनी) को इलाहाबाद के रास्ते पर पत्थर तोड़ते हुए देखते हैं।

वह मजदूर स्त्री पत्थर तोड़ रही है, उसे छायादार वृक्ष के नीचे बैठना स्वीकार नहीं। वह आँखें झुकाये, अपने काम में लीन है, उसके हाथ में भारी हथौरा है, जिससे वह पत्थर पर बार-बार प्रहार करती है और उसके सामने बड़े पेड़, बड़े-बड़े घर हैं। गर्मियों का दिन है, तीखी धूप चढ़ रही है, लू का प्रकोप भी इतना तेज है कि जैसे पृथ्वी भी रूई की तरह जल रही हो। दोपहर का समय है, किन्तु कर्मरत मजदूरिन अब भी पत्थर तोड़ रही है।

अचानक ही उसने कवि को देखा और फिर एक बार कातर दृष्टि से सामने के घर को देखा, उसने कवि को ऐसे देखा जैसे उसमें जीवन भरा है, उसका मन रोया नहीं, सितारों के तार से निकलने वाली ध्वनि जैसी उसकी झंकार थी, उन्होंने वह सब सुना जो कभी सुना नहीं था। एक क्षण बाद वह काँपी, सम्हली, उसके माथे से पसीने की बूंदें टपकीं और पुन: वह अपने काम में लीन हो गयी जैसे वह कह रही हो यही मेरा देश है, यही मेरा संसार है। अत: मैं अब तोड़ती हूँ पत्थर।

निराला की 'अनामिका' एवं 'अणिमा' दोनों ही काव्य संग्रह बहुचर्चित रहे हैं। प्रथम कविता में कवि की प्रगतिशीलता स्पष्ट झलकती है। इस कविता में कवि ने छायावादी धरातल से हटकर एक नयी चिन्तन पद्धति को अपनाया है। शोषितों की समस्या भयानक रूप में है। गरीब, मजदूर और किसान, जिनके बिना हम चल नहीं सकते, का पूरा जीवन तिरस्कार से गुजरता है। एक नारी, जो कोमलता की मूर्ति है, उनकी दशा भी कीड़े-मकोड़े जैसी है। निराला जनवादी कवि रहे हैं। सामाजिक एवं मानवीय मूल्यों को इन्होंने नये सिरे से व्याख्यायित किया। उनका मानना था कि शोषित, दलित एवं साधारण जन के विकास के बिना समाज और राष्ट्र का विकास संभव नहीं है ; किन्तु स्वतंत्र भारत में भी जब उन्होंने सत्ता का हस्तांतरण शोषकों, पूंजीपतियों एवं जमीन्दारों के हाथों में देखा तो उन्होंने अपनी यथार्थवादी दृष्टि से उस नये सत्य को सामने रखा। प्रस्तुत कविता भी इसी विचार से लिखी गयी है।

स्वनिरीक्षण



प्रश्न 3 : निराला की उस रचना का नाम बताइये, जो पहली बार 'सरस्वती' पत्रिका में महावीर प्रसाद द्विवेदी ने प्रकाशित करने से इनकार कर दिया था।

.....

.....



2.4 प्रस्तुत अध्याय से हमने सीखा

- प्रस्तुत अध्याय से हमने जाना कि किस प्रकार से निराला छायावादी रचनाकार हैं। इन्होंने आधुनिक हिन्दी साहित्य को एक नया सम्बल प्रदान किया। इसमें चेतना का संचार किया,

एक नयी दिशा दी। इनमें छायावादी संस्कार के होने के बावजूद भी नये तेवर के साथ उसे प्रस्तुत किया है।

- इनके काव्य में करुणा, मानवता, आदि सब कुछ पाई जाती हैं। निराला के काव्यों में विचार एवं भावना का अद्‌भुत समन्वय है।



2.5 विस्तृत जानकारी हेतु पढ़े

1) डॉ. धीरेन्द्र वर्मा : *हिन्दी साहित्य कोष*
2) आचार्य रामचन्द्र शुक्ल : *हिन्दी साहित्य का इतिहास*
3) आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी : *हिन्दी साहित्य: उद्‌भव और विकास*
4) आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी : *हिन्दी साहित्य की भूमिका*
5) डॉ. बच्चन सिंह : *हिन्दी साहित्य का दूसरा इहास*
6) डॉ. बच्चन सिंह : *क्रान्तिकारी कवि निराला*
7) डॉ. रामविलास शर्मा : *निराला की साहित्य-साधना*
8) डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी : *प्रसाद, 'निराला', अज्ञेय*
9) डॉ. नामवर सिंह : *छायावाद*
10) डॉ. नगेन्द्र (सं.) : *हिन्दी साहित्य का इतिहास*
12) डॉ. रामविलास शमा : *निराला की साहित्य साधना*
13) डॉ. नामवर सिंह : *छायावाद*
14) डॉ. नामवर सिंह : *वाद-विवाद सम्वाद*
15) डॉ. केदारनाथ सिंह : *आधुनिक हिन्दी कविता में बिम्ब विधान*

2.6 स्वनिरीक्षण का पुनर्निरीक्षण

प्रश्नोत्तर 1 : 'निराला' 'प्रसाद', 'पंत', महादेवी

प्रश्नोत्तर 2 : संस्कृत निष्ठ शुद्ध खड़ी बोली का

प्रश्नोत्तर 3 : जूही की कली



2.7 सम्भावित प्रश्न

प्रश्न 1 : निराला की जीवनी को संक्षेप में प्रस्तुत कीजिए।

प्रश्न 2 : निराला का छायावादी साहित्य में क्या स्थान है ?

प्रश्न 3 : निराला का वैचारिक आधार क्या है ?

प्रश्न 4 : सप्रसंग व्याखय कीजिए–

(अ) एिक क्षण के बाद वह कॉपी सुधर
ढुलक माथे से गिरे सीकर
लीन होते कर्म में फिर ज्यों कहा–
मैं तोड़ती पत्थर।

(आ) छल के बल के पंकिल भौतिक रूप अदर्शित
हुए तुम्हीं से, हुई तुम्ही से ज्योति प्रदर्शित।

*** ***** ***

इकाई 3 : दिनकर – किसको नमन करूँ मैं

अध्याय की रूपरेखा

3.1 उद्देश्य

3.2 प्रस्तावना

3.3 दिनकर

- 3.3.1 जीवन दर्शन एवं साहित्य
- 3.3.2 किसको नमन करूँ मैं
- 3.3.2 पाठ का सारांश

3.4 प्रस्तुत अध्याय से हमने सीखा

3.5 विस्तृत जानकारी हेतु पढ़ें

3.6 स्वनिरीक्षण का पुनर्निरीक्षण

3.7 सम्भावित प्रश्न

3.1 उद्देश्य

प्रस्तुत अध्याय में आप सीखेंगे –

- राष्ट्रकवि रामधारी सिंह 'दिनकर' के विषय में
- आधुनिक साहित्यिक–धारा में कवि का स्थान
- तात्कालीन साहित्य एवं समाज की ऐतिहासिक, राजनैतिक आर्थिक चिन्ताधारा एवं पृष्ठभूमि
- कवि की साहित्यिक मान्यातायें राष्ट्रीयता एवं राष्ट्र के प्रति समर्पण की भावनां।

3.2 प्रस्तावना

पहले हमने भक्तिकालीन दो महान कवियों की कविताओं का अध्ययन किया हैं। इसके साथ ही आधुनिक युग के श्रेष्ठ कवि 'निरला' जी की कविता का हृदयंगम किया। अब उसी क्रम मे ओज एवं जोश के महाकवि 'दिनकर' जी की कविता का रसपान करेगे। इस इकाई मे 'दिनकर' के जीवन दर्शन एवं साहित्य, आधुनिक साहित्यिक–धारा में कवि का स्थान, कवि की साहित्यिक मान्याताएं राष्ट्रीयता एवं राष्ट्र के प्रति समर्पण की भावनांएं भी अन्तर्भुक्त हैं।

3.3 दिनकर

राष्ट्रकवि रामधारी सिंह 'दिनकर' अपने समय के सूर्य हैं। इन्होंने अपनी रचनाओं के

माध्यम से अपने समय के साहित्य को विशेष रूप से आलोकित किया। समय और समाज ने अपना असर दिनकर पर दिखलाया, किन्तु साथ ही दिनकर ने भी समय और समाज पर अपना असर छोड़ा। दिनकर स्वयं मानते हैं कि इनकी भावनाओं (जो 'पथिक', 'छात्र सहोदर' और 'भारत भारती' में हैं) का मूल बीज सन् 1921 का असहयोग आन्दोलन में बोया गया है। देश प्रेम, राष्ट्रीयता, मानवतावाद आदि प्रचुर मात्रा में इनके साहित्य में हैं। इनकी राष्ट्रीय भावना अतीत और वर्तमान की घटनाओं-प्रसंगों पर आधारित है। अतीत को ऐश्वर्यपूर्ण, सुखद, आनन्दपूर्ण मानने वाला यह कवि वर्तमान को संघर्ष एवं कोलाहल से पूर्ण भरा मानता है। शोषित समाज के प्रति करुणा, सहानुभूति तथा उच्च वर्ग के प्रति आक्रोश की भावना भी इनके द्वारा अभिव्यक्त हुई है। अब तक के सफलतम कवियों में इन्हें उच्च स्थान प्राप्त है।

3.3.1 जीवन दर्शन एवं साहित्य

दिनकर का जन्म बेगुसराय के सिमरिया नामक गाँव में हुआ। वे रवि सिंह एवं मनरूप देवी के पुत्र थे। इनके अग्रज वसन्त सिंह एवं अनुज सत्यनारायण सिंह थे। इनकी पत्नी श्यामवती देवी थी। इनके तीन वर्ष की अवस्था में इनके पिता का देहावसान हुआ। तब से मृत्युपर्यन्त आर्थिक तंगी बनी रही। इनकी मृत्यु मद्रास में हुई।

सन् 1915 में इनकी पहली फुटकर रचना 'प्रकाश' पत्रिका (बेगुसराय) में छपी थी। सन् 1924 में एक लम्बी कविता 'छात्र सहोदर' (जबलपुर-मध्यप्रदेश) में छपी। इसी वर्ष 'प्रणभंग' लघु खण्डकाव्य छपा। सन् 1930 में 'बारदोला विजय' लघु काव्य छपा। रामवृक्ष बेणीपुरी के सम्पादकत्व में छपने वाली पत्रिका 'युवक' तथा 'जनता' के अतिरिक्त 'सरस्वती' आदि पत्रिकाओं में इनकी रचनायें छपीं। राष्ट्रीय आन्दोलन के दौरान 'अमिताभ' एवं अन्य नामों से भी रचना छपी। इनकी अन्य रचनायें इस प्रकार हैं- रेणुका (1935), हुँकार (1938), रसवन्ती (1939, द्वन्द्व गीत (1940), सामधेनी (1946), कुरुक्षेत्र (1946), बापू (1949), इतिहास के आँसू (1952), धूप और धुआँ (1953), रश्मिरथी (1953), दिल्ली (1954), नीम के पत्ते (1954), नीलकुसुम (1954), चक्रवाल (1956), कविश्री (1956), नये सुभाषित (1957), उर्वशी (1960), परशुराम की प्रतीक्षा (1963), कोयला और कवित्व (1964), मृतितिलक (1964), हार को हरिनम (1970), संचयिता (1973), धूप छाँव (1946), चितौर का साका (1949), मिर्च का मजा (1951), सूरजक, व्याह (1955), भारत की सांस्कृतिक कहानी (1955), सीपी और शंख (1957), आत्मा की आँखें (1964), मिट्टी की ओर (1946), काव्य की भूमिका (1958), पंत प्रसाद और मैथिलीशरण गुप्त (1958), शुद्ध कविता की खोज (1966), साहित्यमुखी (1968), अर्धनन्दीश्वर (1952), रेत्ती के फूल (1954), बेजुवान (1958), वट-

पीपल (1961), राष्ट्रभाषा आन्दोलन और गाँधी जी (1968), चेतना के शिखर (1973), आधुनिक बोध (1923), विवाह की मुसीबतें (1974), हमारी सांस्कृतिक एकता (1954), राष्ट्रीयता और राष्ट्रीय एकता (1955), संस्कृति के चार अध्याय (1956), धर्म, नैतिकता और विज्ञान (1959), उजली आग (1956), लोकदेव नेहरू (1965), देश-विदेश (1957), मेरी यात्रायें (1968) दिनकर की डायरी (1975) आदि अनेक रचनायें इनके विस्तृत रचना संसार को दर्शाता है।

साहित्य जगत में दिनकर का प्रादुर्भाव एक आकस्मिक घटना है। इनका काल ऐतिहासिक महत्व का काल हैं। विरासत से धरोहर के रूप में उन्हें सनातन भारत का गौरव गान प्राप्त हुआ था। वे एक सफल युगद्रष्टा, युगस्रष्टा, युगधर्म के पालनकर्ता हैं। साहित्य के आकाश में दिनकर वस्तुत: एक ऐसा दिनकर है जो तेजस्वी नक्षत्र-सा दिखता है। इनका युगबोध सत्य का अन्वेषण करता है। इनकी सृजन प्रक्रिया में भारत मृणमयी एवं चिन्मयी रूप में उभरी है। वे अतीत के उद्घोषक, वर्तमान के स्रष्टा और भविष्य के द्रष्टा कवि रहे हैं। इन तीनों के वे नियामक हैं। वे नियति को वश में रखकर आगे बढ़ते हैं।

दिनकर अपना भविष्य साहित्य को मानते थे। अपने सम्बन्ध में कभी इस बात से इन्कार नहीं किया कि निराला की कविताओं से अधिक समीपता पंत की कविताओं के साथ रही और प्रसाद से अधिक मैथिलीशरण गुप्त के निकट अधिक रहे हैं। दिनकर ने 'आप्पधर्म' का निर्वाह भी खूब किया है। पंडित बनारसी दास चतुर्वेदी की उक्ति ठीक है कि ''यदि दिनकर अफ्रीका में पैदा होते तो भी मैं उनसे मिलने जाता।'' इसी बात से अंदाजा लगाया जा सकता है कि दिनकर किस स्तर के रचनाकार हैं। भारतेन्दु युग में राष्ट्रीयता और मानवता के जो नवीन बीज बोये गये थे वे द्विवेदी युगीन एवं छायावाद के समानान्तर चलने वाले राष्ट्रीय चेतना की रचनाओं में पल्लवित-पुष्पित रूप में पाये जाते हैं। दिनकर के विषय में बच्चन लिखा है- ''प्रकृति-प्रेमी पंत की भाषा विशिष्टता सम्पन्न होकर भी संघर्ष की भाषा नहीं थी, और न ही रहस्यवादी महादेवी की भाषा। राष्ट्रवादियों के स्वर की प्रखरता सतही थी। गहराई आगे चलकर पहले माखनलाल चतुर्वेदी ने और बाद में दिनकर ने दी।''

इसमें कोई सन्देह नहीं कि हिन्दी भाषी प्रदेशों के पूर्वी छोर पर बिहार अवस्थित हैऔर यहाँ से उदित होने वाला दिनकर न मात्र हिन्दी भाषी प्रदेशों, बल्कि भारतवर्ष एवं भारतवर्ष के बाहर भी अपनी रश्मियों से आलोकित करता रहा है। रामधारी सिंह को दिनकर, युगचारण, युगचेता, राष्ट्रकवि आदि उपनामों से विभूषित किया गया। दिनकर न केवल अपने युग के, बल्कि युग-युगों तक सार्वकालिक, सार्वभौमिक रचनाकार के रूप में समादृत रहेंगे।

ओज और प्रसाद गुणों से सम्पन्न महाकवि की यह विशेषता है कि उनके

काव्यों में युग-धर्म की तत्कालिकता होते हुए भी, प्रेषणीयता की स्वस्थता और साधारणीकरण की क्षमता भी है। इसी कारण वे शास्वत सत्य के कवि बन गए हैं। इतिहास के विद्यार्थी होने के कारण भारतीय सभ्यता-संस्कृति का गहन अध्ययन इन्होंने किया। इस चिन्तन का उदात्त एवं ओजस्वी प्रतिनिधित्व स्वयं दिनकर ने किया भी। कवि की समग्र काव्य-यात्रा में जिन विविध भाव एवं विचारभूमियों का चित्रण है ये इनके क्रांतिदर्शी व्यक्तित्व की विलक्षण लोच, व्यापकता, वैभव और गहनता की परिचायक हैं। मनुष्य की नैसर्गिक वृत्ति होने के कारण वह व्यष्टिगत होकर भी समष्टि को समर्पित हुई हैं। 'रसवन्ती', 'उर्वशी' ऐसी ही कृतियाँ हैं। कवि की प्रारम्भिक रूमानी प्रेम भावनायें 'रेणुका', 'रसवन्ती' से प्रवाहित होकर 'उर्वशी' में प्रौढ़ रूप में उभरी हैं। वस्तुत: बर्फ के नीचे प्रवाहित होनेवाले तरल जल की भाँति दिनकर के ओज के पीछे कोमल एवं सरल हृदय भी है। इसलिये प्रेम एवं श्रृंगार की सरस अनुभूतियों का बीज 'रसवन्ती' में अंकुरित होकर पल्लवित हुआ है और वहीं अपने चरम उत्कर्ष के साथ 'उर्वशी' में पुष्पित एवं फलित हुआ है। 'रसवन्ती' में यौवन है, सौन्दर्य है, साथ ही मानवीय संवेगों को आंदोलित करने वाले विरह गीत भी। प्रेम और श्रृंगार की लौकिक अभिव्यक्ति को इन्होंने आध्यात्मिक स्वरूप प्रदान किया है। किन्तु विदित हो कि ओज इनकी श्रृंगार-भावना पर कहीं-कहीं भारी पड़ा है। इनका ओज राष्ट्रीय भावना से युक्त होने के कारण स्तुत्य बन गया है एवं इसका पर्यवसान गांधीवाद में हुआ।

उनके 'रेणुका', 'हुँकार' नामक रचनाओं में मानसिक विक्षोभ ही मूल रूप से उभरा है। विदेशी शासकों की निरंकुश एवं दमन नीति की प्रतिक्रिया स्वरूप उनका दृष्टिकोण निराशावादी न बनकर अमर्ष का उभार लिये राष्ट्रीय आन्दोलन के रूप में प्रत्यक्ष होता है। 'सामधेनी' यदि राष्ट्रीयता की परिधि के बाहर होकर अन्तर्राष्ट्रीय परिवेश में 'बसुधैव कुटुम्बकम्' की उदार भावना को स्पर्श करती हैं। 'नील कुसुम' में कवि प्रयोगशील दिखता है। दिनकर की एक और विशेषता रही है कि परिवर्तित राष्ट्रीय चेतना के अनुरूप अपने को वे ढालते गए हैं, 'परशुराम की प्रतीक्षा' इसी का परिणाम है।

जुआरी की सी हिम्मत, क्रोध-भावुकता के मिश्रण, अक्खड़ देहाती, परिहास-रसिक, हाजिर-जवाब और ईमानदार दिनकर का समस्त जीवन संघर्ष से भरा पड़ा है। संघर्ष उनके जीवन का मुख्य अंग है। किन्तु इन्हीं संघर्षों ने दिनकर को प्रसिद्धि भी दिलायी। संघर्ष से वे टूटे नहीं, विश्रृंखल नहीं हुए, बल्कि उनकी भीतरी सात्विकता एवं कल्याण की भावना को उन्हें ठेस नहीं पहुँची। सच यह है कि इन संघर्षों ने उन्हें बल-सम्बल ही प्रदान किया। इससे वे किसी हद तक कठोर अवश्य हुए। दिनकर जीवनपर्यन्त परिवार को गरीबी के मुँह से निकालने के लिये नौकरी एवं साहित्य के लिये दिलो-जान से लगे रहे। इन पर आरोप लगते रहे कि असहयोग आंदोलन में

इन्होंने सरकारी नौकरी नहीं छोड़ी। किन्तु सच यह था कि भले ही इन्होंने सरकारी नौकरी नहीं छोड़ी हो, लेकिन भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के लक्ष्य पर इनकी रचनायें आग में घी का काम करती रहीं। सन् 1940 में दुविधाग्रस्त गांधी के लिये 'जनता' नामक साप्ताहिक पत्रिका में अमिताभ के नाम से ''ओ द्विधाग्रस्त सार्दुल बोल'' शीर्षक से उन्होंने कविता लिखी। सन् 1942 का आंदोलन जब दबने लगा था उस समय इन्होंने 'आग की भीख' नामक राष्ट्रीय आंदोलन छेड़े जाने के पक्ष में विद्रोहात्मक कविता लिखी। वे कहते हैं– 'बेचैन हैं हवायें हर ओर बेकली है/ कोई नहीं बताता किश्ती किधर चली है/...तम बेधिनी किरण का संधान माँगता हूँ। ध्रुव की कठिन घड़ी में पहचान माँगता हूँ/...पंचास्य–नाद भीषण विकराल मांगता हूँ/जड़ता–विनाश को फिर भूचाल माँगता हूँ/...उन्माद बेकली का उत्थान माँगता हूँ। विस्फोट माँगता हूँ तूफान माँगता हूँ।' इसलिये यह कहना कि वे असहयोग आंदोलन से विलग रहे, ऐसा नहीं है। दिनकर एक ऐसे रचनाकार भी हैं जिन्हें 'बच्चन' जैसी सस्ती और बिकाऊ लोकप्रियता नहीं चाहिए थी, बल्कि समाज में रहकर लोकहितकारी रचनाओं के माध्यम से जन–समाज को समृद्धि, स्वतंत्रता आदि दिलाने के लिये काम कर अमर हो जाना चाहते थे। इन्हें जीवनकाल में कुछ सम्मान तो मिला, लेकिन आलोचक इनकी आँख बन्द होते ही इन्हें 'आउट डेटेड' मानने लगे, जो एक प्रकार से एक सशक्त राष्ट्रवादी कवि के साथ ज्यादती कही जायेगी।

'मर्त्य मानव की विजय का तूर्य हूँ मैं/उर्वशी! अपने समय का सूर्य हूँ मैं/या न देखे विश्व पर मुझको घृणा से, मनुज हूँ सृष्टि का श्रृंगार हूँ मैं/सुनूँ क्या सिन्धु! मैं गर्जन तुम्हारा स्वयं युग–धर्ण का हुँकार हूँ मैं'– कहने वाला कवि कहता है–'इच्छा है, मैं बार–बार कवि का जीवन लेकर आऊँ/अपनी प्रतिभा के प्रदीप से जग की अमा मिटा जाऊँ।' इनका मानना था कि दासत्व जहाँ है, वहीं स्तब्ध जीवन है। इसलिये वे कहते हैं– 'कुछ नयी आग, नूतन ज्वाला की सृष्टि करो/शीतल प्रसाद से जो ऊँघ रहे हैं जो, उनकी /मखमली सेज पर चिनगारी की वृष्टि करो।'



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 1 : प्रणभंग किस वर्ष की रचना है ?

.....

प्रश्न 2 : दिनकर किस शब्द का पर्यायवाची है।

.....

प्रश्न 3 : दिनकर के किस काव्य को कामाध्यात्म का काव्य कहा गया है।

.....

3.3.2 किसको नमन करूँ मैं

तुझको या तेरे नदीश, गिरि, वन को नमन करूँ मैं?
मेरे प्यारे देश! देह या मन को नमन करूँ मैं?
किसको नमन करूँ मैं भारत! किसको नमन करूँ मैं?
भू के मानचित्र पर अंकित त्रिभुज, यही क्या तू है?
नर के नभश्चरण की दृढ़ कल्पना नहीं क्या तू है?
भेदों का ज्ञाता, निगूढ़ताओं का चिर ज्ञानी है,
मेरे प्यारे देश! नहीं तू पत्थर है, पानी है!
जड़ताओं में छिपे किसी चेतन को नमन करूँ मैं?
किसको नमन करूँ मैं भारत! किसको नमन करूँ मैं?
तू वह, नर जिसे बहुत ऊँचा चढ़कर पाया था,
तू वह, जो संदेश भूमि को अम्बर से आया था,
तू वह, जिसका ध्यान आज भी मन सुरभित करता है,
थकी हुई आत्मा में उड़ने की उमंग भरता है।
गन्ध-निकेतन इस अदृश्य उपवन को नमन करूँ मैं?
किसको नमन करूँ मैं भारत! किसको नमन करूँ मैं?
वहाँ नहीं तू जहाँ जनों से ही मनुजों को भय है,
कबको सबसे त्रास सदा सबपर सबका संशय है,
जहाँ स्नेह के सहज स्रोत से हटे हुए जनगण हैं,
झंडों या नारों के नीचे बँटे हुए जनगण हैं।
कैसे इस कुत्सित, विभक्त जीवन को नमन करूँ मैं?
किसको नमन करूँ मैं भारत! किसको नमन करूँ मैं?
तू तो है वह लोक जहाँ उन्मुक्त मनुज का मन है,
समरसता को लिये प्रवाहित शीत-स्निग्ध जीवन है,
जहाँ पहुँच मानते नहीं नर-नारी दिग्बन्धन को,
आमरूप देखते प्रेम में भरकर निखिल भुवन को।
कहाँ खोज इस रुचिर स्वप्न पावन को नमन करूँ मैं?
किसको नमन करूँ मैं भारत! किसको नमन करूँ मैं?
भारत नहीं स्थान का वाचक, गुणविशेष नर का है,
एक देश का नहीं, शील यह भूमंडल-भर का है,
जहाँ कहीं एकता अखंडित, जहाँ प्रेम का स्वर है,

देश-देश में वहाँ खड़ा भारत जीवित भास्वर है।
निखिल विश्व को, जन्मभूमि-वन्दन को नमन करूँ मैं?
किसको नमन करूँ मैं भारत! किसको नमन करूँ मैं?
खंडित है यह मही शैल से, सरिता से, सागर से,
पर, जब भी दो हाथ निकल मिलते आ द्वीपान्तर से,
तब खाई की पाट शून्य में महा मोद मचता है,
दो द्वीपों के बीच सेतु यह भारत ही रचता है।
मंगलमय इस महासेतु-बन्धन को नमन करूँ मैं?
किसको नमन करूँ मैं भारत! किसको नमन करूँ मैं?
दो हृदयों के तार जहाँ भी जो जन जोड़ रहे हैं,
मित्र-भाव की ओर विश्व की गति को मोड़ रहे हैं,
घोल रहे हैं जो जीवन-सरिता में प्रेम-रसायन,
खोल रहे हैं देश-देश के बीच मुँदे वातायन।
आत्मबन्धु कहकर ऐसे जन-जन को नमन करूँ मैं?
किसको नमन करूँ मैं भारत! किसको नमन करूँ मैं?
उठे जहाँ भी घोष शान्ति का, भारत! स्वर तेरा है,
धर्मदीप हो जिसके भी कर में वह नर तेरा है,
तेरा है वह वीर, सत्य पर जो अड़ने जाता है,
किसी न्याय के लिए प्राण अर्पित करने जाता है।
मानवता के इस ललाट-चन्दन को नमन करूँ मैं?
किसको नमन करूँ मैं भारत! किसको नमन करूँ मैं?

3.3.2 पाठ का सारांश

दिनकर राष्ट्रीयता की भावना से ओत-प्रोत कवि हैं। ये स्वयं मानते हैं कि कवि होने की सामर्थ्य मुझमें भारतवर्ष का ध्यान करने से जाग्रत हुई। यह शक्ति मुझमें भारतीय जनता की आकुलता को आत्मसात करने से स्फुटित हुई। वस्तुत: दिनकर की काव्य-चेतना, अभाव से भाव, निषेध से स्वीकृति, निवृत्ति से प्रवृत्ति, दिवास्वप्नों से चिन्तन और कल्पना से कर्म की ओर अग्रसर हुई। प्रस्तुत कविता राष्ट्रीयता, राष्ट्र का स्वरूप और मानवता के विशेष रूप लक्षित हैं।

प्रस्तुत कविता में कवि ने राष्ट्र, राष्ट्र की परिकल्पना, राष्ट्रीयता क्या है या क्या होनी चाहिए जैसे प्रश्न उपस्थित किये हैं। कवि पूछते हैं कि हे! भारत किसे नमन किया जाए; किसके समक्ष नतमस्तक हुआ जाए।

तुम्हें या नदी–नाले, पहाड़, जंगल को नमन करूँ, हे मेरे प्यारे देश, देह या मन को नमन करूँ, तुम्ही बताओ किसे नमन करूँ मैं।

धरती पर त्रिभुजाकार तुम्हारा जो चित्र अंकित है, क्या वही हो तुम। मानव के उर्द्धगामी दृढ़ कल्पनाओं में क्या नहीं हो तुम, वेदों का ज्ञाता, निगुढ़ता का चिर ज्ञानी हो तुम। ओ मेरे प्यारे देश, तुम्हीं बताओ भारत, किसे नमन करूँ।

तुम वह नर हो, जिसे ऊर चढ़कर पाया गया है, तुम वह हो जो अम्बर का संदेश भूमि पर लाए हो, तुम वह हो जिसका ध्यान आते ही मन महक उठता है, तुम वह हो जो थकी आत्मा में उड़ने की उमंग, शक्ति पैदा कर देते हो, सुगंध के उस अदृश्य बाग को नमन करूँ, तुम ही बताओ भारत, किसे नमन करूँ मैं।

तुम वहाँ नहीं हो जहाँ अपनों से ही अपनों को भय है, सबको सबसे संत्राश रहा है, सब पर सबका संशय रहा है, जहाँ स्नेह के सहज गति से हटे जन–मन है, जहाँ झण्डों–नारों आदि, बँटे जनगण है। अब कैसे इस कुत्सित जीवन, विभक्त जीवन को नमन करूँ। तुम्ही बताओ भारत, किसको नमन करूँ मैं।

जहाँ पहुँच कर नर–नारी कोई बन्धन नहीं मानते, सबको एक ही रूप में भरकर प्रेम से देखते हैं पूरे संसार को, क्या उसको मैं नमन करूँ, किसे नमन करूँ भारत, किसे नमन करूँ मैं।

भारत किसी स्थान का वाचक नहीं। यह गुण तो नर विशेष का है। यह एक देश का नहीं, यह तो पूरे भूमण्डल की विशेषता है। यहाँ एकता अखंडित है, यहाँ प्रेम का स्वर है। सम्पूर्ण विश्व को, जन्मभूमि समझ नमन करूँ मैं। किसको नमन करूँ भारत, किसको नमन करूँ मैं।

यह धरती खंडित है पत्थरों से, नदियों से, सागर से, पर जब भी दो हाथ मिलते हैं तब खाई जैसे भर जाती है, एक हर्ष की लहर दौड़ जाती है। दोषियों के बीच सेतु का निर्माण भारत ही करता है। मंगलमय इस महासेतु का नमन करूँ मैं। तुम्ही बताओ भारत, किसे नमन करूँ मैं।

दो दिलों को और मनों को जो जोड़ रहा है, जो मित्रवत भाव से विश्व की गति मोड़ने में सक्षम है, जो जीवन में प्रेम की नदियाँ बहा रहे हैं, जो देशों के बीच बन्द खिड़की को खोल रहे हैं, आत्मबन्धु मान ऐसे लोगों को नमन करूँ मैं। किसको नमन करूँ मैं भारत, किसको नमन करूँ।

शांति का स्वर भारत से गूँजता है। भारत के हाथों में धर्मदीप है। धर्मदीप लेने वाला और शाँति का मंत्र पाठ करने वाला भी तुम्हारी सन्तानें हैं। वह वीर भी तुम्हारा है जो सत्य की ओर बढ़ते हैं, किसी न्याय के लिये जान देने वाला भी तुम्हारा है, मानवता के ऐसे भवन को नमन करूँ मैं, भारत किसका नमन करूँ मैं।



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 4 : राष्ट्रीय आन्दोलन के दौरान दिनकर की रचनायें किस गुप्त नाम से प्रकाशित होती थीं?

.....



3.4 प्रस्तुत अध्याय से हमने सीखा

- दिनकर की राष्ट्रीय चेतना का मूल रूप भाव-प्रेरित रुमानी है। बुद्धि-विवेक द्वारा विरोधी सत्ताओं के साथ समझौता और सामंजस्य की कल्पना वे नहीं करते और कर भी नहीं सकते। अनाचार और अन्याय के उच्छेदन और उन्मूलन के अतिरिक्त उनके पास और कोई समाधान नहीं है।
- उनका मार्ग समझौते का नहीं, क्रान्ति और विप्लव का मार्ग है। चुपचाप मार खाना उनकी समझ में कभी नहीं आया और न उनका यह विश्वास बना कि केवल भीख मांगने से स्वतन्त्रता मिल सकती है या दुश्मन की ललचाई नजरों से उनकी रक्षा की जा सकती है। परन्तु उनकी क्रान्ति का रूप निरुद्देश्य-ध्वंसमूलक नहीं है।
- श्री माखनलाल चतुर्वेदी ने कहा है कि इनकी कविता में तपन और ज्वाला है। वर्तमान युग के लिए क्या नहीं है? दिनकर के इसी रूप को मैं देखना चाहता था। वह इस युग की ज्वालमाला है। इस पुस्तक का दिनकर, हिमालय को और उसके माध्यम से सम्पूर्ण राष्ट्र और संस्कृति को प्यार करने वाला दिनकर है। जैसी मति है, वैसी कृति है, वैसा ही दिनकर व्रती है। किन्तु हम तो कालिदास को सर्वश्रेष्ठ कहने वाले देश में रहते हैं।
- हम दिनकर को समझ सकें तो बड़ी बात है। दिनकर मुख्यत: ओज और पौरुष के कवि हैं; परन्तु उनके राग का एक दूसरा रूप भी है जो एकान्त वैयक्तिक है।



3.5 विस्तृत जानकारी हेतु पढ़ें

1) डॉ. धीरेन्द्र वर्मा : *हिन्दी साहित्य कोष*

2) आचार्य रामचन्द्र शुक्ल : *हिन्दी साहित्य का इतिहास*

3) आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी : *हिन्दी साहित्य: उद्‌भव और विकास*

4) आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी : *हिन्दी साहित्य की भूमिका*

5) डॉ. बच्चन सिंह : *हिन्दी साहित्य का दूसरा इहास*

6) डॉ. नगेन्द्र (सं.) : *हिन्दी साहित्य का इतिहास*

7) डॉ. नामवर सिंह : *वाद–विवाद सम्वाद*

8) डॉ. केदारनाथ सिंह : *आधुनिक हिन्दी कविता में बिम्ब विधान*

3.6 स्वनिरीक्षण का पुनर्निरीक्षण

प्रश्नोत्तर 1 : सन् 1924 ई. की।

प्रश्नोत्तर 2 : रवि (इनके पिता का नाम रवि सिंह था)।

प्रश्नोत्तर 3 : उर्वशी।

प्रश्नोत्तर 4 : अमिताभ।



3.7 सम्भावित प्रश्न

प्रश्न 1 : देशानुराग से आप क्या समझते हैं ?

प्रश्न 2 : दिनकर के जीवन–दर्शन एवं साहित्य पर प्रकाश डालिए।

प्रश्न 3 : दिनकर की साहित्यिक उपलब्धि की समीक्षा कीजिए।

प्रश्न 4 : किसको नमन करूँ मैं – कविता का विवेचन कीजिए।

प्रश्न 5 : व्याख्या कीजिये –

क) तू वह, जिसका ध्यान आज भी मन सुरभित करता है,
थकी हुई आत्मा में उड़ने की उमंग भरता है।

ख) तेरा है वह वीर, सत्य पर जो अड़ने जाता है,
किसी न्याय के लिए प्राण अर्पित करने जाता है।
मानवता के इस ललाट–चन्दन को नमन करूँ मैं ?
किसको नमन करूँ मैं भारत! किसको नमन करूँ मैं ?

*** ***** ***

इकाई 4 : नागार्जुन – अकाल और उसके बाद

इकाई की रूपरेखा

4.1 उद्देश्य

4.2 प्रस्तावना

4.3 नागार्जुन

4.3.1 जीवन दर्शन एवं साहित्य

4.3.2 'अकाल और उसके बाद' का पाठ

4.3.3 पाठ का सारांश

4.4 प्रस्तुत अध्याय से हमने सीखा

4.5 विस्तृत जानकारी हेतु पढ़ें

4.6 स्वनिरीक्षण का पुनर्निरीक्षण

4.7 सम्भावित प्रश्न

4.1 उद्देश्य

इस अध्याय से आप जान सकेंगे–

- नागार्जुन के काव्य के विविध रूपों को
- नागार्जुन काव्य, जीवन, दर्शन को
- नागरिकता एवं व्यंग्य के माध्यम से नागार्जुन की कविता बहुलार्थी, विशिष्ट एवं बहु आयामी किस प्रकार बनती है इसे जान सकेंगे।

4.2 प्रस्तावना

इस इकाई में हम आधुनिक युग के महान प्रगतिशील कवि नागार्जुन के जीवन दर्शन एवं साहित्य को सम्बन्ध में अध्ययन करेंगे। यायावरी प्रवृत्ति के नागार्जुन, लोक–चेतना तथा यथार्थ के कवि हैं। साम्यवाद से प्रभावित होने पर भी इनका दृष्टिकोण सीमित नहीं है। व्यापक है, बहु आयामी है। शायद इसी लिए डा. नामवर सिंह कहा है कि तुलसी के बाद अकेले नागार्जुन ऐसे कवि हैं जिनकी काव्य–रचना किसानों से लेकर काव्य रसिकों तक पहुँची हैं। उनको काव्य संसारमें सर्वहारा तता सामान्य जनता का प्राधान्य है।

4.3 नागार्जुन

लोक चेतना एवं यथार्थ अनुभव से अनुप्राणित सहजता नागार्जुन के काव्य की सबसे

बड़ा विशेषता है। इनका व्यक्तित्व विविधमुखी है और इनका साहित्य बहुआयामी रहा है। इन्द्रिय बोध, भाव एवं विचार, इन तीनों आयामों पर नागार्जुन की कविता हमारे अपने समय की सबसे सार्थक कविता है। अपनी मानवीय संम्वेदना में वह जितनी व्यापक तथा गहरी है, अपने शिल्प में भी उतनी ही बहुआयामी तथा मँजी निखरी है। आज के मनुष्य की यातना, और इस यातना से मुक्ति के लिये उसका संघर्ष,उसकी आशायें-आकांक्षायें और उसके स्वप्न हमारे अपने समय का जीवन्त और ज्वलंत यथार्थ है, सब कुछ उसमें अक्षत लिपिबद्ध है। यह मनुष्य की कविता है,जन की कविता है। जनपक्षधरता का, जन की शक्ति और संभावनाओं का और जनता के खिलाफ साजिश कर रही ताकतों का इतना सक्षम, आत्मीय और निर्मल चितेरा समकालीन काव्य-परिदृश्य में दूसरा रचनाकार नहीं है। नागार्जुन के रचनाकार को उसकी इन सारी विशेषताओं के साथ पहचानना और विश्लेषित करना हमारा ध्येय है। नागार्जुन के कवि रूप की सम्पूर्णता को जानने-समझने के लिए यह बहुउपयोगी होगा।

नागार्जुन प्रगतिशील काव्यधारा के कवि माने जाते हैं। किन्तु नागार्जुन का काव्य-संसार वैविध्यमय होने के साथ-साथ बहुत व्यापक एवं विराट है। इसमें प्रकृति, मनुष्य, पशु, राजनीतिक-सामाजिक जीवन के मधुर एवं कोमल पक्ष, व्यंग्य की तीखी धार, दैनन्दिन जीवन की गतिविधियाँ सब शामिल हैं। नागार्जुन का यह वैविध्यमय संसार उनकी काव्य सम्वेदना का किस प्रकार हिस्सा बनता है, आइए इसे देखें।

4.3.1 जीवन दर्शन एवं साहित्य

नागार्जुन (1911-1998) का जन्म दरभंगा जिले के सतलखा गाँव में हुआ है। यहाँ इनका ममहर (ननिहाल) है। इनका पैत्रिक दरभंगा के तरौनी गाँव में है। पंडित गोकुल मिश्र एवं श्रीमती उमा देवी इनके माता-पिता थे। कहा जाता है कि शैशवावस्था में ही इनसे पूर्व इनके चार भाई-बहन काल के गाल में समा गये थे जिससे इनके माता-पिता ने वैद्यनाथ धाम में माह-भर का यज्ञानुष्ठीत किया था। तदुपरान्त इनका जन्म हुआ। इसलिये इनका नाम वैद्यनाथ रखा गया। घर के लोग ढक्कन कह कर पुकारते थे। बचपन में ही माँ का स्वर्गवास हो गया, विधवा चाची इनकी सौतेली माँ बनी। इससे इनका जीवन नर्क बन गया। यही वितृष्णा कवि की साहित्यिक सोच की नींव बनी और दबे-कुचलों की आवाज के रूप में बुलन्द हुई। इनका पैत्रिक पेशा यजमानी एवं पुरोहिती था। अत: बचपन में ही संस्कृत की शिक्षा प्रारंभ हुई।

गाँव की पाठशाला से तुकबंदी प्रारंभ करने वाले कवि बनारस में जाकर प्रतिष्ठित हुए। घर एवं गाँव की पाठशाला से संस्कृत, गाँव से मध्यमा, बनारस से शास्त्री, गवर्नमेंट कॉलेज कलकत्ता से काव्यतीर्थ, श्रीलंका से पालि-प्राकृत की शिक्षा प्राप्त हुई। सन् 1934 में विवाह किया।

यायावरी प्रवृत्ति के नागार्जुन सहारनपुर, पटियाला होते हुए लाहौर पहुंच 'सुबन्ध' पत्रिका के सम्पादक बने थे। वहीं स्वामी केशवानन्द की पत्रिका 'दीपक' का भी सम्पादन किया था। इनकी रचनायें सन् 1930 के आस-पास प्रकाशित होने लगी थीं। इनकी पहली कविता मैथिली में प्रकाशित हुई है। हिन्दी में पहली रचना 'राम के प्रति' सन् 1935 में लाहौर से निकलने वाली पत्रिका 'विश्व-बन्धु' में प्रकाशित हुई थी। पुस्तक के रूप में 'विधवा विलाप' इनकी पहली कृति है। इनके अतिरिक्त युगधारा (काव्य-1953), सतरंगे पंखोंवाली (काव्य-1959), प्यासी पथराई आँखें (काव्य-1962), प्यासी पथराई आँखें (काव्य-1980), खिजड़ी विप्लव देखा हमने (काव्य-1980), हजार-हजार बाँहों वाली (काव्य-1982), रत्नगर्मा (काव्य), भस्मांकुर (खण्ड काव्य), चन्दना (काव्य-1976), खून के शोले (काव्य) प्रेत का बयान (काव्य), चना जोड़ गरम (काव्य), अब तो बन्द करो हे देवी यह चुनाव प्रहसन (काव्य), बलचनमा (उपन्यास 1952), बाबा बटेशर नाथ (उपन्यास-1954), रतिनाथ की चाची (उपन्यास-1948), नयी पौध (उपन्यास-1953), कुम्भीपाक (उपन्यास), दु:खमोचन (उपन्यास-1953), उग्रतारा (उपन्यास), वरुण के बेटे (उपन्यास-1953) आदि उनकी साहित्यिक कृतियाँ हैं। मैथिली में 'चित्रा' और 'पत्रहीन नग्न गाछ' आदि रचनायें रचीं।

नागार्जुन के व्यक्तित्व पर दो व्यक्तियों की अमिट छाप स्पष्ट रूप से देखा जाती है। ये दो व्यक्ति हैं- महापंडित राहुल सांकृत्यायन और सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'। राहुल के कारण राजनीति में आये, वहीं निराला से प्रेरित हो साहित्य जगत् में। इसके फलस्वरूप राजनीतिक दृष्टि से जहाँ नागार्जुन पूर्णतया साम्यवादी विचारधारा की ओर उन्मुख हुए, वहीं साहित्यिक दृष्टि से काव्य की उस जनवादी विचारधारा को लेकर चले, जिसमें यथार्थ के सुदृढ़ धरातल पर मानव जीवन के चित्र अंकित किये गये हैं। निराला की तरह नागार्जुन ने पीड़ित जनता के कष्टों को स्वर प्रदान किया है। अभावग्रस्त निम्न वर्ग के प्रति सहानुभूति प्रकट की है। अभावों में पालित-पोषित तथा कष्टों से जूझने वालों के प्रति सम्वेदना व्यक्त की है, समाज की यंत्रणाओं और पीड़ाओं से समस्त मानवों के उत्थान के लिये क्रान्ति का आह्वान किया है। उच्च समाज के शोषण कार्यों का विरोध किया है और वीरता के साथ संघर्षरत सर्वहारा वर्ग का गुणगान किया है। इन्होंने एक ओर वर्ग-संघर्ष से संत्रस्त मानवों के प्रति गहन सम्वेदना व्यक्त करते हुए इसके लिये उत्तरदायी व्यवस्था के विरुद्ध आक्रोश व्यक्त किया है और दूसरी ओर स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भी बहुसंख्यक जनता को अभावों, कष्टों एवं पीड़ाओं से संग्रसित होते देखकर स्वदेशी शासकों के अनुचित कार्यों के प्रति प्रखर व्यंग्य वाणों की बौछार की है।

कवि सन् 1935 में विवाहोपरान्त घर से पलायन कर श्रीलंका पहुंचे उन्होंने बौद्ध धर्म के शून्यवाद से प्रभावित हो बौद्ध धर्म को स्वीकार किया था और भिक्षु नागार्जुन बने थे और दूसरी ओर बौद्ध धर्म के लोकाचार का उद्घोष किया। यहीं से गरीबों के प्रति उनकी सम्वेदना का स्वर उग्र रूप में प्रस्फुटित हुआ।

इनकी कवितायें मुख्यतया तीन तरह की हैं: गंभीर, संवेदनात्मक और कलात्मक– इनमें मानव मन के रागात्मक और सौंदर्यमयी चित्र अंकित हैं, इनमें मनुष्य की मानवीय संभावनाओं के प्रति आस्था व्यक्त है। दूसरी, सामाजिक कुरूपता, राजनीतिक अव्यवस्था और धार्मिक अंधविश्वास पर चुभता व्यंग्य है। तीसरी, उद्बोधात्मक– जो काव्य–तत्व की दृष्टि से हलकी ठहरती है।

डॉ. नामवर सिंह ने एक स्थान पर लिखा है कि इस बात में तनिक भी अतिशयोक्ति नहीं है कि तुलसी के बाद नागार्जुन अकेले ऐसे कवि हैं जिनकी कविताओं की पहुँच किसानों के चौपाल से लेकर काव्य रसिकों की गोष्ठि तक है। नागार्जुन सच्चे अर्थों में स्वाधीन भारत के जनकवि हैं। वहीं डॉ. रामविलास शर्मा ने लिखा है कि भारतेन्दु और बालमुकुन्द गुप्त ने जो व्यंग्य और जिन्दादिली हमारे साहित्य में पैदा की थी, नागार्जुन उसका समर्थ प्रतिनिधि कवि हैं। ये कवितायें दिल पर चोट करने वाली, कर्त्तव्य की याद दिलाने वाली हैं, राह दिखाने वाली भी हैं। यह इस बात की पेशगी है कि दलित और अपमानित जनता अपनी बेड़ियाँ तोड़कर रहेगी। नागार्जुन हमारे राष्ट्रीय सम्मान के रक्षक हैं। हमारी जनवादी साहित्यिक विरासत के सजग प्रहरी हैं। इनकी व्यंग्य रचनाओं के विषय में यह भी कहा जा सकता है कि कबीर के बाद हिन्दी साहित्य जगत् ने ऐसा व्यंग्यकार नहीं देखा।

नागार्जुन का काव्य–संसार सर्वहारा जनता का संसार है। वे उनके लिये तड़पते हैं, छटपटाते हैं। इनकी आँखें धरती के उस हिस्से की ओर हैं, जहाँ एक विशाल समुदाय अपने सुनहरे भविष्य के सुखी बनाने के लिये अंगराई ले रहा है। सामाजिक यथार्थ की भूमि पर जन–जीवन तथा धरती की महिमा को चित्रित करते हुए सामाजिक बोध इनकी कविता में स्पष्ट रूप में सामने आया है। यथार्थ की विरूपता ही कवि को नजर नहीं आती, अपितु उसकी सम्पूर्णता को सहजता के साथ स्वीकार करने का साहस भी नागार्जुन के पास है। वस्तुत: इनकी कविताओं में विषमताओं में संघर्षरत असहाय मानव चित्र ही नहीं है, बल्कि उसकी प्रतिज्ञाओं से दीप्त ओजस्वी चेहरा भी सामने आया है। उन्हें अपनी शक्ति का बोध है, वे परिस्थितियों से जूझना जानते हैं। एक ओर कवि को कंचन ही जिसकी आत्मा, आस्था, जीवन और यौवन वाला मनुष्य नजर आता है तो दूसरी ओर पेट में भूख की आग, घर–घर, फांका, भूख से टूटतीं आँते, सुरसा की भाँति मुँह बाये महंगाई दिखायी देती है।

नागार्जुन ने राजनीतिक पार्टी से जड़ित होने के बावजूद पार्टी के नियमों से

ऊपर उठकर रचनाधर्म को निभाया है। इन्होंने भारतीय ही नहीं, अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति पर भी जम कर प्रहार किया है। यहाँ यही कहा जा सकता है कि नागार्जुन जैसी राजनीतिक समझ शायद ही किसी कवि के पास हो। यदि आजादी के बाद की राजनीति का इतिहास जानना हो तो नागार्जुन की काव्य–कृतियों को देखना ही पर्याप्त है।

शिल्प द्वारा ही रचनाकार आत्म–अनुभूतियों की प्रखर अभिव्यक्ति करता है। अपने काव्य–विषय के अनुरूप ही आपने शिल्प को तरासा है। कहीं पर छन्दबद्धता का रूप आया है तो कहीं कवितायें छन्द मुक्त हो गयी हैं। गेय पदों के साथ अगेयता, बोलियों एवं ग्राम्य भाषाओं के साथ संस्कृतनिष्ठता, नाटक, नौटंकी, लोकगीतों एवं लोकधुनों के साथ परिष्कृत छन्दबद्ध संस्कृत के श्लोक, तुकान्त, अतुकान्त, दोहा, कुण्डलियाँ जैसी प्राचीन भारतीय वर्णन प्रणाली आदि का भरपूर प्रयोग इनकी कविताओं में हुआ है। शिल्प के स्तर पर नागार्जुन प्रगति, प्रयोग, नयी कविता और साठोत्तरी के रचनाकारों से अलग हैं। रूप के स्तर पर नगार्जुन अनेक प्रयोग करते हैं एवं विषय प्रस्तुतीकरण के समय व्यौरेवार सभी शिल्पों को अपनाते हैं। इस प्रयोगशीलता को मद्देनजर रखते हुए डॉ. नामवर सिंह ने लिखा है कि प्रयोगवादियों ने प्रयोग का नारा दिया था, वस्तुत: अकेले नागार्जुन ने कविता के रूप–विधानों में जितने प्रयोग किये हैं, सारे प्रयोगवादी मिलाकर भी उसका दशामांश दिखाने में असमर्थ साबित हुए हैं। रस और अलंकार की योजना भी इनमें सहजता से अनायास उपस्थित हो जाती है।

अन्तत: कहा जा सकता है कि नागार्जुन सच्चे अर्थों में सामान्य–जन के कवि हैं। समाज के सतर्क रचनाकार होने के नाते वे अपने उत्तरदायित्व से भली–भाँति परिचित हैं। इन्होंने जन–वन्दना को ईश्वर की वंदना से श्रेयष्कर माना है।



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 1 : नागार्जुन मूलत: किन दो व्यक्तियों से प्रभावित थे ?

.....

प्रश्न 2 : कवि नागार्जुन का वास्तविक नाम क्या है।

.....

4.3.2 'अकाल और उसके बाद' का पाठ

कई दिनों तक चुल्हा रोया, चक्की रही उदास
कई दिनों तक कानी कुतिया सोयी उसके पास
कई दिनों तक लगी भीत पर छिपकलियों की गश्त
कई दिनों तक चूहों की भी हालत रही शिकस्त

दाने आये घर के अन्दर कई दिनों के बाद
घुआँ उठा आँगन से ऊपर कई दिनों के बाद
चमक उठी घर की आँखें कई दिनों के बाद
कौए ने खुजलाई पाँखें कई दिनों के बाद।

4.3.3 पाठ का सारांश

प्रस्तुत कविता भारतीय गाँव के यथार्थ चित्र उपस्थित करती है। यह कविता विषय-वस्तु की नव्यता के साथ गहरी जीवन-दृष्टि से युक्त है। इसमें समय की सच्ची एवं प्रामाणिक खबरें हैं। ये अकाट्य तथ्यों एवं प्रामाणिक सन्दर्भों के साथ निर्भीकता से प्रस्तुत किए गए हैं। जनपदीय संस्कृति और लोक जीवन इनकी रचना-सृष्टि का चित्र फलक है। प्रस्तुत कविता इन्हीं सबका ज्वलंत उदाहरण है।

कवि कहते हैं कि अकाल और उसके बाद कई दिनों तक चूल्हा बुझा रहा, चक्की भी बन्द पड़ी है। कई दिनों तक परिवार की प्रिय कुतिया भूखे-प्यासे सोई रही। इतना ही नहीं, कई दिनों तक घर की दीवारों पर छिपकलियाँ गश्त लगाये बैठी हैं। कई दिनों तक चूहों की भी हालत खराब रही।

कई दिनों के बाद घर में दाने आये। घर के चूल्हों से कई दिनों के बाद धुआँ उठा। घर के लोगों की आँखें भी कई दिनों बाद चमकी। कई दिनों के बाद कौओं ने भी डेरा जमाया घर पर।

सतही रूप से यह कविता सपाट बयानी है ; किन्तु इसकी तह में जाने से ही इस कविता की सम्वेदना, भाव आदि का पता चलता है। कविता जो भी है वह अपने शब्दों में ही है। इसलिये प्रस्तुत कविता के शब्दों के आचरण को समझना सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। इस कविता में ध्वनि एवं अर्थ शब्द के दो पहलू हैं। कविता दोनों ही पक्षों का व्यवहार करती है। नागार्जुन ने रोजमर्रा के जीवन से बिम्बों और शब्दों को ग्रहण कर इस कविता को रूप दिया है। यह काव्य साधारण लोगों के जीवन के बारे में, उन्हीं की भाषा में, उन्हीं के जीवन-प्रसंगों का उपयोग कर, लगभग उन्हीं के सामने परोसा गया है।

कई दिनों तक चूल्हा जला ही नहीं। क्योंकि घर में अन्न था ही नहीं। चक्की रही उदास- जब घर में अन्न था ही नहीं तो चक्की में पीसा क्या जाता ? 'कई दिनों तक कानी कुतिया सोई उनके पास' क्योंकि-चक्की, चूल्हा सभी बन्द पड़े हैं। अत: कुतिया वहाँ चूल्हे के पास जाकर सोती रहती है। दूसरा अर्थ यह है कि जब घर के सभी लोग भूखे हैं तो वह कुतिया भी उन्हीं के साथ सोती है। 'कानी कुतिया' इसलिए कहा गया है कि अगल-बगल के कुत्तों ने उस पर हमला कर उसे एक आँख से कानी बना दिया है। अत: भूखी-प्यासी, कमजोर कानी कुतिया अपनी सुरक्षा के लिए अपने मालिक के

साथ ही सोई है। कानी कुतिया गरीब, सर्वहारा वर्ग के प्रतीक के रूप में है। 'कई दिनों तक लगी भीत पर छिपकलियों का गश्त'–अर्थात् छिपकलियों को खाने के लिए कीड़े नहीं मिले। ऐसे ही 'चूहों की भी हालत रही शिकस्त'। घर में दाने थे नहीं तो चूहों की भी हालत खराब थी। अत: यह कविता पाठक को प्रच्छन्न तरीके से जीवन–संग्राम में ले जाती है। यह संग्राम है अन्न के लिए, भूख की लड़ाई के लिए। भारत के लिए भूख सबसे बड़ी लड़ाई है।

दूसरे छन्द में कई दिनों के बाद एक परिवर्तन परिलक्षित होता है। इससे न केवल घर के लोगों के ही आंखें चमकती हैं, बल्कि घर–परिवार से जुड़े जानवर, कीड़े–मकोड़े भी खुश नजर आते हैं। अकाल ने मानो आदमी के अस्तित्व को ही समाप्त कर दिया है। आदमी का होना अन्न के होने पर निर्भर है। अन्न का नहीं रहना और फिर अन्न का आना– यही कविता का विषय है। नागार्जुन चतुराई से शब्दों और भाषा के तत्त्वों के कुशल उपयोग से हमें इन दो स्थितियों का बोध कराते हैं। वही रचना–विधान सफल है जो कवि के मंतव्य को पूर्णत: व्यक्त करे। यहाँ नागार्जुन हिन्दी भाषा के विविध स्तरों का इस्तेमाल करते हैं। यही इस कविता की विशेषता है।



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 3 : नागार्जुन की पहली पुस्तक कौन सी है ?

.....

प्रश्न 4 : बाबा बटेसरनाथ का रचनाकाल क्या है ?

.....



4.4 प्रस्तुत अध्याय से हमने सीखा

- सामाजिक सरोकारों के मंजे हुए रचनाकार नागार्जुन शोषण, शोषक, रूढ़ि पर कुठाराघात करते हैं। कवि की हैसियत से नागार्जुन प्रगतिशील और एक हद तक प्रयोगशील भी हैं। इनकी अनेक कविताओं में प्रगति और प्रयोग के मणिकंचन संयोग हुआ है। इससे एक प्रकार का सहज भाव–सौंदर्य दीप्त हो उठा है।
- आधुनिक हिन्दी कविता में शिष्ट–गंभीर–रहस्य तथा सूक्ष्म चुटीले व्यंग्य की दृष्टि से भी नागार्जुन की कुछ कविताएं अपनी एक अलग पहचान रखती हैं। इन्होंने कहीं–कहीं सरस, मार्मिक प्रकृति–चित्रण भी किया है। नागार्जुन की भाषा लोक–भाषा के निकट है। तद्भव

तथा ग्रामीण शब्दों के प्रयोग के कारण इसमें एक विचित्र प्रकार की मिठास आ गयी है। इनमें नाटकीयता भी है। कुछ कविताओं में मिथक एवं फैंटेसी का भी प्रयोग किया। कहा जा सकता है कि वे भावाभिव्यक्ति को एक ऐसे सहज–सरल मार्ग पर ले जाते हैं, जहाँ से इनका रचना–संसार सबसे अलग खड़ा दिखता है।

- दो दर्शन (बौद्ध एवं मार्क्स) को स्वीकार करने वाले नागार्जुन की कविता जीवन का विस्तार लेकर आगे बढ़ती है। इनकी कविता जीवन–संकुलता से भरी–पूरी है। इनका चेतना–स्वरूप अत्यन्त व्यापक है। हिन्दी काव्य–भाषा को सर्वाधिक संचरणशील, गतिमय, त्वरान्वित करने वाले रचनाकार नागार्जुन आत्मसंघर्ष के सूक्ष्मतम कथ्यों को उपयुक्त बनाकर आधुनिक हिन्दी कविता की भाषा की सम्वेदना की जर्रे–जर्रे को खोलकर रख देने की मादा रखते हैं।



4.5 विस्तृत जानकारी हेतु पढ़े

1) डॉ. प्रभाकर माचवे : *नागार्जुन*
2) डॉ. विजय बहादुर सिंह : *नागार्जुन का रचना संसार*
3) डॉ. नामवर सिंह (सं.) : *आलोचना (नागार्जुन विशेषांक)*
4) डॉ. महावीर अग्रवाल (सं.) : *सापेक्ष (नागार्जुन विशेषांक)*
5) डॉ. धीरेन्द्र वर्मा : *हिन्दी साहित्य कोष*
6) आचार्य रामचन्द्र शुक्ल : *हिन्दी साहित्य का इतिहास*
7) आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी : *हिन्दी साहित्य: उद्‌भव और विकास*
8) आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी : *हिन्दी साहित्य की भूमिका*
9) डॉ. बच्चन सिंह : *हिन्दी साहित्य का दूसरा इहास*
10) डॉ. नगेन्द्र (सं.) : *हिन्दी साहित्य का इतिहास*
11) डॉ. केदारनाथ सिंह : *आधुनिक हिन्दी कविता में बिम्ब विधान*
12) गणपतिगुप्त : *हिंदी साहित्य का इतिहास*

4.6 स्वनिरीक्षण का पुनर्निरीक्षण

प्रश्नोत्तर 1 : महापंडित राहुल सांकृत्यायन एवं सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला।

प्रश्नोत्तर 2 : वैद्यनाथ मिश्र

प्रश्नोत्तर 3 : विधवा विलाप

प्रश्नोत्तर 4 : सन् 1954।



4.7 सम्भावित प्रश्न

प्रश्न 1 : नागार्जुन के जीवन–चरित्र पर संक्षिप्त रूप में विचार कीजिए।

प्रश्न 2 : अकाल और उसके बाद कविता की विवेचना कीजिए।

प्रश्न 3 : विशेषताओं का उल्लेख करते हुए 'अकाल और उसके बाद' कविता की समीक्षा कीजिए।

प्रश्न 4 : सप्रसंग व्याखय कीजिए–

दाने आए घर के अन्दर कई दिनों के बाद
धुआँ उठा आंगन के ऊपर कई दिनों के बाद
चमक उठी घर भर की आँखें कई दिनों के बाद
कौए ने खुजलायी पाँखें कई दिनों के बाद

*** ***** ***

इकाई 5 : गजानन माधव मुक्तिबोध – 'अंधेरे में'

इकाई की रूपरेखा

5.1 उद्देश्य

5.2 प्रस्तावना

5.3 गजानन माधव मुक्तिबोध

5.3.1 जीवन दर्शन एवं साहित्य

5.3.2 'अंधेरे में' का पाठ

5.3.3 पाठ का सारांश

5.4 प्रस्तुत अध्याय से हमने सीखा

5.5 विस्तृत जानकारी हेतु पढ़ें

5.6 स्वनिरीक्षण का पुनर्निरीक्षण

5.7 सम्भावित प्रश्न

5.1 उद्देश्य

इस अध्याय से आप जान सकेंगे-

- मुक्तिबोध के जीवन-दर्शन एवं साहित्य के सम्बन्ध में
- गजानन माधव मुक्तिबोध के व्यक्तित्व एवं कृतित्व के विषय में
- मुक्तिबोध की विचारधारा
- मुक्तिबोध की काव्य-कला।

5.2 प्रस्तावना

इस इकाई में हम आधुनिक युग के महान प्रगतिशील कवि मुक्तिबोध के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। मुक्तिबोध मी अपनी प्रगतिशील विचार धारा के लिए प्रसिद्ध हैं। वे नयी कविता के मूर्धन्य कवि हैं। एक विचारक के अनुसार मुसे लगता है कि मुक्तिबोध गम्भीर बौद्धिकता के बहुत ऊची मीनार थे। यह भी सच है कि वह नित्य व्यवहार के कवि थे। .. उनका सम्पूर्ण व्यक्तित्व काव्य था। मुक्तिबोध वर्तमान समाज का अनुरंजन करना नहीं, बतिक उसमें परिवर्तन करना चाहते थे।'' इसलिए उनकी काव्य-सरिता में समाज की विसंगतियाँ, विद्रूपता तथा विपन्नता भी तरंगे तरंगित होती रहती हैं। साथी आशावायिता तथा आत्म विशास का सशक्त रूप भी।

5.3 गजानन माधव मुक्तिबोध

मुक्तिबोध नयी कविता के प्रतिनिधि कवि थे। इनका अनुभव जगत अत्यन्त व्यापक है और वे अपने परिवेश के जीवन से बहुत ही गहन भाव से जुड़े थे। अत: उनकी रचनाओं में जीवन का कटु अनुभव एवं मार्मिकता है। प्रगतिशील कवियों में उनका विशिष्ट स्थान है। इस अध्याय में मुक्तिमोध के जीवन–दर्शन एवं काव्य–दृष्टिकोण का अध्ययन किया जायगा, जिसमें उनकी कलात्मक तथा साहित्यक अनुभूति पर प्रकाश डाला जाएगा।

अनुभव की अतिशयता, निजता, यथार्थता और अभिव्यक्ति नये–नये प्रयोगों की कमनीयता पर भी साक्षिप्त विवेचन किया जाएगा। उनका साहित्य संसार हमारे लिए एक प्रेरणा है। उनका काव्य शिल्प, फैंटेसी शैली, परम्परा विद्रोह, श्रमशील मानवता का चित्रण, उदस्त दृष्टिकोण आदि विशेषताएं अनुपम हैं, अपूर्व हैं और हैं प्रशंसनीय एवं उधरणीय। तो चलें एसे महान कवि के जीवन–दर्शन से कुछ प्रेरणा ग्रहण करें।

5.3.1 जीवन दर्शन एवं साहित्य

उक्त विषय पर चर्चा से पहले हम मुक्तिबोध के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर संक्षिप्त विचार करें तो अधिक उपयुक्त होगा। मुक्तिबोध का जन्म ग्वालियर (मध्यप्रदेश) में हुआ। इनके पुर्वज महाराष्ट्र में निवास करते थे किन्तु बाद में ग्वालियर में निवास करने लगे। इनके पिता का नाम माधव मुक्तिबोध था और वे पुलिस विभाग में इन्सपेक्टर थे।

मुक्तिबोध की शिक्षा–दीक्षा उज्जैन में हुई। वे प्रारम्भ से ही ज्ञानार्जन के लिए सचेष्ट रहते थे। वे उज्जैन में पं. रमाशंकर शुक्ल के सम्पर्क में आये जिनसे उन्हें बहुत अधिक प्रोत्साहन मिला।

आपने पाश्चात्य दार्शनिकों, विद्वानों तथा विचारकों के विषय में गम्भीर अध्ययन किया। इनकी रचनाओं पर उनका प्रभाव देखा जा सकता है।

आपने शांताबाई से प्रेम बिवाह किया जो रुदिवादी परम्परा के विरुद्ध था। इससे उन्हें घर और बाहर विरोध का सामना करना पड़ा।

कुछ दिनों तक उन्होंने एक–दो स्कूलों में अध्यापक के रूप कार्य किया। तत्पश्चात् बनारस से प्रकाशित 'हंस' मासिक पत्रिका में अपनी सहभागिता दी। इसके बाद आकाशवाणी नागपुर से भी जुड़े। उज्जैन में मध्यभारत प्रगतिशील लेखक संघ की नींव डाली। इनका सुयश उस समय आसमान तक सुरभित हो गया जब 1943 ई. में प्रकाशित यशस्वी पत्र 'तारसप्तक' के कवि के रूप में उभरे।

माना जाता है कि सनका सुखद जीवन उस समय था जब वे राजनांद गॉव के दिग्विजय कलेज में ऊध्यापन कर रहे थे। अपने अन्तिम समय के कुछ महीने पूर्वतक वे वहीं रहे। वहीं उन्हे पक्षाघात रोग हो गया और 1964 ई. में दिल्ली में उनका देहावसान हो गया।

अन्याय के चक्रव्यूह को मंग करने का बीड़ा उठाकर चलने वाले तेजस्वी साहित्यकार के निधन से हिन्दी साहित्य संसार स्तब्ध हो गया, व्यथित हो गया। फिर भी वे अमर हैं अपनी अमर रचनाओं के द्वारा, उदात्त दृष्टिकोण के द्वारा।

मुक्तिबोध का व्यक्तित्व बड़ा ही अनोखा और गौरवमंडित था। वे बड़े इमानदार और लोकोपकारी व्यक्ति थे। विचार से – मार्क्सवादी होते हुए भी वे अतिशय उदार थे। कवि के रूप में उनका कथ्य भी व्यापक था। जीवन से संपृक्त तश्यों के चित्रण में उनका मन विशेष रूप से रमा था। जीवन के संघर्षों से जूझते हुए उन्होंने सांसारिक कटु अनुभवों के तर्क से जो नवनीत निकाला वह सचमुच उच्च स्तरीय है और है अतिशय सराहनीय।

उनकी रचनाएं : कविता संग्रह

1) तारसप्तक में प्रकाशित रचनाएं (1943 ई.)
2) चाँद का मुँह देढ़ा है (1964 ई.)
3) निबन्ध संग्रह
   क) नयी कविता का आत्म संघर्ष
   ख) नये साहित्य का सौन्दर्य मात्र
4) आलोचना (क) कामायनी एक पुनर्विचार
5) कहानी संग्रह : (क) काठ का सपना
   (ख) सतह से उठता हुआ आदमी
6) उपन्यास (च) विपात्र
7) विविध : (क) एक साहित्यिक डायरी
   (ख) पत्र–पत्रिकाओं में अनेक बिखरी हुईं रचनाएं।

उनकी दो लम्बी कविताएं – ''ब्रह्मराक्षस'' तथा ''अंधेरे में'' अपने काव्य–कौशल के लिए अमर हैं। मुक्तिबोध के व्यक्तित्व के सम्बन्ध में डॉ जगदीश गुप्त का विचार उल्लेखनीय है – ''हिन्दी कविता के क्षेत्र में मुक्तिबोध की प्रगतिशीलता और प्रयोगशीलता की समन्वित चेतना से युक्त ऐसे व्यक्तित्व के रूप में दिखाई देते हैं जिनका जीवन संघर्ष और यथार्थ आश्रित अभिव्यक्ति सबसे अधिक जटिल एवं प्रखर है।''



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 1 : मुक्तिबोध का जन्म कहाँ हुआ?

.....

प्रश्न 2 : 'चाँद का मुँह टेढ़ा' – किसकी रचना है?

.....

- *मुक्तिबोध की विचारधारा :* मुक्तिबोध की विचारधारा साम्यवादी सिद्धान्त से परिचालित थी। इसका कारण यह भी हो सकता है कि उन्होंने अभावग्रस्त जीवन को भोगा था और बहुत नजदीक से उसे परखा था। समाज में व्याप्त अन्याय, भ्रष्टाचार, अन्धविश्वास, दीनता, विवशता, स्वार्थ आदि से वे क्षुब्ध थे तथा इन कुरीतियों का वे धोर विरोध करना चाहते थे, जिससे समाज में शोषण मुक्त वातावरण कायम हो।
- *जीवन-दर्शन :* मुक्तिबोध का जीवन-दर्शन उनके उपयुक्त सिद्धान्त से संवार्द्धित है। अत: उनका जीवन दर्शन ''बहुजन हिताय-बहुजन सुखाय'' की कामना से आन्दोलित था। सामान्यतया उनकी रचनाओं में छायावादी कोमलता का अभाव था। वे संघर्ष में विशास करते थे –पराजय में नहीं। जीवन के संघर्षो तथा अवरोधों की चर्चा करने के बाद के आशा का सन्देश देते थे-

  आत्म विस्तार यह
  बेकार नहीं जाएगा।
  जमीन में गड़े हुये देहा की खाक से
  शरीर की मिट्टी की धूल से
  खिलेंगे गुलाबी फूल।

  शर्त यही है कि हम प्रकृति गन्ध कोष गुलाबी फूल काश बन सकें।

  मुक्तिबोध ने अपने आत्म संघर्ष तथा आत्म साक्षात्कार के माध्यम से निष्कर्ष निकाला कि समाज शोषण मुक्त हो, सबके लिए उचित सुख-सुविधा की व्यवस्था हो। इसके लिए यदि आवश्यकता पड़े तो वर्ग संगर्ष पर आधारित जन-क्रान्ति का भी आत्वान किया जाय। ''अन्त: करण का आयतन'' शीर्षक कविता में उक्त दृष्टिकोण दृष्टिगोचर होता है''। उनका जीवन दर्शन उनकी सहदयता एवं सहानुभूति का उच्चस्तरीय रूप इन पंक्तियों में देखा जा सकता हैं:-

  समस्या एक

मेरे सभ्य नगरों और ग्रामों में सभी मानव
सुखी, सुन्दर व शोषण मुक्त कब होंगे?

- *मुक्तिबोध की काव्य-कला :* मुक्तिबोध अपने समय के अतिशय महत्वपूर्ण कवि हैं। हिन्दी काव्य संसार को उन्होंने एक रोशनी दी है, एक नबीन आयाम दिया है। आधुनिक जीवन-मुल्यों की सशक्त तथा जीवन्त अभिव्यक्ति उनकी काव्य कला की शोभा है। समाज की विसंगतियों और विपन्नताओं की उत्ताल तरंगे इनकी काव्य गंगा में तरंगायित होती रहती हैं। इन्होंने समाज, राजनीति, संस्कृति संभ्यता, इतिहास, धर्म, साहित्य आदि विषयों पर भी लेखनी चलाई है। शमशेर बहादुर सिंह के शब्दो में – ''मुक्तिबोध की कविता, अदभुत संकेंतों भरी, जिज्ञासों से अस्थिर – कभी दूर से ही शोर मचाती, कभी कानों में चुपचाप राज की बातें कहती चलती है। हमारी बातें हमी को सुनाती हैं और हम अपने मन से एकदम चकित होकर देखते हैं, और पहले से और भी अधिक पहचानने लगते हैं।'' शरद कोठारी के शब्दों में – ''मुझे लगता है मुक्तिबोध गम्भीर बौद्धिकता की बहुत ऊँची मीनार थे। यह भी उतना ही सच है कि वे नित्व व्यवहार के कवि थे। उनमें बालक सी सरलता थी। मुक्तिबोध आत्मा, शरीर, विचार और व्यावहार के कवि थे। उनकर सम्पूर्ण व्यक्तित्व काव्य था। मुक्तिबोध वर्तमान समाज का अनुरंजन करना नहीं बल्कि उसमें परिवर्तन करना चाहते थे।'' अत: उनकी कविता में कोरी भावुकता नहीं है। यथार्थ के सुन्दर रंग से कविता रंगीन हो जाती है। अत: यदा-कदा वह निरस अथवा कर्कश होने पर भी सरस और सुन्दर लगती है।

  कुछ समीक्षकों के अनुसार वे नयी कविता के सर्वाधिक सशक्त कवि हैं। अत: नयी कविता की प्रमुख विशेषताएं उनकी कविता में विद्यमान हैं। यथा – प्राचीन जीवन मुल्यों एवं परम्परा की अस्वीकृति, वैयक्तिकता, मानवता, उपेक्षित तथा कमजोर मानव की प्रतिष्ठा, क्षण का महत्व, अतिशय बौद्धिकता एवं जीवन का चित्रण, काव्य-शिल्प तथा अभिव्यक्ति की नुतनता आदि नयी कविता की विशेषताएं मुक्तिबोध की कविता में भी अपने परिपक्वावस्था में विराजमान हैं। अस्तु, वे नयी कविता के यशस्वी एवं ऊर्जावान कवि के रूप में विख्यात हैं और हैं प्रेरक साहित्यकार।

  मुक्तिबोध मार्क्सवादी चिंतक हैं, इसलिए पूंजीवाद पर प्रहार करने से नहीं चूकते। आधुनिक औद्योगिक-व्यावसायिक सम्यता के मूल में वे शोषण की नींव पर आधारित जीवन मानते हैं। उनके अनुसार समाज में फैली विकृतियाँ – स्वार्थ, उत्पीड़न, अवसरवाद, भ्रष्टाचार, क्षोभ, हताशा आदि के

मूलकारक पूंजीवादी शोषण ही है –

शोषण की अति मात्रा
स्वार्थो की सुख-यात्रा
जब-जब सम्पन्न हुई
आत्मा से अर्थ गया, मर गई सभ्यता (एक स्वप्न कथा)

आसोन्मुख सभ्यता, कला, संस्कृति, चिन्तन, दर्शन एवं ज्ञान विज्ञान के सभी क्षेत्रों में प्रवेश कर उन्हें विकृत कर देती है। ''ब्रह्मराक्षस'' कविता के द्वारा इसकी पुष्टि होती है।

''मुक्तिबोध की रचना प्रक्रिया छायावादी और नयी कविता के कवियों से ही नहीं वरन् नागार्जुन तथा केदारनाथ अग्रवाल जैसे प्रगतिशील कवियों से भी नितान्त भिन्न है। इस भिन्नता के लिए उपर्युक्त अन्याय पूर्ण कारणों के साथ ही दो और कारण माने जा सकते हैं। पहला यह कि उन्होंने आत्म संघर्ष से आत्म साक्षात्कार और फिर जगत साक्षात्कार की एक बहुत ही जटिल प्रक्रिया को स्वीकार किया और दूसरा यह कि उन्होने काव्य रचना के लिए एक अत्यन्त कठोर मानदंड स्वीकार किया था।'' शायद यही कारण है कि कभी-कभी उनकी कविता जटिल और अस्पष्ट मालूम पड़ती है।

अपनी विशिष्ट काव्य-कला के द्वारा ''उन्होने नयी कविता के समूचे तंत्र को एक विशेष भावधारा की अभिव्यक्ति के अभेद्य दुर्ग को भीतर से तोड़ा है-उसकी प्रतीक योजना, मिथक रचना, उपमा और रूपक-व्यवस्था बिंब-विधान द्वारा निर्मित उसके दृढ़-प्राचीर को तोड़ते हुए, जनवादी चेतना के लिए, उसका द्वारा खोल दिया है।'' प्रतीकों, रूपकों बिम्बों, उपमानो, मिथकों आदि के प्रयोग में वे अतुलनीय हैं। ऐसा माना जाता हैं कि मुक्तिबोध इनके प्रयोग से जहाँ समाज की गंभीर समस्याओं पर प्रकाश डालते हैं वहीं अज्ञेय केवल आस्वाद तक ही सीमित रहते हैं।

- *भाषा :* मुक्तिबोध की काव्य-भाषा में एकरूपता नहीं रहती। सामान्यत: उसमें भावानुकूल और अवसराकूल अनेक रूप मिलते हैं। कभी उसमें संस्कृतनिष्ठ शब्दावली की शोभा दिखाई पड़ती है तो कभी अरबी-फारसी-उर्दू की नजाकत भी झलकती है। यदा-कदा उसमें बोल-चाल के शब्दों का प्रामुख्य होता है तो कभी अंग्रजी, हिन्दी तथा संस्कृत मिश्रित रूप का चमत्कार भी दिखाई देता है। कुछ विद्वानों के अनुसार भाषा- प्रयोग में भी मुक्तिबोध की प्रयोगधर्मिता अज्ञेय से आगे निकल जाती है। यद्यपि अज्ञेय शब्द-शोधन और नये शब्दों के अनुसंधान को वास्तविक कवि कर्म मानने वाले

कवि हैं। ''लाक्षणिक विशेषणों से युक्त शब्दों का प्रयोग मुक्तिबोध की अनुभूति की जटिलता की अभिव्यक्ति के लिए अनिवार्य साधन के रूप में आया है।''

मुक्तिबोध के काव्य में विराम चिह्नों की भूमिका का भी महत्व है। कोष्टक, डैस, अल्पविराम, अर्धविराम, प्रश्नबाचक आदि चिन्हों के अर्थ गुम्फित प्रयोग से उनकी काव्य कला की भंगिमा में चार चाँद लग जाते हैं । भाषा में नाटकीयता की उद्‌भावना में मुक्तिबोध दक्ष हैं। इनकी कविता प्राय: छन्द मुक्त रहती है फिर उसमें लय की छटा है। इनकी भाषा में नवीन बिम्बों के चमत्कार का अपना अलग सौंदर्य है। उसी तरह फैंटेसी शैली की सुराभि भी मनोरम है। प्रतीकों, रन्दोको, बिम्बों तथा चित्रात्मक शैली उनकी काव्य-कला का मुख्य आकर्षण है।

वस्तुत: उनके काव्य का विकासक्रम रोचक है। उनकी प्रारम्भिक रचनाए (1935-1950) छायावादी प्रभाव से प्रभावित है। उसके बाद प्रगतिवादी छाप भी देखी जा सकती है। शायद इसी अवधि में वे मार्क्सवाद भी ओर उन्मुख हुए। तत्पश्चात उन्होंने नयी कविता के परिवेश में अपना लेखन प्रारम्भ किया। वस्तुत: वे नयी कविता की आधार शिला हैं और हैं अमर विभुति डॉ जगदीश वर्मा ने ठीक ही कहा है – ''शब्दावली से बिम्ब-योजना और बिम्ब-योजना से काव्य-संवेदना का जो क्रमिक उन्मीलन होता है उसकी प्रभावशक्ति मुक्तिबोध के काव्य को हिन्दी साहित्य की सर्वोत्कृष्ट कक्षा में प्रतिष्ठित करती है।'' सचमुच ''जहा न जाय रवि वहाँ जाय कवि।''



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 3 : ..... साम्यवाद से प्रभावित थे।

प्रश्न 4 : मुक्तिबोध ..... कविता के महान् कवि थे।

5.3.2 'अंधेरे में' का पाठ

अंधेर में कविता का आरंभ अत्यंत नाटकीय और रहस्यात्मक ढंग से फैंटेसी के सहारे ''मैं'' के रूप में एक मध्यवर्गीय बुद्धिजीबी की इस चिंता से होता है:-

ज़िंदगी के ...।
कमरों में अंधेरे
लगाता है चक्कर।

कोई एक लगातार,
आवाज पैरों की देती सुनाई
बार–बार...
वह नहीं दीखता...
किंतु रहा घूम
तिलस्मी खोह में गिरफ्तार कोई एक
अस्तित्व जनाता
अनिवार कोई एक
और मेरे हृदय की धकधक
पूछती है – वह कौन
सुनाई जो देता, पर नहीं देता दिखायी।''

5.3.3 पाठ का साराश

''अंधेरे में'' मुक्तिबोध एक लम्बी कविता है जिसमे ''फैन्टेसी शिल्प' का सुन्दर प्रयोग है। इसका आरम्भ नाटकीय है और है रहस्यात्मक। इसमें आधुनिक जन–जीवन विशेषत: मध्यम वर्गीय जीवन की विवशता, कुंठा और संत्रास को मनोवैज्ञानिक एवं नाटकीय रूप में प्रस्तुत किया गया है।

''अंधेरे में'' कविता अपनी काव्य–कला के कारण हिन्दी साहिव्य की अमर रचना है। यहाँ इस कविता का मात्र एक अंश ही पठनीय है।

जीवन के अंधेरे कमरों में किसी चक्कर लगाने वाले के पैरों की आवाज सुनाई देती है, वह स्वयं दिखाई नहीं देता। अधिक चिन्तन के बाद एक छाया चित्र का आाभास होता है, जिसकी नुकीली नाक, सुन्दर ललाट आदि के साथ धीरे–धीरे उसका एक बिम्ब भी बिम्बत होता है, किन्तु उसकी पहचान नहीं हो पाती। मालूम पड़ता हैं कि जीवन के कमरों की जाइ भरी कन्दरा में वह रूप बन्दी हो गया है। वह दीवार के उस पार रहस्यमय अंधकार के रूप में एक अजीब ध्वनि के समान आता है और अपने अस्तित्व का आभास कराता है। भय से धक्–धक् करता हुआ मेरा हृदय पूछता है कि वह कौन है, जिसकी ध्वनि सुनाई पड़ती है। किन्तु वह दिखाई नहीं देता।

यहाँ अंधेरे कमरे या तिलस्मी खोह अपना ही अन्तर्जगत है जहॉ ''कोई एक'' या 'वह' के रूप में अपना ही अंत:संवेदन या संवेनात्मक उद्देश्य कैद है। ''संवेदनात्मक उद्देश्य विधुत की वह धारा है, जो अन्तर्व्यक्तित्व से प्रसूत होकर जीवन विधान करती है। आत्म चरितात्मक और सृजनशील ये संवेदनात्मक

उद्देश्य हृदय में स्थित जीवन अनुभवों को संकलित कर उन्हें कल्पना के सहयोग से उद्दीप्त और मुर्तिमान करते हुए एक ओर प्रवाहित कर देते हैं।'' अत: यहाँ कवि मुक्तिबोध के आत्मसाक्षत्कार आत्मसत्य से साक्षात्कार है।

माना जाता है कि ''सच्चा कलाकार आत्म-सत्य का अन्वेषण अपनी व्यक्तिगत अनुभूतियों से नहीं, वरन उन अनुभूतियों के मूलों (स्त्रोतों) में करता है, जो समाज और संस्कृति की परम्परा में समायी रहती है। आत्मान्वेषण, आत्मसाक्षातकार और फिर जगत साक्षात्कार की यह प्रक्रिया इस कविता में आरम्भ से अर्न्ततक दिखायी देती है।''

कुछ विचारकों के अनुसार जीवन के अन्धेरे कमरे में घूमने वाले स्वयं कवि ही हैं, जो साधारणीकृत होकर अनेक के अर्थ में भी आ सकते हैं। क्योंकि आज मुनष्य कुंठा, भय एवं संत्रास के कारण अपने हृदय में किसी की उपस्थिति का अनुभव करता है, किन्तु उसे देख नहीं पाता।

''अंधेरे में'' मुक्तिबोध की ऐसी कविता है, जिसमें उनकी प्रशंसनीय एवं अद्भुत काव्यात्मक प्रतिभा कर परिचय मिलता है। यह कविता रोमानी होते हुए भी अतिशय यर्थाथवादी और विलक्षण है। कुछ विद्वान इस कविता को आधुनिक युग की सर्वश्रेष्ठ कविताओं में से मानते हैं। भावनाओं से गुम्फित इस सुन्दर कविता को डॉ प्रभाकर माचवे ''everniea in verse'' कहना चाहते हैं, इसके बहुत से अंश पिकासो के विश्व प्रसिद्ध चित्र जैसा प्रभाव डालता है।'' इस प्रकार ''अंधेरे में'' कविता हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि है। इसके कवि मुक्तिबोध नयी कविता के अनमोल रत्न हैं।



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 5 : 'अंधेरे में' कविता में प्रधानत: किस शिल्प का प्रयोग किया गया है ?

.....

.....



5.4 प्रस्तुत अध्याय से हमने सीखा

- प्रस्तुत अध्याय से हमने जानकारी प्राप्त की कि मुक्तिबोध महिमा मंडित प्रगतिशील

कवि हैं और हैं नयी कविता के कालजयी साहित्यकार। इनकी रचनाओं में सामाजिक जीवन का कटु एवं जीवन्त चित्रण विद्‌मान है। वे मध्यमवर्गीय परिवार से सम्बन्धित थे। अत: मध्यमवर्गीय समस्याओं से जूझते हुए, तथा संघर्ष करते हुए वे सदा प्रगतिपथ पर अग्रसर होते गए।

- उनका व्यक्तित्व बहु अत्यत्मी था। वे नयी कविता के प्रकाश-स्तम्भ थे। उनकी लेखनी से काव्य, निबन्ध, आलोचना, कहानी, उपन्यास आदि की उद्‌भावना हुई हैं और ये रचनाएं अपने आप में विशिष्ट हैं, प्रशंसनीय हैं और हैं अक्षुण्ण। विशेष रूप से कवि के रूप में उनकी लोकप्रियता और ऊर्जा की अधिक गम्भीर चर्चा हुई है। कुछ समीक्षकों के अनुसार मुक्तिबोध नयी कविता को सर्वाधिक सशक्त कवि हैं।



5.5 विस्तृत जानकारी हेतु पढ़े

1) डॉ. धीरेन्द्र वर्मा : *हिन्दी साहित्य कोष*
2) आचार्य रामचन्द्र शुक्ल : *हिन्दी साहित्य का इतिहास*
3) आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी : *हिन्दी साहित्य: उद्‌भव और विकास*
4) आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी : *हिन्दी साहित्य की भूमिका*
5) डॉ. बच्चन सिंह : *हिन्दी साहित्य का दूसरा इहिास*
6) डॉ. नगेन्द्र (सं.) : *हिन्दी साहित्य का इतिहास*
7) डॉ. केदारनाथ सिंह : *आधुनिक हिन्दी कविता में बिम्ब विधान*
8) डॉ बच्चन सिंह (सं) : *अंधेरे में : इतिहास, संरचना और संवेदना*
9) अशोक चक्रधर : *मुक्तिबोध की काव्य प्रक्रिया*
10) डॉ ललन राय : *मुक्तिबोध का साहित्य-विवेक और उनकी कविता*
11) नवलकिशोर नवल : *निराला और मुक्तिबोध*
12) गणपतिगुप्त : *हिंदी साहित्य का इतिहास*

5.6 स्वनिरीक्षण का पुनर्निरीक्षण

प्रश्नोत्तर 1 : ग्वालियर (मध्यप्रदेश) में।

प्रश्नोत्त 2 : मुक्तिबोध की

प्रश्नोत्तर 3 : मुक्तिबोध।

प्रश्नोत्तर 4 : नयी कविता

प्रश्नोत्तर 5 : फैंदेसी शिल्प का

5.7 सम्भावित प्रश्न

प्रश्न 1 : मुक्तिबोध के जीवन–दर्शन एवं साहित्य की विवेचना कीजिए।

प्रश्न 2 : मुक्तिबोध की काव्य–कला पर प्रकाश डालिए।

प्रश्न 3 : पठित 'अंधेरे में' कविता का सारांश लिखिए।

प्रश्न 4 : विशेषताओं का उल्लेख करते हुए 'अंधरे में' कविता की समीक्षा कीजिए।

प्रश्न 5 : सप्रसंग व्याखय कीजिए–

कोई एक लगातार,
आवाज पैरों की देती सुनाई
बार–बार...
वह नहीं दीखता...

*** ***** ***

इकाई 6 : भगवती चरण वर्मा : चित्रलेखा

इकाई की रूपरेखा

6.1 उद्देश्य

6.2 प्रस्तावना

6.3 भगवती चरण वर्मा

6.3.1 व्यक्तित्व एवं कृतित्व

6.3.2 भगवती चरण वर्मा की औपन्यासिक विशष्टाऐ

6.4 चित्रलेखा

6.4.1 कथावस्तु तथा जीवन दर्शन

6.4.2 चरित्र चित्रण

6.4.3 कथोपकथन

6.4.4 वातावरण

6.4.5 भाषाशैली

6.4.6 भावात्मक शैली एवं लक्ष्य

6.5 प्रस्तुत अध्याय से हमने सीखा

6.6 विस्तृत जानकारी हेतु पढ़ें

6.7 स्वनिरीक्षण का पुनर्निरीक्षण

6.8 सम्भावित प्रश्न

6.1 उद्देश्य

इस अध्याय से आप जान सकेंगे-

- उपन्यासकार भगवती चरण वर्मा के व्यक्तित्व एवं कृतित्व
- उपन्यासकार की औपन्यासिक विशेषताएं
- चित्रलेखा उपन्यास की कथावस्तु एवं जीवन-दर्शन
- चरित्र चित्रण, कथोपकथन, वातावरण, भाषा शैली तथा लक्ष्य।

6.2 प्रस्तावना

इस अध्याय में चित्रलेखा उपन्यास के लेखक हिन्दी साहित्य के प्रसिद्ध उपन्यासकार भगवती चरण वर्मा के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश डाला जाएगा साथ ही उनके औपन्यासिक कौशल से भी हम परिचय प्राप्त करेंगे क्योंकि किसी भी कृति के विवेचन के लिए - इन तत्वों का विश्लेषण आवश्यक होता है। इसके बाद उपन्यास

की संक्षिप्त कथावस्तु, चरित्र चित्रण, कथोपकथन, भाषा-शैली, लक्ष्य आदि औपन्यासिक तत्वों की समीक्षा की जाएगी। इससे पढ़नेवाली के समक्ष आलोच्य उपन्यास के विविध तत्व स्पष्टता के साथ परिलक्षित होंगे और पारदर्शिता भी आएगी, जिससे उपन्यास का अध्ययन सहज, सरल और बोधगम्य हो जाएगा।

6.3 भगवती चरण वर्मा

भगवती चरण वर्मा हिन्दी साहित्य के इतिहास में चमकते हुए नक्षत्र कहे जा सकते हैं। अपने बहु आयामी व्यक्तित्व के कारण वे लोकप्रिय तथा यशस्वी साहित्यकार के रूप में विख्याप्त हैं।

6.3.1 व्यक्तित्व एवं कृतित्व

भगवती चरण वर्मा का जन्म सन् 1903 ई. में उत्तरप्रदेश के उन्नाव जिले के शक्तीपुर तहसील में हुआ। इनका परिवार मध्यमवर्गीय था। उन्होंने बी.ए. एल.एल. बी तक शिक्षा प्राप्त की तथा वकालत प्रारम्भ की। किन्तु वे साहित्यिक मनोवृत्ति से सम्पन्न व्यक्ति थे, अत: वकालत में उनका मन नहीं लगा। धीरे धीरे उनकी प्रतिभा बहुमुखी होने लगी और उन्होंने कविता, कहानी, निबन्ध नाटक, उपन्यास आदि क्षेत्रों में अपनी साहित्यिक दक्षता का परिचय दिया। उनके प्रिय कवि थे प्रसिद्ध काव्यकार मैथिलीशरण गुप्त। अपने समय के ख्यतिप्राप्त साहित्यकारों के सम्पर्क में रहने के कारण उनका बौद्धिक वैभव पल्लवित होता गया। उन्होंने कई फिल्मी कथाएं भी लिखीं। उनके अमर उपन्यास 'चित्रलेखा' सिनेमा के रूप में प्रदर्शित किया गया जो बहु प्रशंसित हुआ।

सामान्यत: उपन्यास लेखन में वे प्रेमचन्द की परम्परा के अनुगामी रहे, किन्तु अपनी स्वतंत्र अस्मिता सुरक्षित रखने में सफल रहे। स्वाध्याय के बल पर उन्होंने संस्कृत, हिन्दी तथा अंग्रेजी का विशेष अध्ययन किया। टालस्टाय, गणेशशंकर विद्यार्थी, विश्वम्भरनाथ कौशिक, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', प्रेमचन्द, सुमित्रनन्दन पंत, आदि महान् साहित्यकारों से वे प्रभावित थे। आध्यात्मिक विचारों में भी उनकी आस्था थी।

'चित्रलेखा' उपन्यास पर भगवती चरण वर्मा को मंगलाप्रसाद पुरस्कार से पुरस्कृत किया गया जबकि-

'भूले विसरे चित्र' उपन्यास के लिए वे साहित्य अकादमी से पुरस्कृत हुए। साहित्य सम्मेलन प्रयाग से - 'साहित्य वाचपस्पति' अलंकार से अलंकृत किए गए। उत्तर प्रदेश सरकार से 'भारत-भारती' सम्मान से विभूषित हुए। उन्हें प्रतिष्ठित 'पद्मभूषण' सम्मान से भी सम्मानित किया गया।

इस प्रकार साहित्य की सेवा करते हुए वे सन् 1981 ई. में हमसे सदा के लिए अलग हो गए, किन्तु वे मरकर भी अमर हैं - अपनी प्रशंसनीय कृतियोंके द्वारा, सुयश और लोकप्रियता के द्वारा।



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 1: भगवती चरण वर्मा का जन्म कहाँ हुआ?

.....

प्रश्न 2: भगवती चरण वर्मा के प्रिय कवि ..... थे।

(रिक्त स्थान की पूर्ति करें)

हिन्दी साहित्य के यशस्वी साहित्यकार भगवती चरण वर्मा की रचनाओं को हम निम्नलिखित रूप से स्पष्ट कर सकते हैं -

उपन्यास : पतन, चित्रलेखा, तीन वर्ष, टेढ़े-मेढ़े रास्ते, आखिरी दाँव, अपने खिलौने, सामर्थ्य और सीमा, भूले बिसरे चित्र, रेखा, सीधी-सच्ची बातें, युवराज चुण्डा, वह फिर नहीं आयी, धुप्पल, प्रश्न और मरीचिका, सबहि नचाबत राम गोसाईं, थके पॉव तथा चाणक्य।

काव्य कृतियाँ : मधुकण, प्रेम संगीत, मानव, विस्मृति के फूल, एक दिन, रंगों से मोह भरी कविताएं, अर्पित मेरी भावना तथा सविनय महाकाव्य (अपूर्ण)।

नाटक : मेरे नाटक, वसीयत, वासवदत्ता

निबन्धात्मक ग्रंथ : साहित्य के सिद्धान्त, हमारी उलझन तथा आइने के सामने।

संस्मरण : अतीत के गर्त से।

कहानी संग्रह : दो बाँके, इंस्टालमेंट, मेरी प्रिय कहानियाँ, राख और चिंगारी, तथा मोर्चा बंदी।

6.3.2 भगवती चरण वर्मा की औपन्यासिक विशेषताऐ

भगवतीचरण वर्मा हिन्दी साहित्य के वरेण्य उपन्यासकार थे। अपूर्व औपन्यासिक विशेषताओं के कारण उनका हिन्दी साहित्य के इतिहास में सराहनीय स्थान है। अपने सूक्ष्म वर्णन, तार्किक क्षमता तथा गम्भीर दृष्टिकोण के लिए वे आदरणीय माने जाते हैं। अपने उपन्यासों में उन्होंने अनेक सामाजिक तथ्यों का उद्घाटन किया है। वे प्रधानत: प्रेमचन्द परम्परा के उपन्यासकार माने जाते हैं। फिरभी उनकी अलग पहचान कायम है। हम निम्नलिखित रूप से उनकी औपन्यासिक विशेषताओं पर संक्षिप्त वर्णन कर सकते हैं।

सामाजिक पहलुओं पर वे विशेषतया यथार्थवादी लेखक के रूप में

अपनी कलम चलाते हैं। वे उपदेशक की तरह अपना विचार प्रस्तुत नहीं करते बल्कि एक पटु साहित्यकार के समान सहज एवं सरस रूप से ऐसा सटीक वर्णन करते हैं कि पढ़नेवाले सारे तथ्यों से अवगत हो जाते हैं और उनकी कलात्मक शैली की दाद देने लगते हैं। उनकी लेखनी कभी सामाजिक विषमताओं एवं विडम्बनाओं पर प्रहार करती है तो कभी हमारे समक्ष अनेक समस्याओं को साकार करती है। उस समय वे समस्या मूलक उपन्यासकार के रूप में परिलक्षित होते हैं। 'चित्रलेखा' उपन्यास में पाप-पुण्य की समस्या है तो 'तीनवर्ष' उपन्यास में प्रेम विवाह, वासना तथा प्रेम की समस्या है।

मध्यमवर्गीय जीवन में किस प्रकार पूंजीवाद एवं सामन्तवाद का प्रभाव है- इसका उल्लेख करना वे नही भूलते तो राष्ट्रीयता की भावना को पुष्पित करने में भी पीछे नहीं रहते। हॉ, यत्र-तत्र वे नियतिवादी तथा भाग्यवादी के रूप में भी दिखाई पड़ते हैं। उनकी कृतियों में यदा-कदा साम्राज्यवाद का विरोध दृष्टिगोचर होता है तो कभी राजनीतिक जागरण, संयुक्त परिवार का विघटन राष्ट्र के विकास के लिए आन्दोलनों घटिया राजनीति एवं सत्याग्रहों की झलकें भी मिलती हैं। ये सारे प्रसंग हम किसी-न-किसी रूप में उनके उपन्यासों - 'सामर्थ्य और सीमा, 'सबै नचाबत राम गोसाँईं, 'टेढ़े-मेढ़े रास्ते', 'भूले विसरे चित्र' आदि में देख सकते हैं।

भगवती चरण वर्मा यथार्थवादी उपन्यासकार के रूप में स्वीकृत हैं। उनके उपन्यासों में यथार्थ का अनूठा वर्णन मिलता है किन्तु आवश्यकतानुसार कल्पना का कमनीय पुट भी देखा जा सकता है। अपने देश में स्वतंत्रता से पूर्व आजादी की भावना, भारतीय नारियों की प्रेम-भावना, उनकी पारिवारिक समस्याएं आदि का यथार्थ चित्रण उनके उपन्यासों की मुख्य विशेषताएं हैं। राजनीतिक चेतना के वर्णन में वर्माजी कलम तोड़ देते हैं। असहयोग आन्दोलन, साइमन-कमीशन, जालियानावाला बाग का हत्याकांड, नमक आन्दोलन, गॉधी जी की राजनीतिक विचारधारा आदि के वर्णनों में उपन्यासकार को उल्लेखनीय सफलता मिली है।

वर्माजी के उपन्यासों की एक प्रमुख विशेषता यह है कि जब वे किसी समस्या को उभारते हैं तो उसका समाधान भी करते हैं साथ ही उनकी पात्र-योजना भी यथार्थ की भूमि से जुड़ी होती है।

पात्रानुकूल भाषा शैली उनके उपन्यासों की शोभा में चार-चाद लगाते हैं। उनकी भाषा शैली में ऐसी शक्ति है जिससे सहज या जटिल भाव अपने पूर्ण तेबर के साथ नाटकीय अभिव्यंजना करती है। जनसाधारण की समास्या के जन साधारण की भाषा में व्यक्त करने में वर्मा जी दक्ष हैं। इसके उपन्यासों की

भाषा में स्वाभाविकता है, प्रांजलता भी।

सारांशत: हम कह सकते हैं कि भगवती चरण वर्मा प्रेमचन्द परम्परा के अनुगामी हैं। दोनों ही महान उपन्यासकारों ने विशेष रूप से मध्यम वर्ग को अपना मुख्य कथ्य बनाया है। दोनों के प्रस्तुतीकरण बहुत कुछ साम्य रखते हैं और दोनों ही सफल एवं प्रशंसनीय उपन्यासकार हैं। जबकि दोनों की अपनी अपनी अलग अस्मिता है, अलग व्यक्तित्व है।



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 3 : सही या गलत का निर्णय कीजिए :

भगवती चरण वर्मा जी को पद्मभूषण सम्मान नही मिला था।

.....

प्रश्न 4 : 'चित्रलेखा' उपन्यास पर फिल्म भी बनी थी।

.....

6.4 चित्रलेखा

6.4.1 कथावस्तु तथा जीवन दर्शन

'चित्रलेखा' उपन्यास की कथावस्तु सरल, सहज और सरस है। तार्किक होने पर भी यह उपन्यास रस से ओत-प्रोत है और है हृदय स्पर्शी। यह उपन्यास प्रधानत: पाप-पुण्य का विश्लेषण करता है। कथावस्तु महाप्रभु (गुरु) रत्नाम्बर के आश्रम से प्रारम्भ होता है। शिष्य शेतांक तथा विशालदेव गुरु के समक्ष जिज्ञासा करते हैं:- ''पाप क्या है?''

गुरु चाहते थे कि दोनों शिष्य स्वयं सामाजिक परिस्थितियों का अनुभव करके इस प्रश्न का उत्तर निकाल लें। यह सोचकर महाप्रभु रत्नाम्बर अपने दोनों शिष्यों को भिन्न-भिन्न वातावरण में भेजते हैं। वे श्वेतांक को भोगी सामन्त बीजगुप्त का सेवक बनाते हैं और विशालदेव को योगी कुमारगिरि के आश्रम में रखने का प्रबन्ध करते हैं।

चित्रलेखा विदुषी है, सौंदर्य मण्डित है, चतुर है और है अतीव आकर्षक। विधवा होने के बाद भी वह कृष्णादित्य नामक एक क्षत्रिय से प्रेम विवाह करती है और उसके बच्चे की माँ भी बनती है। परन्तु अभाग्यवश पति और पुत्र की मृत्यु से वह जीवन से टूट जाती है तथा लाचार होकर एक नर्तकी के आश्रम में रहती है। यहीं वह नृत्य में दक्ष हो जाती है और अपने सराहनीय गुणों के कारण श्रेष्ठ नर्तकी के रूप में विख्यात हो जाती है।

बीजगुप्त श्वेतांक को सौंदर्य की रानी राज नर्तकी चित्रलेखा से परिचय करबाता है और उसे (श्वेतांक को) मदिरा पात्र देने का आदेश देता है। मदिरा पात्र ग्रहण करते समय श्वेतांक का हाथ चित्रलेखा के हाथ से स्पर्श करते ही वह एक अजीब सिहरन से प्रकम्पित हो जाता है। इसे वह (श्वेतांक) संसार का पहला विशेष अनुभव स्वीकार करता है। श्वेतांक धीरे धीरे बीजगुप्त और चित्रलेखा के सम्पर्क से सांसारिक अनुभव प्राप्त करता रहता है। किन्तु जब वह मौका पाकर चित्रलेखा से प्रेम निवेदन करता है तो चित्रलेखा उसे कसकर फटकारती है और वह अपना अपराध स्वीकार लेता है। तब बीजगुप्त उसे सांत्वना देता हुआ कहता है – ''तुमने अपराध स्वीकार करके अपने अपराध से स्वयं ही मुक्ति पा ली है।''

भ्रमण के क्रम में जब चित्रलेखा योगी कुमारगिरी के आश्रम में पहुॅचती है तो दोनों में कुछ तर्क-वितर्क होताहै। अन्तरतम से वह कुमारगिरि की ओर आकर्षित होती है किन्तु इसे वह स्पष्ट नहीं होने देती बल्कि दबा देती है। क्योंकि वह तो बीजगुप्त की प्रेमिका है।

कुछ समय के बाद एक दिन सम्राट चन्द्रगुप्त की राजसभा में आचार्य चाणक्य और कुमारगिरि में ईश्वर तथा दार्शनिक विषय पर चर्चा होती है। इस चर्चा में चाणक्य को हार माननी पड़ती है। इसी सभा में चित्रलेखा चाणक्य के पक्ष से एक कुशल एवं बुद्धिमती के रूप कुमारगिरि से शास्त्रार्थ करती है और कुमारगिरि को पराजित करती है। विजय मुकुट चित्रलेखा को प्राप्त होता है जिसे चित्रलेखा सादर कुमारगिरि को अर्पित करती है।

मनोवैज्ञानिक रूप से चित्रलेखा कुमारगिरि से वशीभूत हो गई है और एक दिन वह कुमारगिरि के आश्रम में दीक्षा लेने जाती है तथा (राज्य सभा की चर्चा के सम्बन्ध में) अपनी पराजय स्वीकार करती है। दोनों में कुछ तर्क-वितर्क होता है और चित्रलेखा के समक्ष पुनः कुमारगिरि विवश हो जाते हैं तथा उसे दीक्षा देना स्वीकार कर लेने हैं। यहॉ भी चित्रलेखा सौंदर्यपूर्ण विदुषी के रूप में दिखाई देती है जबकि कुमारगिरि पराजित होने पर हीन भावना का अनुभव करते हुए लज्जित हो जाते हैं।

अब दोनों एक कुटी में ठहरते हैं तथा चित्रलेखा के सौंदर्य मण्डित रूप जाल में फँसकर कुमारगिरि वासना का शिकार होते हैं और पथभ्रष्ट भी। लगता है दोनों ही परिस्थिति के शिकार हो गए हैं और अपने कर्तव्य से च्युत। दोनों ही दमित काम वासना के शिकार हो गए हैं। मनोवैज्ञानिक रूप से दोनों की वासना जाग्रत हो गई है!

पाटलिपुत्र के सामंत मृत्युंजय की पुत्री यशोधरा सुन्दर है, सुशीला है,

सयानी है और है विवाह करने योग्य युवती। पिता इसका विवाह बीजगुप्त से करना चाहते हैं। बीजगुप्त चित्रलेखा के प्रेम में सराबोर हैं। अत: यह सम्बन्ध स्वीकार करने में असमर्थ हो जाते हैं। परन्तु जब चित्रलेखा कुमारगिरि के पास चली जाती है तो वे टूट जाते हैं, दु:खी हो जाते हैं। अत: अब वे यशोधरा से विवाह करना पसंद करते हैं। पुन: परिस्थिति का क्रूर प्रहार से वे दब जाते हैं। जब उन्हें यह पता चलता है कि उनका गुरु भाई श्वेतांक यशोधरा से प्रेम करता है और यशोधरा भी उसे मन से पसंद करती है। किन्तु श्वेतांक की निर्धनता के कारण दोनों का परिणय सम्बन्ध नहीं हो रहा है। यह जानकर बीजगुप्त अपने आन्तरिक प्रेम-पादप को मसल देते हैं और अपने गुरु भाई श्वेतांक के सुरभित वैवाहिक जीवन के लिए वे अपनी संपदा और सामंत का पद भी उसे समर्पित कर देते हैं तथा उसे अपना दत्रक पुत्र भी बना लेते हैं। अब श्वेतांक तथा यशोधरा का विवाह सम्पन्न हो जाता है।

उक्त विवाह के बाद बीजगुप्त एक भिखारी की तरह पाटलिपुत्र छोड़कर जाने के लिए तैयार हो जाते हैं। इस बीच चित्रलेखा कुमारगिरि से च्युत तथा भ्रष्ट होने के कारण मानसिक रूप से खिन्न और दु:खी हो जाती है। उसका अशान्त मन पुन: बीजगुप्त की ओर आकर्षित होता है। वह बीजगुप्त के पैरों पर गिरकर क्षमा याचना करती हुई कहती है :- ''नाथ, मैंने तुम्हारा जीवन नष्ट कर दिया। मैंने तुम्हें मिटा दिया। तुम शाप दो, दण्ड दो, मुझे ताड़ित करो, पर मुझसे घृणा न करो।'' बीजगुप्त उसकी विनम्र प्रार्थना से द्रवित होजाते हैं और कहते हैं :-

''प्रेम स्वयं एक त्याग है, विस्मृति है, तन्मयता है। प्रेम के प्रांगण में कोई अपराध नहीं होता, फिर क्षमा कैसी? फिरभी तुम कहलाना ही चाहती हो तो मैं कहे देता हूँ कि मैं तुम्हें क्षमा करता हूँ।''

चित्रलेखा भी अपनी सारी सम्पत्ति दान कर भिखारिनी बनकर बीजगुप्त के साथ चल देती है।

अन्त में कथावस्तु उसी स्थान पर लौट आती है, जहाँ से प्रारम्भ हुई थी। एक वर्ष के बाद विशालदेव और श्वेतांक महाप्रभु रत्नाम्बर के पास पहुँचते हैं। श्वेतांक बीजगुप्त को त्याग की प्रतिमूर्ति और देवता बताता है, जबकि कुमारगिरि को पशु एवं पापी बताता है। विशालदेव योगी कुमारगिरि को अजित बताता है तथा उनकी साधना एवं ज्ञान शक्ति को पूर्ण घोषित करता है जबकि बीजगुप्त को वासना का दास, घृणित एवं पापी मानता है। अब महाप्रभु रत्नाम्बर का निर्णय इस प्रकार है -

''संसार में पाप कुछ भी नहीं है, वह केवल मनुष्य के दृष्टिकोण की

विषमता का दूसरा नाम है।... मनुष्य अपना स्वामी नहीं है, वह परिस्थितियों का दास है- विवश है। कर्त्ता नहीं है, वह केवल साधन है। फिर पुण्य और पाप कैसा।''

इस तरह चित्रलेखा उपन्यास समाप्त हो जाता है और मानस पटल पर एक कौतूहल का दीपक प्रज्वलित हो जाता है।

कुछ विद्वानों का मत है कि चित्रलेखा उपन्यास का प्राण है - प्रेम। पाप-पुण्य की समस्या से इसका अप्रत्यक्ष सम्बन्ध है। उपन्यासकार ने पाप-पुन्य की समस्या को बलात आरोपित किया है। उपन्यास की भूल धारणा प्रेम के स्वरूप की विवेचना है। सच्चाई जो भी हो, परन्तु यहाँ पारदर्शिता से प्रेम के विविध रूप झलकते रहते हैं तो पाप-पुण्य की समस्या भी। कुशलता के साथ उपन्यासकार ने उक्त दोनों तत्वों को एक जगह संग्रह कर दिया है जो बड़ा ही कमनीय है और हृदयस्पर्शी भी।

हम संक्षेपत: यदि इस कथावस्तु पर विचार करें तो कह सकते हैं कि चित्रलेखा' उपन्यास ऐतिहासिक की अपेक्षा समस्यामूलक अधिक है, तार्किक एवं दार्शनिक भी है। कथावस्तु में चन्द्रगुप्त तथा चाणाक्य ऐतिहासिक पात्र अवश्य हैं, किन्तु घटनाएं ऐतिहासिक नहीं हैं बल्कि उपन्यास का ताना-बाना कमनीय कल्पना के कोमल भावनओं से तैयार किया गया है। उक्त दोनों पात्र सम्बन्धी कथा-तत्व यदि उपन्यास से हटा दें तो कोई विशेष क्षति नहीं पहुँचती और उपन्यास का कोमल कलेवर सुरभित रहेगा, सुन्दर रहेगा।

उपन्यासकार की अन्य उपन्यासों की अपेक्षा यह उपन्यास है लघुकाय किन्तु है श्रेष्ठ, सरस और बहु प्रशंसित, बहुपठित, अतिशय लोगप्रिय एवं कलात्मक।



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 5 : चित्रलेखा उपन्यास में किस समस्या पर विचार किया गया है?

.....

प्रश्न 6 : मनुष्य अपना स्वामी क्यों नहीं है?

.....

प्रश्न 7 : बीजगुप्त किसको दतक पुत्र बनाता है? (उत्तर दें)

.....

चित्रलेखा उपन्यास में एक विशेष प्रकार का जीवन दर्शन उपलब्ध होता

है जो रोचक तो है किन्तु सामाजिक जीवन में कितना सार्थक है – वह विचारणीय है। सम्पूर्ण उपन्यास में बीजगुप्त का यह कथन पाठक को आन्दोलित करता रहता है: ''*श्वेतांक, यह याद रखना कि मनुष्य स्वतंत्र विचार वाला प्राणी होते हुए भी परिस्थितियो का दास है।*'' यह कथन आधुनिक जटिल युग में भी समीचीन लगता है, किन्तु हमारे प्राचीन दार्शनिक तथा मनीषी इससे आंशिक रूप सेही सहमत हैं, पूर्णरूप से नहीं। फिरभी उपर्युक्त कथन अर्थपूर्ण है और है प्रासंगिक। यही कारण है कि 'चित्रलेखा' उपन्यास में वही जीवन दर्शन सारे पात्रों को संचालित करता है। अर्थात् भाग्यवाद, नियतिवाद या परिस्थिति की प्रधानता।

उपन्यास की समस्या है पाप और पुण्य का विश्लेषण करना। परन्तु उपन्यास का जीवन–दर्शन परिस्थिति या भाग्यवाद के वर्चस्व को स्वीकार करता है। इसके कारण पाप–पुण्य की कोई निश्चित परिभाषा नहीं की गई है। क्योंकि भिन्न भिन्न परिस्थिति में पाप–पुण्य का रूप बदल जाता है। अत: निश्चित रूप से कुछ कहना कठिन है।

6.4.2 चरित्र चित्रण

चरित्र कथावस्तु की गतिशीलता में सहायक होते हैं। ये आन्तरिक मनोवृत्तियों को भी ध्वनित करते हैं। अत: चरित्र का उपन्यास में महत्वपूर्ण स्थान है। विवेच्य उपन्यास में पात्र योजना बहुत ही कौशल से की गई हैं। प्रमुख पात्र चित्रलेखा, बीजगुप्त, कुमारगिरि तथा श्वेतांक हैं। गौण पात्रों में विशालदेव, यशोधरा, महाप्रभु रत्नाम्बर और मृत्युंजय हैं। जबकि दो ऐतिहासिक पात्र हैं –सम्राट चन्द्रगुप्त तथा महामंत्री चाणक्य। इन दोनों पात्रों का उल्लेख मात्र है। कथानक की गतिशीलता में इनका योगदान बहुत कम है। इस प्रकार उपन्यास में पात्रों की संख्या कम है जो एक विशिष्टता है।

चित्रलेखा एवं बीजगुप्त के अतिरिक्त अन्य पात्रों में नाटकीय ऊर्जा का अभाव है। अत: हम चित्रलेखा और बीजगुप्त के चरित्रों पर विशेष रूप से ध्यान केन्द्रित करेंगे। हॉ, योगी कुमारगिरि के चरित्र में भी कुछ उतार–चढ़ाव है और है कुछ स्मरणीय चमत्कार जिसका उल्लेख आगे किया जाएगा। सबसे जोरदार तथा प्रभावोत्पादक चरित्र है – चित्रलेखा, जो उपन्यास की नायिका भी है। सर्वप्रथम उसी चरित्र का विहगावलोकन करें तो अच्छा है।

- *चित्रलेखा :* चित्रलेखा सुन्दर है, लावण्यमयी है, विदुषी है, चतुर है, बुद्धिमती है और है व्यवहार कुशल। वह उपन्यास की नायिका है और है अन्य अनेक पात्रों को गति देनेवाली। 18 वर्ष भी अवस्था में वह ब्राह्मण कन्या विधवा हो जाती है। परिस्थितिके चक्कर में आकर वह कृष्णादित्य नामक क्षत्रिय से प्रेम–विवाह करती है जिससे वह एक पुत्र की माता भी बनती है परन्तु

अभाग्यवश जन्म होते ही उस बच्चे की मौत हो जाती है। उधर कृष्णादित्य उक्त विवाह के कारण समाज तथा घर से अनादृत होकर बहिस्कृत होता है। अपमान की अतिशयता के कारण वह आत्महत्या कर लेता है और चित्रलेखा भी बिखर जाती है, टूट जाती है। समाज में ऐसी नारी को जल्दी आश्रय भी नहीं मिलता। बाध्य होकर चित्रलेखा एक नर्तकी के आश्रम में रहती है। यहॉ वह संगीत एवं नृत्य शिक्षा में विशारद बनती है, साथ ही अन्य विषयों का भी गहन अध्ययन करती है। अपने इन्ही गुणों के कारण वह पाटलिपुत्र की प्रसिद्ध नर्तकी बन जाती है।

चित्रलेखा का चरित्र संघर्षों से भरा हुआ है। उसका चरित्र विभिन्न परिस्थितियों के झझावातों से मँजकर विकसित हुआ है। जब वह पाटलिपुत्र की प्रसिद्ध नर्तकी के रूप में यश पाने लगती है तो तो पुन: वहॉ के सामन्त बीजगुप्त के प्रेमपाश में अबद्ध हो जाती है। पीछे योगी कुमारगिरि की ओर आकर्षित होती है और उसके वासनात्मक भोग में सक्रिय हो उठती है। अत: चित्रलेखा के प्रेम के कई रूप हमे मिलते हैं। उसका पहला पति-प्रेम पवित्र और निर्मल था। कृष्णादित्य के साथ उसके प्रेम में भक्तिन होकर आत्म विस्मरण था। जबकि बीजगुप्त के साथ उसके प्रेम में मादकता, सुख और भोग-विलास की भावना थी। कुमारगिरि के साथ उसके प्रेम में वासना थी जो जल्दी तृप्त नहीं होती।

इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रेम के सम्बन्ध में चित्रलेखा की भावना में क्रमश: परिवर्तन होता गया। वह प्रेम के दैवी रूप को त्याग कर भौतिक एवं वासनात्मक रूप अपनाती चली गई। इसी वासनात्मक प्रेम को प्रज्वलित करने के लिए वह मदिरा की सहायता लेती है जो उचित नहीं था। प्राय: वह बीजगुप्त को भी वासना तृप्ति का साधन मानने लगी। सचमुच वह उद्दाम वासना में भटकने लगती है। किन्तु अन्त में वह उस पर विजय प्राप्त कर लेती है। फ्रायड के सिद्धान्त के अनुसार वह दमित यौन वासना से ग्रसित थी। इसलिए उसका मन विचलित होता रहता था।

चित्रलेखा मात्र लावण्यमयी ही नहीं है अपितु विदुषी एवं तार्किक भी है। इसलिए किसी भी विषय पर अधिकार से बोल सकती है। राजदरबार में वह अपनी विद्वता के कारण योगी कुमारगिरि को भी चुप कर देती है। उसके जीवन का अन्तिम भाग बड़ा ही नाटकीय लगता है। जब वह कुमारगिरि के आश्रम से लौटती है तो पश्चाताप और ग्लानि में डूबी हुई है। वहपुन: बीजगुप्त की छाया में आना चाहती है परन्तु साहस उसका साथ नहीं दे रहा है। फिर भी किसी तरह उसके पैरों पर गिरकर क्षमा याचना

चाहती हुई कहती है – ''नाथ! मैने तुम्हारा जीवन नष्ट कर दिया। मैंने तुम्हें मिटा दिया। तुम मुझे शाप दो, दण्ड दो, मुझे ताड़ित करो, पर मुझसे घृणा नकरो।''

बीजगुप्त उसे क्षमा कर देता है। तब वह भी सारी संपत्ति दानकर भिखारिनी बन जाती है और बीजगुप्त के साथ चल देती है – आत्मिक शान्ति की खोज में। सचमुच सुबह का भूला हुआ यदि कोई शाम को अपने घोंसले में आ जाए तो उसे भूला हुआ नहीं कहा जाता।

इस प्रकार हम देखते हैं कि चित्रलेखा में चुम्बकीय आकर्षण है। जिससे वह किसी को भी प्रभावित करने में सक्षम है और उसके द्वारा अन्य पात्र संचालित होते रहते हैं। वस्तुत: चित्रलेखा उपन्यास चरित्र प्रधान है जिसमें समस्या का भी उग्र रूप है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि यह उपन्यास समस्या प्रधान होते हुए भी चरित्र प्रधान है। उपन्यास का शीर्षक से ही ध्वनित होता है कि वह चरित्र प्रधान है और वह यादगार चरित्र है चित्रलेखा जो अपने जादुई व्यक्तित्व से शीघ्र ही किसी को प्रभावित कर सकती है, किसी को मुग्ध कर सकती है।

- *बीजगुप्त :* 'चित्रलेखा' उपन्यास के सारे पुरुष पात्रों में बीजगुप्त की प्रधानता है। वह पाटलिपुत्र का प्रतिष्ठित सामन्त है। उसके पास धन-वैभव और अनुभव का भण्डार है। मदिरा पान और नर्तकी चित्रलेखा की रंग रैलियों में निमग्न रहने पर भी वह उपन्यास के अन्त में श्रेष्ठ पात्र के रूप में साकार हो जाता है। महाप्रभु रत्नाम्बर के शब्दों में :-

''बीजगुप्त भोगी है। उसके हृदय में यौवन की उमंग है और आँखों में मादकता की लाली। उसकी विशाल अट्टालिकाओं में भोग-विलास नाचा करते हैं। रत्नजड़ित मदिरा के पात्रों में ही उसके जीवन कर सारा सुख है। वैभव और विलास की तरंगों में वह केलि करता है। ऐश्वर्य की उसके पास कमी नहीं है।... ईश्वर पर उसे विश्वास नहीं, शायद उसने ईश्वर के विषय में सोचा तक नहीं।'' अपने जीवन के दृष्टिकोण के सम्बन्ध में वह स्वयं स्पष्ट करता है-

''यौवन का अन्त है एक अज्ञान अन्धकार और उस अज्ञात अन्धकार के गर्त में क्या छिपा है। वहन तो मैं जानता हूँ औरन जानने की इच्छा ही है। भूत और भविष्य, ये दोनों कल्पना की चीजें हैं, जिनसे हमको कोई प्रयोजन नहीं। वर्त्तमान हमारे सामने है।''

इस प्रकार बीजगुप्त के चरित्र के कुछ अंश दृष्टिगोचर होते हैं। सारांशत: कहा जा सकता है कि वह 'खाओ, पीओ और मौज करो के सिद्धान्त को

अपनाने वाला पुरुष है। वह उपन्यास की नायिका चित्रलेखा के प्रेम में डूबा हुआ है। फिर भी वह अनुभवी, ज्ञानी, तथा स्वच्छ हृदयवाला इंसान है और है उदार। अत: चित्रलेखा कहती है- ''बीजगुप्त! तुम पुण्य हो, तुम मनुष्य नहीं हो देवता हो।'' इसालिए तो मृत्युंजय अपनी बेटी यशोधरा का विवाह बीजगुप्त से कराना चाहता है। उसका व्यक्तित्व ही गरिमा मंडित है। वह अनन्य प्रेमी है, आदर्श प्रेमी है। वह चित्रलेखा से प्रेम करता है। प्रेम के सम्बन्ध में वह चित्रलेखा से कहता है - ''चित्रलेखा! तुम भूलती हो प्रेम का सम्बन्ध आत्मा से है, प्रकृति से नहीं। वस्तु का प्रकृति से सम्बन्ध है वह वासना है, क्योंकि वासना का सम्बन्ध शरीर से है। ... प्रेम आत्मा से होता है, शरीर से नहीं।''

चित्रलेखा जब कुमारगिरि के आश्रम चली जाती है तो वह अशान्त हो जाता है। अब वह यशोधरा से विवाह करना चाहता हैं, किन्तु जब उसे पता लगता है कि यशोधरा और श्वेतांक एक दूसरे को चाहते है तो स्वयं यशोधरा से विवाह नहीं करता, श्वेतांक को दत्तक पुत्र मानकर उसे अपना सारा धन अर्पित कर देता है जिससे उन दोनों का विवाह हो सके। क्या चमत्कार है उसके नाटकीय व्यक्तित्व का!

अन्त में चित्रलेखा कुमारगिरि के प्रेम की उपेक्षा करके पुन: बीजगुप्त के पैरों पर गिरकर क्षमा याचना करती है तो उसे क्षमा करते हुए शालीनता के साथ वह कहता हैं - ''प्रेम स्वयं एक त्याग है, विस्मृति है, तन्मयता है। प्रेम के प्रांगण में कोई अपराध नहीं होता, फिर क्षमा कैसी?

श्वेतांक को सारी सम्पति देने के बाद वह चित्रलेखा के साथ एक त्यागी की भॉति अन्यत्र चला जाता है शान्ति की खोज में। उसका क्या प्रशंसनीय कार्य-कलाप है! ऐसे चरित्र को पलायनवादी नहीं कहकर संतोषी, त्यागी तथा 'परोपकाराय पुण्याय' की साकार मूर्ति कहें तो अधिक तर्कसंगत होगा। सचमुच ''बीजगुप्त रागी होते हुए भी विरागी है, भोगी होते हुए योगी, महान् त्यागी एवं आदर्श प्रेम-पुजारी है।''

- *योगी कुमारगिरि :* चित्रलेखा उपन्यास में योगी कुमारगिरि का चरित्र बड़ा ही रोचक तथा रोमांचक है। वह भी परिस्थिति का दास बन गया है। वह महाप्रभु रत्नाम्बर का शिष्य है। उसके विषय में महाप्रभु रत्नाम्बर कहते हैं- ''कुमारगिरि योगी है, उसका दाबा है कि उसने संसार की समस्त वासनाओं पर विजय पर ली है। संसार से उसको विरक्ति है, और अपने मतानुसार उसने सुख को भी जान लिया है, उसमें तेज है और प्रताप है; उसमें शारीरिक बल है और आत्मिक बल है।''

योगी कुमारगिरि विद्वान है ओर है तार्किक। इसलिए तो उनकी तर्कशक्ति के सामने चन्द्रगुप्त, चाणक्य तथा विद्वत् वर्ग चकित रह जाते हैं। नारी के विषय में उसकी धारणा अच्छी नहीं है- ''मैंने इस कुटी में स्त्री को आश्रय देने में संकोच किया था। यह इसलिए कि स्त्री अन्धकार है, मोह है, माया है और वासना है। ज्ञान के आलोकमय संसार में स्त्री का कोई स्थान नहीं है।''

कुमारगिरि को अपनी साधना और संयम-शक्ति पर विश्वास है। यही अहंकार उसे डुबा देता है। उसके चारित्रिक पतन के कारण परिस्थितियाँ ही हैं । वासना की भूख मिटाना उसका उद्देश्य नहीं था लेकिन परिस्थितियों के चक्कर में वह वासना का शिकार होकर पथ भ्रष्ट हो जाता है। अर्थात् जब चित्रलेखा उसके आश्रम में जाती है तो उसके सम्पर्क में आते ही वह चित्रलेखा के सौन्दर्य जाल में फँसकर उससे वासनात्मक सम्बन्ध स्थापित कर लेता है। अर्थात् योगी भोगी होकर कर्तव्यच्युत हो जाता है। यह उसकी चारित्रिक दुर्बलता है। छल-कपट के फेर में वह भी चित्रलेखा के समान छली बन जाता है। उसकी दमित काम-पिपासा उग्र हो जाती है और वह भ्रष्ट हो जाता है। उसका आत्मिक ज्ञान और पांडित्व धराशायी हो जाता है।

अत: योगी कुमारगिरि सहानुभूर्ति का पात्र है।



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 8 : रिक्त स्थानों की पूर्ति करें -

(क) हमने पाप करते हैं औरन .....

(ख) मनुष्य अपना स्वामी नहीं है,..... विवश है।

6.4.3 कथोपकथन

कथोपकथन कथानक को विकासित करते हैं साथ ही पात्रों के चरित्र पर भी प्रकाश डालते हैं । अत: पात्रों के स्वभाव के अनुसार ही कथोपथन होते हैं। चित्रलेखा उपन्यास के कथोपकथन पात्रानुकूल हैं नाटकीय हैं तथा हैं सरस। तार्किक एवं दार्शनिक विषय सम्बन्धी संवाद यत्र-तत्र लम्बे हैं तथा दार्शनिकता से पूर्ण, फिर भी खटकते नहीं। क्योकि वे विषयानुकूल तथा जीवन्त हैं। इस उपन्यास के संवाद सामान्यत: स्वाभाविक, सरल, छोटे और मनोरम हैं जो पाठक को मुग्ध कर देते हैं। यथा - चित्रलेखा का प्रेम सम्बन्धी अनुभव - ''प्रेम आत्मा के पबित्र सम्बन्ध को कहते हैं। प्रेम में कम्पन होता है, पिपासा होती है, आत्म विस्मरण होता है।''

यदा-कदा सूक्ति शैली का प्रयोग दृष्टव्य है -

(1) ''अनुभव और विश्वास के बिना मनुष्य को ज्ञान प्राप्त करना असम्भव है।''

(2) ''आवेश में आकर मनुष्य भले और बुरे का ज्ञान खो बैठता है।''

स्वाभाविकता, संक्षिप्ता, नाटकीयता और प्रवाहमयता सफल कथोपकथन की विशेषताएं हैं। इस दृष्टि से भी चित्रलेखा उपन्यास सफल मालूम पड़ता है। कथोपकथन पात्र, परिस्थिति और प्रसंग के अनुकूल होने से उपन्यास में कथा प्रवाह तीव्र हुआ है और हृदयग्राही भी जैसे- - ''श्वेतांक ने पूछा - ''और पाप!''

महाप्रभु रत्नाम्बर मानो गहरी निद्रा से चौंक उठे। उन्होंने उसकी की ओर एकबार बड़े ध्यान से देखा - ''पाप? बड़ा कठिन प्रश्न है वत्स! पर साथ ही बड़ा स्वाभाविक! तुम पूछने हो पाप क्या है?''

इस तरह के अनेक मनोरम, रसपूर्ण तथा नाटकीय कथोपकथन उपन्यास को माधुर्यपूर्ण एवं गतिशील कर रहे हैं। इस दृष्टि से भी यह उपन्यास स्तरीय कहा जा सकता है।

6.4.4 वातावरण

किसी भी उपन्यास में वातावरण का विशेष महत्व है। स्वाभाविकता में चार-चॉद लगाने के लिए उपयुक्त वातावरण की अवतारणा की जाती है। इससे सजीवता की श्रीबृद्धि होती है। आलोच्य उपन्यास का वातावरण विषयानुकूल है और है प्रभावित करने वाला। उपन्यास में बिशेष रूप से जब आश्यकतानुसार ऐतिहासिक वातावरण की सृष्टि की गई है तो वह मनमोहक है - चन्द्रगुप्त और चाणक्य के द्वारा महायज्ञ का निपुणाता से उल्लेख किया गया है। उसी तरह बीजगुप्त और उसका भव्य भवन, चित्रलेखा का केलिगृह, गुरुकुल शिक्षा-पद्धति, तत्कालीन संगीत- नृत्य और स्थापत्य कला का वर्णन, मदिरा पान, वैभव-विलास आदि का सजीव वातावरण प्रस्तुत किया गया है जो सराहनीय है। इसी तरह उस समय के खान-पान, उत्सव राज सभा में विद्वानों के तर्क-वितर्क आदि के सुन्दर वातावरणों से चित्रलेखा उपन्यास सुसाज्जित है।

रत्नाम्बर के द्वारा बीजगुप्त के सामन्तीय वातावरण का दृश्य कितना सजीव है - ''और श्वेतांक! बीजगुप्त भोगी है, उसके हृदय में यौवन की उमंग है और आखों में मादकता की लाली।''

''उसकी विशाल अट्टालिकाओं में भोग विलास नाचा करते हैं, रत्नाजड़िन मदिरा के पात्रों में ही उसके जीवन का सारा सुख है। वैभव और उल्लास की तरंगों में

वह केलि करता है, ऐश्वर्य की उसके पास कमी नहीं है। उसमें सौंदर्य है, और उसके हृदय में संसार की समस्त वासनाओं का निवास। उसके द्वार पर मतगं झूमा करते है, उसके भवन में सौंदर्य के मद से मतवाली नर्तकियों का नृत्य हुआ करता है।'' इस तरह अनेक स्थल उद्धृत किए जा सकते हैं।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि देशकाल और वातावरण के चित्रण में मी आलोच्य उपन्यास प्रशंसनीय है।

6.4.5 भाषाशैली

चित्रलेखा की लोकप्रियता का मुख्य कारण उसकी भाषा शैली है। प्रसंग के औचित्य के अनुसार यहॉ अनेक शैलियों का प्रयोग किया गया है जिनमें मुख्य हैं: वर्णनात्मक शैली, विश्लेषणात्मक शैली, भावात्मक शैली, नाटकीय शैली, आलंकारिक शैली आदि। इनमेंसे प्रत्येक शैली का प्रयोग अपने आप में प्रशंसनीय है। सम्राट चन्द्रगुप्त के प्रांगण में नृत्य के लिए खड़ी चित्रलेखा का आंलकारिक एवं काव्यात्मक वर्णन ध्यान देने योग्य है: ''...उसका मुख पूर्णिमा के चन्द्रमा की भॉति था और उसकी लहराती हुई वेणी नाग की भॉति थी, जो विष से त्रस्त होकर चन्द्रमा से उसका अमृत छीनने को उससे लिपट गया था। वेणी में गूँथे हुए मुक्ता जाल इस प्रकार शोभित हो रहे थे, मानो चन्द्रमा को संकट में देखकर तारावलि पंक्ति में बंध काले नाग से भिड़ गई थी।''

वर्णनात्मक शैली का प्रयोग -- ''महायज्ञ में अभिमंत्रित धूम्र से सुवासित राजप्रासाद के विशाल प्रांगण में सम्राट यन्द्रगुप्त मौर्य अतिथि आसीन थे। रत्नजटित स्वर्ण के राज सिंहासन पर महाराज विराजमान थे और उनका मुख पूर्व की ओर था। उनके दक्षिण की ओर क्रम से यथा योग्य विशाल साम्राज्य के आंमत्रित सामन्तगण बैठै थे और वाम पार्श्व में राज्य के प्रधान कर्मचारी थे।''

6.4.6 भावात्मक शैली

''नहीं मेरे देवता! मेरे शरीर को आप स्पर्श न करें। मैं अपवित्र हूँ, पतिता हुँ। पापिनी हूँ। मेरे देवता! चलिए आप मेरे भवन को चलिए मुझे पवित्र कीजिए, अपने शाप की अग्नि में तपाकर आप मुझे पवित्र कीजिए।''

भाषा में दार्शनिकता : ''सृष्टि शक्ति है। वह सृष्टि है, यदि उसे संचालित करने वाला व्यक्ति योग्य है। वह विनाश है, यदि उसे संचालित करनेवाला व्यक्ति अयोग्य है।''

इसी तरह अन्य उदाहरण : ''विराग मनुष्य के लिए असम्भव है। क्योंकि विराग नकारात्मक है। विराग का आधार शून्य है, कुछ नहीं है। जीवन का कार्यक्रम है रचनात्मक, विनाशात्मक नहीं। मनुष्य का कर्त्तव्य है अनुराग, विराग नहीं।''

अत: स्पष्ट हैकि चित्रलेखा उपन्यास भाषाशैली की दृष्टि से भी एक सफल उपन्यास है। यत्र-तत्र भाषा जटिल जरूर हो गई है किन्तु प्रसंग की जटिलाता के अनुसार ही ऐसा प्रयोग किया गया है। इस उपन्यास की भाषा शैली पात्रोनुकूल है, भावानुकूल है और है प्रसंगानुकूल एवं प्रशंसनीय।

- लक्ष्य : ऐसा माना जाता है कि लक्ष्य या उद्देश्य में ही रचनाकार का मन्तव्य प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से गुम्फित रहता है। इस दृष्टि से यदि हम विबेचन करते हैं तो पाते हैं कि चित्रलेखा उपन्यास का लक्ष्य प्रत्यक्षत: पाप और पुण्य की समस्या को हल करना है। किन्तु अप्रत्यक्ष रूप से प्रेम के विविध रूप पर प्रकाश भी डालना है जो यदा कदा परिस्थिति विशेष में परिवर्तित भी हो सकता है। अर्थात् परिस्थिति या भाग्यवाद या नियतिवाद को मुख्य माना गया है। महाप्रभु रत्नाम्बर के द्वारा उपन्यासकार ने कहलबाया है कि संसार में पाप-पुण्य कुछ भी नहीं है। वह तो दृष्टिकोण और परिस्थितियों का परिणाम है। संक्षेपत: उपन्यास का उद्देश्य यही है - ''मनुष्य अपना स्वामी नहीं है, वह परिस्थितियों का दास है, विवश है। वह कर्ता नहीं है, वह केवल साधन है। फिर पाप और पुण्य कैसा? ... संसार में इसलिए पाप की परिभाषा नहीं हो सकी है और न हो सकती है। हम न पाप करते हैं और न पुण्य करते हैं। हम केवल वह करते हैं जो हमे करना पड़ता है।''

  उक्त सिद्धान्त से अनेक विचारक सहमत नही भी हो सकते हैं किन्तु इसमें दम है ओज है और अपना एक आकर्षण है।



6.5 प्रस्तुत अध्याय से हमने सीखा

- चित्रलेखा उपन्यास के उपन्यासकार भगवतीचरण वर्मा के व्यक्तित्व एवं कृतित्व के विषय में।
- चित्रलेखा की कथावस्तु तथा जीवन दर्शन।
- चरित्र-चित्रण, कथोपकथन, वातावरण, भाषा शैली तथा उपन्यास के लक्ष्य के सम्बन्ध में।
- चित्रलेखा उपन्यास में पाप और पुण्य की समस्या पर प्रकाश डाला गया है।
- दमित काम-वासना परिस्थिति विशेष में उभर सकती है।
- परिस्थिति के कारण प्रेम के रूप में परिवर्तन हो सकता है।

- मनुष्य अपना स्वामी नहीं है, वह परिस्थितियों का दास है, विवश है। वह कर्ता नहीं है, वह केवल साधन है। फिर पाप और पुण्य कैसा?
- ''... संसार में इसलिए पाप की परिभाषा नहीं हो सकी है और न हो सकती है। हम न पाप करते हैं और न पुण्य करते हैं। हम केवल वह करते हैं, जो हमे करना पड़ता है।''
- उक्त सिद्धान्त से अनेक विचारक सहमत नहीं भी हो सकते हैं। फिर भी इसमें एक चमत्कार है, एक शक्ति है।



6.6 विस्तृत जानकारी हेतु पढ़े

1) रामदरश मिश्र : *हिन्दी उपन्यास*
2) गोपाल राय : *हिन्दी उपन्यास का इतिहास*
3) राजराणी शर्मा : *हिन्दी उपन्यासों में रुढ़िमुक्ति नारी*
4) राज योगी ब्रह्मकुमार : *महिला सशक्तीकरण*
5) निरुपमा सेवती : *खामोशी को पीते हुए*

6.7 स्वनिरीक्षण का पुनर्निरीक्षण

प्रश्नोत्तर 1 : उत्तरप्रदेश के उन्नाव जिले के शफीपुर तहसील में।
प्रश्नोत्तर 2 : मैथिलीशरण गुप्त
प्रश्नोत्तर 3 : गलत
प्रश्नोत्तर 4 : सही।
प्रश्नोत्तर 5 : पाप और पुण्य पर।
प्रश्नोत्तर 6 : क्योंकि वह परिस्थितियों का दास है – विवश है।
प्रश्नोत्तर 7 : शेतांक को।
प्रश्नोत्तर 8 : पुण्य करते हैं।
प्रश्नोत्तर 9 : वह परिस्थितियों का दास हैं।



6.8 सम्भावित प्रश्न

प्रश्न 1 : चित्रलेखा उपन्यास की कथावस्तु की विवेचना कीजिए।

प्रश्न 2 : औपन्यासिक तत्वों के आधार पर चित्रलेखा उपन्यास की समीक्षा कीजिए।

प्रश्न 3 : ''चित्रलेखा समस्या प्रधान उपन्यास है।'' इस कथन की सार्थकता सिद्ध कीजिए।

प्रश्न 4 : 'चित्रलेखा' उपन्यास के शीर्षक की सार्थकता पर प्रकाश डालिए।

प्रश्न 5 : चित्रलेखा उपन्यास में प्रेम को कैसे प्रदर्शित किया गया है? स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न 6 : 'मनुष्य परिस्थितियों का दास है।' चित्रलेखा उपन्यास के आधार पर इस उक्ति की व्याख्या करें।

प्रश्न 7 : देश-काल एवं वातावरण की दृष्टि से चित्रलेखा उपन्यास की समीक्षा कीजिए।

प्रश्न 8 : चित्रलेखा उपन्यास में चित्रित जीवन-दर्शन का विवेचन कीजिए।

प्रश्न 9 : भाषा-शैली की दृष्टि से चित्रलेखा उपन्यास का विश्लेषण कीजिए।

प्रश्न 10 : चित्रलेखा उपन्यास का उद्देश्य क्या है? स्पष्ट करें।

प्रश्न 11 : चरित्र-चित्रण कीजिए -

चित्रलेखा, बीजगुप्त, योगी कुमारगिरि तथा श्वेतांक।

*** ***** ***

इकाई 7 : प्रेमचन्द : ठाकुर का कुआं

इकाई की रूपरेखा

7.1 उद्देश्य

7.2 प्रस्तावना

7.3 प्रेमचन्द

7.3.1 जीवन दर्शन एवं साहित्य

7.3.2 ठाकुर का कुआं - कहानी

7.3.3 प्रतिपाद्य विषय की समीक्षा

7.4 प्रस्तुत अध्याय से हमने सीखा

7.5 विस्तृत जानकारी हेतु पढ़ें

7.6 स्वनिरीक्षण का पुनर्निरीक्षण

7.7 सम्भावित प्रश्न

7.1 उद्देश्य

प्रस्तुत अध्याय में आप सीखेंगे-

- इस इकाई के माध्यम से प्रेमचन्द रचित मार्मिक कहानी - 'ठाकुर का कुआं' का विवेचन किया जाएगा
- दलित समुदाय की आह, व्यथा तथा विवशता का चित्रण किया जाएगा
- जाति प्रथा की कुरूपता तथा अस्पृश्यता के कारण समाज में असमानता एवं जाति विशेष के आक्रोश पर प्रकाश डाला जाएगा
- दलित समाज की दमनीय दशा का वर्णन किया जाएगा।
- हिन्दी साहित्य के महान कहानीकार प्रेमचन्द के जीवन-दर्शन और साहित्य का विहगावलोकन किया जाएगा
- अब ऐसा युग आ गया है कि हमें छुआछूत तथा जाति प्रथा की कट्टरता को समाप्त करने में सहयोग करना चाहिए। इसी उद्देश्य से 'ठाकुर का कुआं' कहनी का अध्ययन करना चाहिए

7.2 प्रस्तावना

इस इकाई में हम हिन्दी साहित्य के उपन्यास तथा कहानी सम्राट प्रेमचान्द के व्यक्तित्व एवं कृतित्व के द्वारा उनके जीवन-दर्शन से परिचय प्राप्त कर सकते हैं। प्रेमचन्द विश्व के प्रथम श्रेणी के उपन्यासकार तथा कहानीकार हैं। किसानों, दलितों, गरीबो, मजदुरों, अछूतों के प्रति

उनका हार्दिक लगाव था। वे साम्प्रदायिकता के छोर विरोधी थे तथा गाँधीवादी सिद्धान्त से समाज और देश कर विकास चाहते थे। वे छूआछूत, अन्धविशास, बाल विवाह, अनमेल विवाह, पर्दा प्रथा आदि कुप्रथाओं के विरोधी थे। स्त्री-शिक्षा एवं उसके विकास के लिए भी चित्रित रहते थे। उन्होने अपने जीवन मे बहुत संघर्ष किया, मुसीबतों का सामना किया, फिरभी प्रगति पथ पर अग्रसर होते गए। संसार के श्रेष्ठतम साहित्यकार में उनका नाम आदर से लिया जाता है। सचमुच प्रेमचन्द कालजयी साहित्यकार हैं।

7.3 प्रेमचन्द

हम वैश्यीकरण के युग में जीवन वसरं करते हैं। सम्पूर्ण संसार 'विश्व-गाँव' के रूप में परिवर्तित होने जा रहा हैं। इस प्रौद्दोगिक युग में भी दलित समस्या मात्र समाज तथा सरकार के लिए ही नहीं, अपितु साहित्य के लिए भी ज्वलन्त समस्या है। इस पर सभी विसेकशील महनुभाव प्रहार तो करते हैं फिर भी इस समस्या का पूर्ण समाधान नहीं हो पाया है। यही कारण है कि आज दलित साहित्य लोकप्रिय हो गया है। यदा-कदा यह प्रश्न किया जाता है कि दलति किसे कहें? इस सम्बन्ध में डॉ. सुमाष चन्द्र ने अपनी पुस्तक - 'दलित भुक्ति आन्दोलन सीमाएँ और संभानएँ' में तार्किक परिभाषा दी है- ''दलित एक ऐसा विशिस्ट वर्ग है जो शेषण की समस्याओं को झलते हुए अपनी मुक्ति के लिए संघर्ष कर रहा है।''

दलित लेखकों की दृष्टि में दलित साहित्य दलित मुक्ति आंदोलन का एक आयाम है - जो एक ओर दलित समाज में सदियों के अन्याय, शोषण और असमानता के प्रतिकार की चेतना का संचार करता है वहीं गैर दलित समाज की संवेदना को झकझोर कर उसे अपने 'स्व' का परीक्षण करने के लिए प्रेरित करना है।

इतने महत्वपूर्ण आधुनिक विषय को प्रेमचन्द ने बहुत पहले उजागर किया। यही उनकी दूरदर्शिता है ओर है संवेदनशीलता। हिन्दी साहित्य में प्रेमचन्द, नागार्जुन निराला और राहुल सांकृत्यायन आदि ने दलित जीवन की कारूणिक कथा को साकार किया। 'ठाकुर का कुआं' इसी कड़ी की एक लड़ी है। ऊँची जाति के लोग (ठाकुर) अछूतों को फटकारते रहते हैं, अनेक तरह से मानसिक तथा शारीरिक यंत्रणा देते हैं और पीने का पानी तक देने से हिचकते हैं। यह कहानी अछूतों जो मानव अधिकारों से वंचित हैं उसकी त्रासदी का हृदय स्पर्शी वर्णन करती है जिसे पढ़ते ही मन विचलित हो जाता है। अछूतों एवं दलितों को अभी भी पानी की समस्या से जूझना पड़ता है। इनकी आर्थिक स्थिति अत्यन्त दमनीय है। अन्धविश्वास तथा आशिक्षा से इनका घना सम्बन्ध है। माना जाता है कि हमारे देश में दलितों की संख्या बहुत अधिक है। फिर भी इन्हें हम राष्ट्र की मुख्य धारा में अन्दर क्यों नहीं समायोजित करते? यह कहानी परोक्ष रूप से हमें सन्देश देती है कि समता, स्वतंत्रता तथा बन्धुत्व की भावना से इन्हें हम उपकृत करें। यही समय की मांग है।



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 1 : निम्नलिखित वाक्य में सही अथवा गलत की पहचान करें-

(क) ऊँची जाति के लोग अछूतों को पानी देते हैं।

(ख) हम अछूतों तथा दलितों के साथ अच्छा व्यवहार करते हैं।

.....

7.3.1 जीवन-दर्शन एवं साहित्य

प्रेमचन्द के विषय में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का मंतव्य युक्तिसंगत है - ''अगर आप उत्तर भारत की समस्त जनता के आचार-विचार, भाषा-भाव, रहन-सहन, आशा-आकांक्षा, सुख-दुख और सूझ-बूझ को जानना चाहते हैं तो प्रेमचन्द से उत्तम परिचायक आपको नहीं मिल सकता।''

विश्व प्रसिद्ध रचनाकार प्रेमचन्द का आविर्भाव हिन्दी साहित्य के लिए वरदान तुल्य था। उनका जन्म सन् 1880 ई. में बारणसी के समीप लामही नामक गॉव में हुआ। इनका परिवार मध्यमवर्गीय था। इनके पिता का नाम- मुंशी अजायब लाल था। परिवार की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी। पिता डाकखाने में लिपिक डाक मुंशी थे।

प्रेमचन्द का बाल्यकाल सुखद नहीं रहा। जब वे सात साल के थे तभी इनकी माता का स्वर्गवास हो गया। विमाता आ गई। तभी से मानसिक क्लेश शुरु हो गया। १५ वर्ष की अवस्था में इनका विवाह हो गया किन्तु दाम्पत्य जीवन भी सुखद नहीं रहा। प्राय: एक वर्ष के बाद ही पिता का देहान्त हो गया। अब परिवार का भार इन पर आ गया। वे अर्थाभाव से परेशान रहते थे। फिरभी उच्च शिक्षा प्राप्त करने की अभिलाषा बहुत अधिक थी। फलत: काशी में नाम लिखाया और पढ़ने लगे। इससे पूर्व इनके पिता ने इन्हें उर्दू की शिक्षा दिलायी थी। नवीं कक्षा तक आते-आते इन्हें 'ट्यूशन' का सहारा लेना पड़ा। रोज प्रात: पॉच-छ: मील पैदल चलकर शहर पहुॅचते, पढ़ाई के बाद ट्यूशन करते और पैदल ही घर लौतते थे। इस कष्टप्रद एवं संघर्षपूर्ण परिस्थिति में इन्होंने मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की। इण्टर में गणित की अनिवार्यता के कारण इन्हें असफल होना पड़ा। जब गणित ऐच्छिक विषय हो गया तब को येन-केन-प्रकारेण इण्टर की परीक्षा में सफल हो गए। बाद में (प्राइवेट) स्वतंत्र परीक्षार्थी के रूप में इन्होंने बी.ए. की परीक्षा भी उत्तीर्ण की। आर्थिक अभाव के कारण इन्हें यदा-कदा महाजानों से रु. उधार लेना पड़ता था जिनसे इन्हें कटु एवं निर्मम व्यवहार का सामना भी करना पड़ता था।

प्रेमचन्दजी की प्रिय आजीविका अध्यपन था। कई विद्यालयों में अध्यापन कार्य किया। एक समय ऐसा भी आया जब वे सरकारी सेवा में 'सब-डिप्टी इन्सपेक्टर' के पद पर कार्य करने लगे। इस पद पर रहते हुए उन्होंने अनेक स्थानों का भ्रमण किया और समाज के आहार-व्यवहारों का सूक्ष्म निरीक्षण किया।

सन् 1920 ई. में गॉधी जी जब गोरखपुर पहुॅचे तो उस समय प्रेमचन्द वहाँ डिप्टी इंस्पेक्टर' थे। वे गाँधी जी के विचारों से इतने प्रभावित हुए कि तुरन्त सरकारी नौकरी से त्यागपत्र दे दिया और स्वतंत्र लेखन की और गतिशील हो गए। इसके बाद इनकी सारस्वत साधना तीव्र गति से अग्रसर हो गई। विपरीत परिस्थिति में भी आगे बढ़ते रहना उनका स्वभाव था।

प्रेमचन्द के बचपन का धरेलू नाम 'नवाब' राय और औपचारिक नाम 'धनपति राय' था। वे जिस युग में पैदा हुए वह पुनजगिरण, सामाजिक और राष्ट्रीय चेतना के विकास का युग था। विश्वास किया जाता है कि आरंभ में प्रेमचन्द पर भी आर्य समाज का गहरा प्रभाव पड़ा। उस समय आर्य समाज देश में जातिभेद, छुआछूत आदि का विरोध करता था तथा विधवा-विवाह के पक्ष में प्रचार कर रहा था। वह अन्धविशस तथा आदिम्बर पर प्रहार करते हुए देश-प्रेम का दीपक जला रहा था। अत: माना जाता है कि इसका प्रभाव प्रेमचन्द पर भी पड़ा। इसके अतिरिक्त विश्व प्रसिद्ध लेखक टॉलस्टाय से भी उन्होंने प्रेरणा ग्रहण की। टॉलस्टाय के साहित्य के मनन करने से उन पर सत्य, अहिंसा, कर्मठता, मानव प्रेम आदि श्रेष्ठ विचारों की छाप पड़ी। शायद गाँधीजी, टॉलस्टाय तथा आर्य समाज के प्रभाव के कारण प्रेमचन्द में 'सादा जीवन उच्च विचार' का पल्लवित रूप देखने की मिलता है। इन्हीं सब कारणों से वे दीन-दुखी, किसान, दलित, नारी एवं अछूतों के प्रति अतिशय सहानुभूति रखने लगे तथा उनकी जीवन-दशा सुधारने के लिए दत्रचित्र हो गए।

उनका व्यक्तित्व राष्ट्रीय चेतना से ओत-प्रोत था और था विशुद्ध भारतीयता से मण्डित। देश-प्रेम उनके स्वभाव का अभिन्न हिस्सा था। एकबार उन्होंने बनारसी दास चतुर्वेदी को पत्र में लिखा - ''इस समय तो सबसे बड़ी आकांक्षा यही है कि हम स्वराज्य संग्राम में विजयी हों। धन या यश की लालसा मुझे नहीं रही। खाने भर को मिल जाता है। मोटर-बंगले की मुझे हवस नहीं है। हाँ यह अवश्य चाहता हुँ दो-चार ऊँची कोटि की पुस्तकें लिखूं, पर उनका उद्देश्य भी स्वराज्य-विजय ही हो।''

प्रेमचन्द साहित्य को उद्देश्य परक मानते थे और अपने साहित्य को इनहोंने वैसा ही किया। ऊन्होंने स्वीकार किया है- ''हमारी कसौटी पर वही साहित्य खरा उतरेगा, जिसमें उच्च चिन्तन हो, स्वाधीनता का भाव हो, सौंदर्य का सार हो, सृजन की आत्मा हो, जीवन की सच्चाइयों का प्रकाश हो जो हमे गति, और वेचैनी पैदा करे, सुलाए नहीं अब और ज्यादा सोना मृत्यु का लक्षण हो।'' एक जगह और उन्होंने

साहित्यकार के लक्षण के विषय में कहा है – ''साहित्यकार का लक्ष्य केवल महफिल सजाना और मनोरंजन का सामान जुटाना नहीं है– उसका दरजा इतना न गिराइए। वह देशभक्ति और राजनीति के पीछे चलनेवाली सच्चाई भी नहीं, बाल्कि उसके आगे मशाल दिखाती हुई चलनेवाली सच्चाई है।''

प्रेमचन्द युग प्रतिनिधि साहित्यकार माने जाते हैं। उनका जीवन दर्शन उनके साहित्य में मुख्य रूप से मुखरित हुआ है। राष्ट्रीय और सामाजिक आन्दोलन, राष्ट्र–प्रेम हिन्दू–मुस्लिम एकता, अनमेल विवाह, वेश्या–उद्धार, ग्राम सुधार, आर्थिक शोषण, छुआ–छूत, विधवा विवाह, संयुक्त परिवार की समस्याएं, कलह और उलझनें, पुलिस के हथकण्डे, सूदखोरी, मुकदमेबाजी, मद्य विरोध, अंग्रेज शासकों की हृदय हीतना, कृषकों की निर्घनता, दलित समाज की व्यथा, समाज के ढ़ोंगियों का पर्दाफाश, सत्याग्रह सांगठणिक क्षमता आदि की यथार्थ स्थिति को प्रतिफलन उनके साहित्य में विद्यमान है। अत: कहा जा सकता है कि उका जीवन दर्शन संकुचित नहीं, अत्यधिक व्यापक है जिसमें सारा युग समाविष्ट है और सत्यं, शिवं, सुन्दरं की त्रिवेणी है। अत: वे युग द्रष्टा हैं, युग स्रष्टा हैं, युग नायक हैं। सचमुच वे साहित्य के गाँधी हैं। किसी विद्वान ने ठीक हि कहा हैं– ''प्रेमचन्द का साहित्य आधुनिक युग का सामाजिक और राजनीतिक इतिहास है। वे हिन्दी कहानी तथा उपन्यास साहित्य के प्रथम युगान्तकारी साहित्यकार हैं, जिन्होंने न केवल हिन्दी साहित्य में मौलिकता और नवीनताका रस संसार किया, बल्कि जन–जीवन को प्रबुद्ध और जागरूक बनाने का पूर्ण प्रयास भी किया, उन्हें पूरी सफलता मिली।''

उनका जीवन दर्शन किसी दल विशेष में आवद्ध नहीं था। वे साम्राज्यवादी सिद्धान्त को पसंद नहीं करते थे। 1936 ई. के सितम्बर के 'हंस' पत्रिका के अंक में उनका एक लेख प्रकाशित हुआ था जिसमें उन्होंने स्वीकार किया है– ''इस महाजनी सभ्यता में सारे कामों की गरज महज पैसा है। किसी देश पर राज्य किया जाता है, तो इसलिए कि महाजनों पूँजीपतियों का ज्यादा से ज्यादा नफा हो। इस दृष्टि से मानों आज महाजनों का ही राज्य है। मनुष्य समाज दो भागों में बँट गया है। बड़ा हिस्सा मरने और मरनेवालों का है, और बहुत छोटा हिस्सा उन लोगों का है– जो अपनी शक्ति और प्रभाव से बड़े समुदाय को अपने बस में किये हुए हैं।'' आगे वे उस पत्र में कहते हैं – ''जिसके पास पैसा है, वह देवता स्वरूप है, उसका अन्त:करण कितना ही काला क्यों न हो। साहित्य, संगीत और कला सभी धन की देहली पर माथा टेकने वालों में हैं। यह हवा इतनी जहरीली हो गयी है कि इसमें जीवित रहना कठिन होता जा रहा है।''

वे मुख्य रूप से किसी भी समस्या का समाधान गाँधीवादी सिद्धान्त के अनुसार निकालने के पक्ष में थे। जमीन और किसान के सम्बन्ध में उनकर विचार बड़ा ही मौलिक और स्पष्ट था। इस सम्बन्ध में 'प्रेमाश्रम' उपन्यास के माया शंकर का

विचार परोक्ष रूप से प्रेम चन्द का ही विचार मालूम पड़ता है जो इस प्रकार है. ''भूमि या तो ईश्वर की है जिसने इसकी सृष्टिकी या किसान की जो ईश्वरीय इच्छा के अनुसार इसका उपयोग करता है। राजा देश की रक्षा करता है इसलिए उसे किसानों से कर लेने कर अधिकार है चाहे प्रत्यक्ष रूप में लो या कोई इससे कम आपत्तिजनक व्यवस्था करे। अगर किसी अन्य वर्ग या श्रेणी को मिल्कियत, जायदाद अधिकार के नाम पर किसानों को भोग्य पदार्थ बनाने की स्वछंयता दी जाती है तो इस प्रथा को वर्तमान व्यवस्था का कलंक समझना चाहिए।''

किसानों के प्रति उनका हार्दिक लगाव था। वे स्वराज्य आन्दोलन को किसानों का ओन्दोलन मानते थे। क्योंकि अग्रेजी राज्य में गरीबों, किसानों, मजदूरों और दलितों की दशा जितनी खराब थी उतनी अन्य की नहीं। अत: ये गरीब किसान यदि संगठित होने लगते हैं तो सरकार तथा जमीदार चौकन्नै हो जाते हैं। अत: उन किसानों तथा मजदूरों को जिन्दा रखने के लिए स्वराज्य आवश्यक है।

वे साम्प्रदायिकता के घोर विरोधी थे। नवजागरण युग नारी उत्थान के लिए प्रयत्नशील था। इसे प्रेमचन्द अन्तरतन से चाहते थे। वे विधवा विवाह के पक्ष में थे और स्वंय उहोंने एक विधवा से विवाह किया। वे बाल विवाह, बृद्ध विवाह, अनमेल विवाह, पर्दा प्रथा आदि के विरोधी थे। सदा स्त्री-शिक्षा के पक्ष में विचार व्यक्त करते थे।

प्रेमचन्द दलितों की दषनीय दशा से क्षुब्ध थे और उसे दूर करने के लिए अपनी रचनाओं में उसके विभीत्स रूप को मुखरित करते थे। छुआछूत को वे पाप समझते थे तथा मानव अधिकार के विरुद्ध मानते थे। 'ठाकुर का कुआं', 'दूध का दाम', 'मुक्ति मार्ग' आदि कहानियों में उनकी दलित संवेदना का सृजनात्मक रूप साकार हुआ है जो सहृदय पाठक को शोकाकुल बना देता है।



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 2 : प्रेमचन्द साहित्य के किस रूप को पसंद करते थे?

.....

प्रश्न 3 : प्रेमचन्द का जन्म कहाँ हुआ था?

.....

हिन्दी साहित्य के इतिहास में सर्वप्रथम महान साहित्यकार प्रेमचन्द ही हुए जिन्होंने पहलीबार भारतीय आध्यात्मिक परम्परा से हटकर समाज के दीन-दु:खी, किसान, मजदूर, शोषित नारी तथा दलितों को महत्वपूर्ण स्थान देकर अपनी मौलिक प्रतिभा का प्रदर्शन किया। हिन्दी कथा साहित्य कल्पना लोक से उतर कर यथार्थ के

धरातल पर अवतीर्ण हुआ। हमारे लिए उनका यह आसाधारण अवदान है। वस्तुत: वे सामाजिक जीवन के स्तुत्य साहित्यकार थे। वे टॉलस्टाय और गोर्की की परम्परा की भारतीय कड़ी थे। अत: साधिकार कहा जा सकता है कि वे गोस्वामी तुलसीदास के बाद जनता में सर्वाधिक लोकप्रिय और यशस्वी रचनाकार सिद्ध हुए।

ऐसा माना जाता है कि प्रेमचन्द अपनी आरम्भिक रचना में विशुद्ध आदर्शवाद से प्रोरित थे। कुछ समय के बाद 'आदर्शोन्मुख यथार्थवाद से प्रभावित हुए और अन्त में 'यथार्थवाद' से। 'गोदान' उपन्यास, 'पूस की रात', 'कफन', 'ठाकुर का कुआं' आदि रचनाओं में यथार्थवाद का स्पष्ट भाव परिलक्षित होता है।

प्रेमचन्द ने आरम्भिक लेखन उर्दू भाषा में प्रारम्भ किया। इसमें मुख्यत: उपन्यास और कहानियाँ हैं। बाद में हिन्दी में उन्होंने लिखना आरम्भ किया। हिन्दी में उनके द्वारा रचित उपन्यास कहानियाँ निबन्ध, नाटक, अनुवाद के साथ-साथ संपादन कार्य भी शामिल हैं। उनके द्वारा लिखित उपन्यास ये हैं - सेवा सदन (1918 ई.), प्रेमाश्रम (1922 ई.), रंगभूमि (1925 ई.), कायाकल्प (1926 ई.), निर्मला (1927 ई.), गबन (1931 ई.), कर्मभूमि (1932 ई.), गोदान (1936 ई.), मंगल सूत्र (अधूरा उपन्यास) जो उनके निधन के बाद 1948 ई. में प्रकाशित हुआ।

हिन्दी कहानियाँ : उर्दू को छोड़कर प्रेमचन्द ने करीब दो सौ से उपर कहानियाँ लिखीं। जिनमें ये कहानियाँ अतिशय श्रेष्ठ एवं प्रशंसनीय हैं - सज्जनता का दङ; 'पंच परमेश्वर', 'दो भाई, बूढ़ी काकी, नमक का दारोगा, परीक्षा, शतरंज के खिलाड़ी, ूस की रात, आत्माराम, ठाकुर का कुआं, ईदगाह, कफन आदि। कुछ विद्वान 'कफन' को इनकी सर्वश्रेष्ठ कहानी मानते हैं जो बहु प्रशंसित एवं उल्लेखनीय है।

नाटक : (तीन) - संग्राम (1923 ई.), कर्वला (1924 ई.) तथा प्रेम की बेदी (1933 ई.)

अनुवाद : टॉल्सटॉय भी कुछ कहानियों का अनुवाद, जार्ज इलियट के प्रसिद्ध उपन्यास 'साइलस मारनर' का अनुवाद - 'सुखदास' शीर्षक से, फ्रान्स के उपन्यासकार अनातोले के श्रेष्ठ उपन्यास 'काया' का अनुवाद 'अहंकार' नाम से प्रकाशित है। इसी तरह गॉल्सवर्दी, मॉरिस मेटरलिंक वर्नार्ड शा के नाटक पं. जवाहरलाल नेहरु लिखित- 'फादर्स लेटर्स टु अ डॉटरं का अनुवाद है- पिता का पत्र पुत्री के नाम'। इसके अतिरिक्त कुछ और भी अनुवाद सामीग्री हो सकती है।

निबन्ध : प्रेमचन्द जी लिखित अनेक महत्वपूर्ण निबन्ध तथा टिप्पणियाँ भी हैं।

पत्रकारिता : हिन्दी साहित्य का उल्लेखनीय मासिक पत्र - 'हंस' का संपादन तथा जागरण' नामक साप्ताहिक पत्र का भी संपादन इन्हीं के द्वारा किया गया।

प्रेमचन्द का साहित्य शीशे का तरह पारदर्शी है जन-जीवन की गीता है और

है गंगाजल के समान उद्धारक। आदर्श और यथार्थ के कूल-कछारों के बीच प्रेमचन्द साहित्य-सरिता कल कल छल-छल करती हुई हमें अपने दिव्य संगीत से मोहित करती है।

प्रेमचन्द से पूर्व तिलस्मी-ऐयारी तथा रोमानी प्रभाव से कथा साहित्य लिखा जाता था। प्रेमचन्द ने पहलीबार उपन्यास तथा कहानी को खुली हवा दी, प्रशस्त भूमि प्रदान की। उन्होंने अपनी रचनाओं में शोषित, दलित तथा दीन-दु:खी वर्ग को नायकत्व प्रदान किया और सामाजिक तथा आर्थिक विसंगतियों पर प्रकाश डाला। इनकी रचनाओं में मजदूर, दलित तथा किसानों की व्यथा, नारियों की विवशता और अछूतों की हीन दशा के हृदय स्पर्शी चित्र चित्रित हुए हैं। यह उनकी मौलिकता है, विशेषता है। उनके साहित्य में संपूर्ण मानव समाज की आशा-आकांक्षओं की कहानी चित्रित हुई है। वे सची मानव की एकता, समता तथा स्वाधीनता के लिए जूझते रहे और वकालत करते रहे अभावग्रस्त मानव की। इतना होते हुए भी उनका साहित्य हमें निराशा से बोझिल नहीं करता, अपितु आशा की किरण से दीप्त करता है। उनकी रचना समाजवादी जीवन दर्शन, समन्वयवादी भावना, धर्म निरेपक्षता तथा मानव-प्रेम का उदधोष करती है। उन्होंने अपने साहित्य को अंतस के रस से सिंचित किया है।

यही कारण है कि इसका परिमल हमारे मुरझाते मन को प्रमुदित कर देता है। उनका जीवन एक दीपक के समान था, जो जलकर सबको प्रकाश देता है। ''अपने कथ्य-वैविध्य, विजन, चारित्र सृष्टि, शिल्प और भाषा सभी दृष्टियों से प्रेमचन्द ने हिन्दी उपन्यास (एवं कहानी) के ऐसी ऊँचाई पर पहुँचा दिया जो आज भी एक मानदंड के रूप में स्वीकृत है।'' सचमुच प्रेमचन्द अपनी अंतर्दृष्टि, विलक्षण प्रतिभा, गहरी संवेदना एवं अद्‌भुत चिन्तणशक्ति के कारण हमारे लिए सदा हृदयहार बने रहेंगे।

प्रेमचन्द रचित 'गोदान' उपन्यास हिन्दी साहित्य का सर्वश्रेष्ठ उपन्यास माना जाता हे। इसमें 'ग्रामीण जीवन का चित्र' है किसान-महाजन संघर्ष की छाया है और है 'किसानो' की ऋण समस्या। कुछ विद्वान इसे भारतीय जीवन का चित्रण मानते हैं। जिसमें प्रमुख रूप से भारतीय किसान-मजदूर जीवन की आह और कारुणिक जीवन का सूक्ष्म वर्णन किया गया है। यहाँ का वर्णन-कौशल, तटस्थ और यथार्थ का सरल एवं हृदय स्पर्शी विवरण तथा शैली की विशिष्टता अपने आप में अपूर्व है, अतुलनीय है और है अतिशय प्रशंसनीय।

उनका सर्वश्रेष्ठ उपन्यास 'गोदान' महाकाव्यात्मक उपन्यास है और है विश्वप्रसिद्ध। 'गोदान' सहित उनकी अनेक रचनाओं का विश्व की अनेक भाषाओं में अनूदित किया गया है। वे उपन्यास सम्राट हैं तो कहानी सम्राट भी। उनके जैसे विश्व प्रसिद्ध साहित्यकार मानव समाज के लिए आलोक स्तम्भ के समान हैं।



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 4 : प्रेमचन्द के बचपन के नाम क्या थे ?

.....

7.3.2 ठाकुर का कुआं - कहानी

जोखू ने लोटा मुँह से लगाया तो पानी में सख्त बदबू आयी। गंगी से बोला- यह कैसा पानी है ? मारे बास के पिया नहीं जाता। गला सूखा जा रहा है और तू सड़ा हुआ पानी पिलाये देती है !

गंगी प्रतिदिन शाम को पानी भर लिया करती थी। कुआं दूर था; बार-बार जाना मुश्किल था। कल वह पानी लायी, तो उसमें व बिलकुल कुछ न थी; आज पानी में बदबू कैसी ? लोटा नाक से लगाया, तो सचमुच बदबू थी। जरूर कोई जानवर कुएँ में गिरकर मर गया होगा, मगर दूसरा पानी आबें कहाँ से ?

ठाकुर के कुएँ पर कौन चढ़ने देगा। दूर से लोग डाँट बताएँगे। साहू का कुआं गाँव के उस सिरे पर है; परन्तु वहाँ भी कौन पानी भरने देगा ? चौथा कुआं गाँव में है ही नहीं।

जोखू कई दिन से बीमार है। कुछ देर तक तो प्यास रोके चुप पड़ा रहा, फिर बोला- अब तो मारे प्यास के रहा नहीं जाता। ला थोड़ा पानी नाक बन्द करके पी लूँ।

गंगी ने पानी न दिया। खराब पानी पीने से बीमारी बढ़ जायगी-इतना जानती थी; परन्तु यह न जानती थी कि पानी को उबाल देने से उसकी खराबी जाती रहती है। बोली यह पानी कैसे पियोगे ? न जाने कौन जानवर मरा है। कुएँ से मैं दूसरा पानी लाये देती हूँ।

जोखू ने आश्चर्य से उसकी और देखा- दूसरा पानी कहाँ से लायेगी ?

'ठाकुर और साहू के दो कुएँ तो हैं। क्या एक लोटा पानी न भरने देंगे ?'

'हाथ-पाँव तुड़बा आयेगी और कुछ न होगा। बैठ चुपके से। ब्राह्मन-देवता आशीर्वाद देंगे, ठाकुर लाठी मारेंगे, साहू जो एक के पाँच लेंगे। गरीबों का दर्द कौन समझता है ! हम तो मर भी जाते हैं, तो कोई दुआर पर झाँकने नहीं आता, कंधा देना तो बड़ी बात है। ऐसे लोग कुएँ से पानी भरने देंगे ?

इन शब्दों में कड़ुवा सत्य था। गंगी क्या जबाव देती; किन्तु उसने वह बदबूदार पानी पीने को न दिया।

रात के नौ बजे थे। थके-माँदे मजदूर तो सो चुके थे; ठाकुर के दरवाजे पर दस-पाँच बेफिक्रे जमा थे। मैदानी बहादूरी का न तो अब जमाना रहा है, न मौका।

कानूनी बहादूरी की बातें हो रही थीं; कितनी होशियारी से ठाकुर ने थानेदार को एक खास मुकद्दमें में रिश्वत दे दी और साफ निकल गये। कितनी अक्लमन्दी से एक मार्के के मुकद्दमें की नकल ले आये। नाजिर और मोहतमिम, सभी कहते थे, नकल नहीं मिल सकती। कोई पचास माँगता; कोई सौ। यहाँ बेपैसे-कौड़ी नकल उड़ा दी। काम करने का ढंग चाहिए।

इसी समय गंगी कुएँ पर आ रही थी। गंगी जगत की आड़ में बैठी मौके का इन्ताजार करने लगी। इस कुएँ का पानी सारा गाँव पीता है। किसी के लिए रोक नहीं; सिर्फ ये बदनसीब नहीं भर सकते।

गंगी का विद्रोही दिल रिवाजी पाबन्दियों और मजबूरियों पर चोटें करने लगा- हम क्यों नीच हैं और ये लोग क्यों ऊँच हैं ? इसलिए कि ये लोग गले में तागा डाल लेते है ? यहाँ तो जितने हैं, एक-से-एक छँटे हैं ? चोरी ये करें, जाल-फरेब ये करें, झूठे मुकद्मे ये करें। अभी इस ठाकुर ने तो उस दिन बेचारे गड़ेरिये की एक भेड़ चुरा ली थी और बाद को मार कर खा गया। ईन्हीं पण्डित जी के घर में तो बारहों मास जुआ होता है। यही साहुजी तो घी में तेल मिलाकर बेचते हैं। काम करा लेते हैं, मजूरी देते नानी मरती है। किस बात में हैं हमसे ऊँचे। हाँ, मुँह में हमसे ऊँचे हैं। हम गली-गली चिल्लाते नहीं कि हम ऊँचे हैं, हम ऊँचे! कभी गाँव में आ जाती हूँ, तो रसभरी आँखों से देखने लगते हैं। जैसे सब की छाती पर साँप लौटने लगता है, परन्तु घमण्ड यह कि हम ऊँचे हैं!

कुएँ पर किसी के आने की आहट हुई। गंगी की छाती धक-धक करने लगी। कहीं देख ले, तो गजब हो जाय! एक लात भी तो नीचे न पड़े। उसने घड़ा और रस्सी उठा ली और झुककर चलती हुई एक वृक्ष के अँधेरे साये में जा खड़ी हुई। कब इन लोगों को दया आती है किसी पर। बेचारे महँगू को इतना मारा कि महीनों लहू थूकता रहा। इसलिए कि उसने बेगार न दी थी! उस पर ये लोग ऊँचे बने हैं।

कुएँ पर दो स्त्रियाँ पानी भरने आयी थीं। इनमें बातें हो रही थीं।

'खाना खाने चले और हुक्म हुआ कि ताजा पानी भर लाओ। घड़े के लिए पैसे नहीं हैं।

'हम लोगों को आराम से बैठे देखकर जैसे मरदों को जलन होती है।'

हाँ, यह तो न हुआ कि कलसिया उठाकर भर लाते। बस, हुकुम चला दिया कि ताजा पानी लाओ, जैसे लौंडियाँ ही तो हैं।'

'लौंडियाँ नहीं तो और क्या हो तुम ? रोटी-कपड़ा नहीं पाती ? दस-पाँच रुपये छीन-झपट कर ले ही लेती हो। और लौंडियाँ कैसी होती हैं।'

'मत लजाओ दीदी! छिन भर आराम करने की जी तरस कर रह जाता है। इतना काम किसी दूसरे के घर कर देती, तो इससे कहीं आरोम से रहती। ऊपर से वह

एहसान मानता। यहाँ काम करते-करते मर जाओ; पर किसी का मुँह ही नहीं सीधा होता'

दोनों पानी भरकर चली गयीं, तो गंगी वृक्ष की छाया से निकली और कुएँ के जगत के पास आयी। बेफिक्रे चले गये थे। ठाकुर भी दरबाजा बन्द कर अन्दर आँगन में सोने जा रहे थे। गंगी ने क्षणिक सुख की साँस ली। किसी तरह मैदान तो साफ हुआ। अमृत चुरा लाने के लिए जो राजकुमार किसी जमाने में गया था, वह भी शायद इतनी सावधानी के साथ और समझ-बुझकर न गया होगा। गंगी दबे पाँव कुएँ के जगत पर चढ़ी। बिजय का ऐसा अनुभव उसे पहले कभी न हुआ था।

उसने रस्सी का फंदा घड़े में डाला। दायें-बायें चौकन्नी दृष्टि से देखा, जैसे कोई सिपाही रात को शत्रु के किले में सूराख कर रहा हो। अगर इस समय वह पकड़ ली गयी, तो फिर उसके लिए माफी या रिआयत की रत्ती भी उम्मीद नहीं। अन्त में देवताओं को याद करके उसने कलेजा मजबूत किया और घड़ा कुएँ में डाल दिया।

घड़े ने पानी में गोता लगाया, बहुत ही आहिस्ता। जरा भी आवाज न हुई। गंगी ने दो-चार हाथ जल्दी मारे। घड़ा कुएँ के मुँह तक आ पहुँचा। कोई बड़ा शहजोर पहलवान भी इतनी तेजी से उसे न खींच सकता था।

गंगी झुकी कि घड़े को पकड़कर जगत पर रक्खे, कि एकाएक ठाकुर साहब का दरवाजा खुल गया। शेर का मुँह इससे अधिक भयानक न होगा।

गंगी के हाथ से रस्सी छूट गयी। रस्सी के साथ घड़ा धड़ाम से पानी में गिरा और कई क्षण तक पानी में हलकोरें की आवाजें सुनाई देती रहीं।

ठाकुर 'कौन है, कौन है?' पुकारते हुए कुएँ की तरफ आ रहे थे और गंगी जगत से कूदकर भागी जा रही थी।

घर पहुँचकर देखा कि जोखू लोटा मुँह से लगाये वही मैला-गंदा पानी पी रहा है।

7.3.3 प्रतिपाद्य विषय की समीक्षा

प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियों को निम्नलिखित तीन भागों में बाँटा जा सकता है- (१) नारी-सम्बन्धी (२) ग्राम-सम्बन्धी (३) राजनीति और समाज सम्बन्धी। ग्राम एवं समाज सम्बन्धी के अन्तर्गत दलित, शोषित, साहुकार-महाजन, ठाकुर, पंडित, पुरोहित आदि विषय रखे जा सकते हैं।

- *कथावस्तु* : प्रेमचन्द रचित 'ठाकुर का कुआं' है तो छोटी, कहानी किन्तु है अर्थपूर्ण। इसके मार्मिक प्रभाव को देखते हुए बिहारी का यह दोहा स्मरण हो जाता है - ''सतसइया के दोहरे अरू नाविक के तीर।

  देखन में छोटन लगे घाव करे गम्भीर॥''

यह कहानी सन् 1932 ई. लिखी गई। यह घटना प्रधान कहानी मानी जाती है। अत: पात्रों की संख्या कम है, किन्तु जो है सो अपने आप में विशिष्ट और घटना के अनुकूल। कहानी का नायक है जोखू तथा नायिका है गंगी। जोखू बीमार है। उस प्यास लगी है, अत: उसे पानी जाहिए। उसकी पत्नी गंगी जो रात में पानी लायी थी, वह दुर्गन्धपूर्ण है। गंगी उसे वह पानी नहीं देना चाहती, क्योंकि वह पानी पीने योग्य नहीं है। वह ताजा पानी लाना चाहती है। लेकिन जोखू उसे मना करता है क्योंकि ठाकुर के कुएं से पानी लाना आसान काम नहीं है बल्कि हाथ-पाव तोड़बाने की नौवत भी आ सकती है। भला अछूत वहॉ कैसे जा सकता है ? गंगी जिद करती है कि वह मांगकर ही एक लोटा पानी ले आएगी। वह ठाकुर को कुएँ की ओर जाती है और प्रतीक्षा करती है। जब ठाकुर दरबाजा बन्द कर अन्दर चला जाता है। गंगी अन्दर से कुएँ के पास चली जाती है और चुपचाप पानी भरने लगती है। तब तक ठाकुर का दरबाजा खुलता है और ठाकुर का भयानक रूप वहाँ खड़ा हो जाता है। गंगी उसे देखते ही थर्रा जाती है और डर के मारे उसके हाथ से रस्सी छूट जाती है। घड़ा का पानी में गिरने की आवाज सुनाई देती है। गंगी किसी तरह कुएँ के जगत से कूद कर भागते-भागते अपने घर आती है।

घर आने पर वह देखती है कि जोखू वही बदबूदार गंदा पानी पी रहा है। वह मन मारकर और व्यथित होकर बौठ जाती है। यहीं कहानी समाप्त हो जाती है तथा मानवता के लिए एक प्रश्नबाचक चिह्न छोड़ती है कि अछूतों की दयनीय दशा का उद्धार भला कब होगा ?

इस प्रकार हम देखते हैं कि 'ठाकुर का कुआं' एक मार्मिक कहानी है और है दु:खद। इसे हम दलित जीवन की त्रासदी की कहानी कह सकते हैं जिसे पढ़ने से मन कचोटता है। दलित एवं अछूतों की दुर्दशा सभ्य मानव समाज के लिए एक कलंक है। पानी जीवन के लिए अनिवार्य आवश्यकता है, किन्तु इसके लिए भी अछूत तथा दलित सवणों की दया पर निर्भर रहते हैं। इसी तथ्य को इस कहानी में स्पष्ट किया गया है। क्योंकि यह भेद-भाव अमानवीय है और है असहनीय।

छुआछूत के कारण हमारी जनसंख्या का एक बहुत बड़ा भाग सभ्य समाज से मानो बहिस्कृत के समान जीवन जीने के लिए बाध्य है जो अत्यन्त अनुचित है। प्राकृतिक संसाधन जीवन की आवश्यकता है। अत: उस पर सब लोगों का अधिकार होना चाहिए, किसी जाति विशेष का नहीं।

इस कहानी में संक्षेप में चरित्र-चित्रण, संवाद, बातावरण तथा भाषा शैली का प्रशंसनीय रूप उभरा है। इन तत्वों के समायोजन में कहानीकार ने अपनी अपूर्व कलाकारिता का परिचय दिया है। अत: इसका अमिट प्रभाव मन को आन्दोलित

कर देता है और प्रेमचन्द की प्रशंसनीय कहानी कला नेत्र पटल के समक्ष साकार हो जाती है। किसी भी साहित्य में ऐसा युग द्रष्टा और युग निष्टा साहित्यकार पूज्य हो जाता है।



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 5 : हिन्दी साहित्य के सर्वश्रेष्ठ उपन्यास का नाम क्या है ?

.....

➢ *चरित्र-चित्रण :* ऐसा माना जाता है कि : हिन्दी कहानी साहित्य में चरित्र प्रधान कहानियों की सर्वप्रथम रचना करने का श्रेय प्रेमचन्द को है। उनकी अधिकांश कहानियाँ चरित्र प्रधान हैं। यद्यपि प्रारम्भिक कहानियों में चरित्र-चित्रण कम और घटनाओं का प्राधान्य है परन्तु आगे चलकर धीरे धीरे चरित्र चित्रण की प्रधानता होने लगी। चरित्र चित्रण में कहानीकार ने पात्रों की परिस्थितियों के अनुसार उनके मनोवृत्तियों को उभारने की सफल चेष्टा की है। यह प्रक्रिया इतनी स्वाभाविक होती है कि पाठक उसमें तुरन्त तन्मय हो जाता है। चरित्र चित्रण के लिए शब्द-चित्र ही साधन नहीं होता अपितु संवाद से पात्रों की विशेषता दिखाने में प्रेमचन्द ने अपनी दक्षता का परिचय दिया है।

कुछ विद्वानो का विचार है कि पात्रों के व्यक्तित्व को परखने के लिए मुख्यत: चार बातों पर ध्यान देना चाहिए - (1) पात्र का कथन। (2) पात्र के कर्म (3) दूसरे पात्रों द्वारा अभीष्ट पात्र पर व्यक्त का अभिमत। (4) पात्र के विषय में स्पष्टत: व्यक्त किए गए लेखक के विचार।

ठाकुर का कुआं कहानी में प्रधानत: दो ही चारित्र हैं जोखू और गंगी। जोखू कहानी का नायक है, किन्तु है डरपोक स्वभाव का व्यक्ति। इसलिए उसका व्यक्तित्व सिमटकर सुगबुगाता सा लगता है। उसमें साहस का भी अभाव है। इसलिए अपने गॉव में वह ठाकुर तथा सहुकार से डरता रहता है वह डरते हुए कहता है - 'ठाकुर के कुएँ' पर कौन चढ़ने देगा ? दूर से लोग डाँट बताएँगे। साहु का कुआं गाँव के उस सिरे पर है, परन्तु वहाँ भी कौन पानी भरने देगा ? और कोई कुआं गाँव में है नहीं। जोखू का यह कथन उसे परिस्थिति का दास बताता है। वह असहाय है और है विवश। उसका यह कथन सिद्ध करता है कि अछूतों की आर्थिक स्थिति इतनी खराब है कि वे एक सामान्य कुआं भी नहीं खुदबा सकते। यह विडम्बना है और नियति का क्रूर अभिशाप।

प्रतिकूल परिस्थिति के कारण जोखू का चरित्र कुंठित हो गया है। वह विवश है और बेचारा। इसके लिए दोषी वह नहीं है, अपितु सामाजिक व्यवस्था दोषी है

जहॉ समता, सहयोग एवं बन्धुत्व का अभाव है।

हम अच्छी तरह जानते हैं कि नारी को प्रति प्रेमचन्द की विशेष सहानुभूति थी। अत: इस कहानी का नारी-चरित्र गंगी में भी यह प्रभाव परिलक्षित होता है। गंगी के चरित्र में जोखू से अधिक ऊर्जा है, गतिशीलता है और है दृढ़ता। विपरीत परिस्थिति से भी वह सामना करने के लिए तैयार रहती है। इतना होने पर भी प्राय: सफलता से वह वंचित हो जाती है। क्योंकि परिस्थिति बहुत अधिक जटिल है। छुआ-छूत चरम सीमा पर है। गरीबी आकाश को छू रही है। अत: वह मन मसोस कर रहजाती है। कभी कभी तो वह विद्रोही तेबर भी अपना लेती है और साहस का सहारा लेती है, फिर भी कुछ लाभ नहीं होता। वह जोखू के समान प्रतिकूल परिस्थिति में समर्पण नहीं करती, भाग्यवादी नहीं बनना चाहती, बाल्कि कुछ करना चाहती है। यही उसके चरित्र का उज्ज्वल पक्ष है।

यही कारण है कि जोखू के मना करने पर भी वह रात में ठाकुर के कुएँ से पानी लाने का प्रयास करती है। जबकि जोखू झुकता हुआ कहता है - ''हाथ पैर तुड़बा आयेगी और कुछ न होगा। बैठ चुपके से।'' यह सिद्ध करता है कि गंगी को चरित्र मे मुसीबत से जूझने की शक्ति है। वह साहस के साथ धर्माडम्बर पर व्यंग्य करती है और अपने अधिकार के लिए संघर्ष करना चाहती है - ''हम क्यों नीच हैं ? और ये लोग क्यों ऊँचे हैं।'' इस प्रकार गंगी का चरित्र बड़ा ही प्रेरक है और है सराहनीय।

- *संवाद और वातावरण :*संवाद और वातावरण की दृष्टि से भी प्रेमचन्द अतुलनीय हैं। सामान्यत: संवाद के द्वारा प्राय: चार उद्देश्य सिद्ध होते हैं :
  - कहानी में स्वाभाविकता तथा रोचकता की वृद्धि और नाटकीयता का सृजन।
  - पात्रों का चरित्रोद्घाटन।
  - कथावस्तु का विकास।
  - यदा-कदा आवश्यक समस्याओं पर प्रकाश डालना।

  महान कहानीकार प्रेमचन्द की संवाद योजना समयोचित और पात्रोचित है संवेदनशीलता से ओत-प्रोत।

'ठाकुर का कुआ' कहानी में मुख्य रूप से अछूत एवं दलित समस्या का वर्णन है। इस समाज में गरीबी एवं अशिक्ष का प्राबल्य है। भेद-भाव के कारण समाज में ये आँसुओं के घूंट पीकर जीवन वसर करते हैं। तथाकथित बड़ी जातिवाले लोग भ्रष्ट आचरण में लिप्त रहते हैं फिरभी साफ-सुथरे और भद्र माने जाते हैं। इस आडम्बर पर गंगी का आक्रोश भरा संवाद कितना सटीक एवं सार्थक है- ''ये लोग गले में तागा डाल लेते हैं। यहाँ तो जितने हैं, एक से एक छटे हैं। चोरी ये करें, जाल-फरेब ये करें, झूठे मुकदमे येकरें।''

यह चुभनेवाला संवाद किस सरल भाषा से चिनगारी बरसाती है वह धातव्य है। ऐसा संवाद चरित्रांकन के साथ-साथ तत्कालीन वातावरण को भी स्पष्ट करता है। यह कथन आज भी प्रासंगिक है। उस समय में दबंग, ठाकुर पंडित एवं सेठ-साहुकार के वातारण की असलियत को उजागर वाला संवाद से वातावरण कितना चमत्कारिक है - ''अभी इस ठाकुर ने तो उस दिन बेचारे गड़रिए की एक भेड़ चुरा ली थी और बाद में मारकर खा गया। इन्हीं पंडित के घर में बारहों मास जुआ होता है। यही साहूजी तो घी में तेल मिलाकर बेचते हैं। काम करा लेते हैं मजूरी देते नानी मरती है। किस बात में हैं हमसे ऊँचे?'' यहॉ एक साथ हम संवाद की चुस्तता, वातावरण की प्रखरता और भाषा शैली की श्रेष्ठता का उदाहरण देख सकते हैं।

वातावरण तैयार करने में तो प्रेमचन्द माहिर हैं, पटु हैं और हैं अत्यन्त कुशल। 'ठाकुर का कुआं' का वातावरण विषय के अनुकूल है। दलितों एवं अछूतों के यहाँ अन्य चीजों का अभाव तो रहता ही है किन्तु प्राकृतिक देन जो पानी है उसका कितना अभाव है, तथा इसके लिए उन्हें कितना पापड़ बेलना पड़ता है - इसका जीवन्त वातावरण बनाने में कहानीकार ने अपनी अद्वितीय प्रतिभा का परिचय दिया है। आवश्यकता से वशीभूत होकर, गंगी का चुपके से कुएं पर आना, तत्परता से पानी निकालने का प्रयास, फिर ठाकुर का आ जाना तथा भयंकर रूप का सृजन करना- अतिशय चातुर्यपूर्ण है। दवंगई तथा ऊँची दुकान फीकी पकवान का वास्तविक चित्र सांमने चित्रित हो जाता है। अत: बार बार कहानीकार के कला-कौशल पर दाद देनी पड़ती है। जिसके द्वारा जीवन्त वातावरण से कहानी-सौंदर्य में चार-चाँद लग जाते हैं।

इसी तरह कहानी के प्रारम्भ में ही जोखू की बीमारी का बाना बुनना, घर में पानी का अभाव होना तथा कुएँ की घटना के साथ गंगी की मानसिक अवस्था का वास्तविक वातावरण तैयार करने में कहानीकार ने कलम तोड़ दी है।

- *भाषा-शैली :* कुछ विद्वानों की मान्यता है कि प्रेमचन्द की कहानी कला और उसकी लोकप्रियता का सबसे बड़ा कारण है उनकी भाषा-शैली। भाषा की सरलता, सरसता, मधुरता, मुहावरों का सटीक प्रयोग तथा हास्य-व्यंग्य का मिश्रित प्रयोग उनकी भाषा शैली की अपनी खूबी है। हिन्दी गद्य को परिमार्जित करने में इनकी भाषा शैली की अहम भूमिका है। कहा जाता है कि इनकी जैसी सजीव, सरल पर समयानुकुल गम्भीर भाषा का प्रयोग हिन्दी में किसी से नहीं हुआ है। इनकी भाषा में उर्दू की सरसता, चुस्ती तथा रबानगी है जो इनको दूसरे साहित्यकार से अलग और विशिष्ट बान देती है।

इनके पास शब्दों का भव्य भंडार है और वे उन शब्दों को भावानुकूल पिरोने

में सिद्धहस्त हैं। यही कारण है कि साहित्य का विद्वान उर्दू के मौलवी, गाँव के गरीब किसान-मजदूर, नगर के प्रतिष्ठित जज, वकील, डाक्टर आदि महानुभाव भी अपनी-अपनी रुचि के अनुसार इनके भाषा-सौंदर्य का मजा ले लेते हैं। इनकी भाषा देश-काल और पात्र के अनुसार है। उसमें अजीब जिन्दादिली, रसात्मकता और प्रखर प्रवाह है जो पाठक को मन मोहित करके विस्मय-विभोर कर देता है।

'ठाकुर का कुआं' की भाषा शैली भी अति सुन्दर है और है पात्र के अनुकूल। यहाँ हम गरीबों के प्रति जहाँ उनकी सहानुभूति से आनन्दित होते हैं वहीं उपयुक्त भाषा के प्रयोग एवं चित्रण से मुग्ध हो जाते हैं। अत: यह कथन ठीक है कि प्रेमचन्द की सफलता का रहस्य बहुत कुछ उनकी भाषा ही है जिसकी झलक हम इस कहानी में देख सकते हैं। पुरुष सत्तात्मक समाज में प्राय: स्त्री के अस्तित्व को नकारा जाता है और उसे उचित स्थान नहीं दिया जाता। यह संकेत ठाकुर का कुआं में भी प्राप्त है - एक स्त्री ने दूसरी स्त्री से कहा - ''खाना खाने चले और हुकम हुआ कि ताजा पानी भर लाओ। घड़े के लिए पैसे नहीं हैं। हम लोगों को आराम से बैठे देखकर जैसे मरदों को जलन होती है। हाँ यह न हुआ कि कलसिया उठाकर भर लाते। बस हुकुम चला दिया कि पानी लाओ, जैसे हम लौंडिया ही तो हैं।'' इस कथन से अछूत समाज में नारी की क्या स्थिति है, इसका पता चल जाता है। पात्र के अनुकूल इस भाषा की जितनी प्रशंसा की जाए, थोड़ी है। सचमुच प्रेमचन्द भाषा के जादूगर थे। जोखू तथा गंगी के स्वाभाविक संवाद देहाती हैं। प्रेमचन्द शब्द-चित्र के साथ कथा-तत्व के समन्वय में अग्रगण्य हैं। हास्य और व्यंग्य उनके वर्णन को सजीव बनाते हैं। संवाद में स्वाभाविकता, देहातीपन, हिन्दी और उर्दू के मिश्रण से बनी उनकी भाषा-शैली अपने युग की संपदा है।

प्रेमचन्द के आत्मीय अनुभव और रचनात्मक औदान्य दोनों एक साथ संपृक्त होकर माधुर्य के सृजन में सराहनीय भूमिका निभाते हैं। 'ठाकुर का कुआं' सहित कहानीकार की अन्य कहानियाँ सांसारिक अनुभवों के अनूठे 'शब्दकोश' की तरह हैं, जहाँ भाषा का प्रवाह बड़ा निर्मल है और भावनाओं तथा आत्मीयता की तेज लहरें हमें भिगे देती हैं। सचमुच ऐसे विश्व प्रसिद्ध साहित्यकार स्मरणीय हैं, वन्दनीय हैं।



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 6 : 'ठाकुर का कुआं' कहानी में सबसे प्रभावशाली चरित्र किस पात्र का है?

.....

प्रश्न 7 : 'कफन' कहानी के लेखक कौन है ?

.....



7.4 प्रस्तुत अध्याय से हमने सीखा

- एक करुणा प्लावित और कृत संकल्पी लेखक के रूप में विश्व प्रसिद्ध साहित्यकार प्रेमचन्द ने जो जीवन जिया, उसमें उनकी आचार धर्मिता लक्ष्य योग्य है। प्रेमचन्द हिन्दी साहित्यकार के प्रथम कथाकार हैं जिन्होंने उपन्यासों और कहानियों को चामत्कारिक घटनाओं के जाल से मुक्त करके मानव चरित्र की ओर उन्मुख किया। उनके साहित्य की मूल प्रवृति मानवता के प्रति सहानुभूति है। अपनी उस व्यापक सहानुभूति, सरल, सरस भाषा तथा, सहज कथा शिल्प के कारण प्रेमचन्द हिन्दी साहित्य के श्रेष्ठतम और लोकप्रिय साहित्यकार हैं।
- प्रेमचन्द हिन्दी के प्रथम कहानीकार (उपन्यासकार) हैं जिन्होंने अपनी काहनियों में समाज के पूरे परिवेश को चित्रित किया है जहाँ कुरुपता, असमानता, अस्पृश्यता के भयावह रूप, शोषण की विभिषिका, किसान, मजदूर, दलित एवं नारी की दयनीय दशा को जीवन्त रूप दिया है। अछूतों एवं दलितों की कठिनाइयों का मार्मिक वर्णन करते समय अन्धविश्वास और सामाजिक रुढ़िवादिता पर भी व्यंग्य किया है।
- 'ठाकुर का कुआं' शोषण और अत्याचार पर आधारित हृदय स्पर्शी कहानी है। इससे हमें प्रेरणा मिलती है कि छुआछूत, ऊँच-नीच, अन्धविश्वास शोषण, अत्याचार आदि सभ्य समाज के लिए कलंक हैं। अत: इन्हें शीघ्र समाप्त करना चाहिए।



7.5 विस्तृत जानकारी हेतु पढ़ें

1) अमृत राय : *प्रेमचन्द : कलम का सिपाही*
2) अमृत राय : *विविध प्रसंग (तीन खण्ड)*
3) रामविलास शर्मा : *प्रेमचन्द*
4) रामविलास शर्मा : *प्रेमचन्द और उनका युग*
5) विश्वनाथ तिवारी (सं): *प्रेमचन्द*

6) नलिन विलोचन शर्मा : *हिन्दी उपन्यास : तथा प्रेमचन्द*

7) डॉ. सुभाष चन्द्र : *दलित मुक्ति आन्दोलन, सीमाएँ और संभावनाएँ*

7.6 स्वनिरीक्षण का पुननिरीक्षण

प्रश्नोत्तर 1 : गलत

प्रश्नोत्तर 2 : गलत

प्रश्नोत्तर 3 : प्रेमचन्द का जन्म सन् 1880 ई. में वाराणसी से 56 मील की दुरी पर लमही (पांडेपुर) नायक स्थान में हुआ।

प्रश्नोत्तर 4 : प्रेमचन्द के बचपन के पुकार नाम नवाव राय तथा औप चारिक नाम 'धनपति राय' थे।

प्रश्नोत्तर 5 : हिन्दी साहित्य के सर्वश्रेष्ठ उपन्यास का नाम है – 'गोदान'।

प्रश्नोत्तर 6 : गंगी का

प्रश्नोत्तर 7 : प्रेमचन्द।



?.7 सम्भावित प्रश्न

प्रश्न 1 : सारांश लिखते हुए 'ठाकुर का कुआं' कहानी की विवेचना कीजिए।

प्रश्न 2 : गंगी का चरित्र चित्रण कीजिए।

प्रश्न 3 : 'ठाकुर का कुआं कहानी में 'प्रेमचन्दने छुआछूत की समस्या को गहराई से उभारा है, लेकिन इसे समाप्त करने के लिए संघर्ष का संकेत क्यों नहीं दिया है' इस कथन का तर्कसंगत उत्तर दीजिए।

प्रश्न 4 : गंगी को 'ठाकुर के कुएँ से पानी लेने का अधिकार क्यों नहीं है ? विस्तार से वर्णन कीजिए।

प्रश्न 5 : 'ठाकुर का कुआं' कहानी के आधार पर समाज में प्रचलित छुआ-छूत तथा ऊँच-नीच की भावना के कारण अछूतों को जीवन किस प्रकार से दयनीय और दु:खपूर्ण हो गया है, इसका वर्णन कीजिए।

प्रश्न 6 : छुआछूत के कारण अमानवीय शोषण के शिकार अछूतों के उद्धार के लिए किस प्रकार के प्रयासों की आवश्यकता है ? वर्णन कीजिए।

प्रश्न 7 : कहानी की कसौटी पर 'ठाकुर का कुआं' कहानी की समीक्षा कीजिए।

*** ***** ***

इकाई 8 : जैनेन्द्र कुमार : जाह्नवी

इकाई की रूपरेखा

8.1 उद्देश्य

8.2 प्रस्तावना

8.3 जैनेन्द्र कुमार

8.3.1 जीवन दर्शन एवं साहित्य

8.3.2 जाह्नवी – कहानी

8.3.3 प्रतिपाद्य विषय की समीक्षा

8.4 प्रस्तुत अध्याय से हमने सीखा

8.5 विस्तृत जानकारी हेतु पढ़ें

8.6 स्वनिरीक्षण का पुनर्निरीक्षण

8.7 सम्भावित प्रश्न

8.1 उद्देश्य

प्रस्तुत अध्याय में आप सीखेंगे–

- कथाकार जैनेन्द्र कुमार का सामान्य एवं साहित्यिक परिचय प्राप्त करेंगे।
- 'जाह्नवी' कहानी की कथावस्तु एवं इसके अन्तर्निहित भाव
- कहानी के अन्य तत्वों जैसे चरित्र–चित्रण, संवाद, भाषा–शैली और उद्देश्य से परिचय।

8.2 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में आप प्रसिद्ध कथाकार जैनेन्द्र कुमार रचित 'जाह्नवी' कहानी का विस्तृत अध्ययन करेंगे। कथा साहित्य का एक महत्वपूर्ण विधा है 'कहानी'। यह विधा जीवन और जगत के अत्यधिक निकट है। यद्यपि कहानी का परिसर सीमित है, तथापि उपन्यास की तरह इसमें भी जीवन की सुन्दर और सर्वांगपूर्ण अभिव्यक्ति मिलती हैं। जैनेन्द्र कुमार का प्रेमचन्दोत्तर युग के कहानीकारों में एक उल्लेखयोग्य नाम है। प्रेमचन्दोत्तर युग में हिन्दी कहानी साहित्य में अनेक प्रवृत्तियॉ व धारायें परिलक्षित होती हैं। उसमें प्रमुख है मनोवैज्ञानिक व मनोविश्लेषणात्मक धारा। इस धारा के अन्तर्गत व्यक्ति को केन्द्र बिन्दु मानकर उसकी अन्त: वृत्तियों का मनोवैज्ञानिक व मनोविश्लेषणात्मक लेखा जोखा प्रस्तुत किया गया है। जैनेन्द्र की अधिकतर कहानियाँ मनोविश्लेषण से सम्बन्ध रखती हैं। प्रस्तुत खण्ड में हम जैनेन्द्र कुमार कृत 'जाह्नवी' कहानी के अध्ययन के साथ साथ इसके मनोवैज्ञानिक पहलू पर भी नजर डालेंगे।

8.3 जैनेन्द्र कुमार

आधुनिक हिन्दी साहित्य के यशस्वी कथाकार जैनेन्द्र कुमार का जन्म कौड़ियागंज, अलीगढ़ में सन 1905 में हुआ था। उनका पहला कथा संग्रह है फांसी (1929) और पहला उपन्यास है परख (1930)।

8.3.1 जीवन-दर्शन एवं साहित्य

जैनेन्द्र कुमार ने अपने जीवन काल में साहित्य रचना के साथ, भारत के स्वतंत्रता संग्राम में भी अपना पूर्ण सहयोग दिया। 1927 में उन्होंने असहयोग आन्दोलन के दौरान कालेज छोड़ दिया। 1924 में जैनेन्द्र कुमार पहली बार जेल गये और 1930 और 1932 में उन्हें फिर जेल जाना पड़ा।

जैनेन्द्र कुमार जी की कुल प्रकाशित पुस्तकें हैं 57 इसमें से मौलिक उपन्यास हैं 12 । इसमें से त्यागपत्र, सुनीता, भुक्तिबोध, जयवर्धन, अनाम स्वामी, दर्शक आदि उल्लेखयोग्य हैं। 24 दिसम्बर; 1988 में इस महान कथाकार का निधन हुआ।

उनकी सर्वाधिक लोकप्रिय कृतियाँ हैं – कहानी संग्रह दस भागों में, विचार साहित्य: समय और हम, समय, समस्या और सिद्धान्त, साहित्य का श्रेय और प्रेय, काम, प्रेम और परिवार, ये और वे; मेरे भटकाव (संस्मरण) जैनेन्द्र ने प्रेमचंद की परंपरा के आगे बढ़ाने के स्थान पर उससे टकराहट अनुभव की। उन्होंने कहानी को एक सीधी रेखा में आगे बढ़ाने के स्थान पर उसे एक नया मोड़ दे दिया, इस मोड़ से आरंभ होनेवाली कहानी अपनी चेतना और संरचना दोनों में नयी थी। जैनेन्द्र के साहित्य में पहली बार व्यक्ति के रहस्य में लिपटे अन्तरंग धरातल का सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक वर्णन का पुट मिलता हैं। जैनेन्द्र कहीं भी ऐसा आभास नहीं देते कि वे किसी मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त के सहारे आंतरिक सत्य की पहचान उभार रहे हैं, वे तो आसपास के जाने पहचाने पात्रों में मूर्त अंतर्सत्यों को ही बहुत सहज भाव से पकड़ लेते हैं और बहुत ही सहजता से बातचीत के लहजे में उसे रुपायित कर देते हैं। जैनेन्द्र की कहानियों की निर्माण शैली अत्यन्त व्यापक और विस्तृत है। इसका सबसे बड़ा कारण यह है कि उन्होंने मनोविज्ञान और दर्शन के विभिन्न स्तरों और धरातलों से अपनी कहानियाँ लिखी हैं। 'कहानियों के चरित्र अंतर्मुखी अधिक होते हैं। सबके सब किसी न किसी अंतर्द्वंद, घात प्रतिघात से अनुप्राणित रहते हैं। इनके चरित्र का आकर्षण भी अपुर्व है। इनमें किसी न किसी दिशा से एक अव्यक्त कारण की लय, अनिर्दिष्ट अभाव और सबसे बड़ी विशेषता, इनका निस्पंद निश्चेष्ट होना है।[1] जैनेन्द्र की नारी केन्द्रिक रचनाओं में प्राय: नायिकों के चरित्र अन्तर्मुखी होते हैं, वे देखने मे बहुत समर्थ एवं शक्तिशाली प्रतीत होती हैं, परन्तु परिस्थितियों में पड़कर मोम की

भाँति पिघल जाती हैं। भावुक है, पर उनमें निष्ठा नहीं, दिग्भ्रमित होकर भटकने की प्रवृत्ति है, इसलिए उनकी करुणा, स्नेह, बलिदान, उत्सर्ग आदि सभी आरोपित और सयास सी प्रतीत होती है; उनकी कहानियों के नारी पात्रों पर व्यक्तिवादी तथा अहंवादी युग की प्रवृत्तियों का अधिक प्रभाव है, वे अत्यधिक स्नेहशीला नारियाँ है और चूँकि भावुक हैं इसीलिए उन्हें इतनी वेदना या पीड़ा भोगनी पड़ती है।'

जैनेन्द्र मानव जीवन दर्शन के महान कहानीकार हैं, मनोविज्ञान के धरातल पर उनके पात्र अद्वितीय है।



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 1 : जैनेन्द्र कुमार का जन्म कहाँ और कब हुआ था?

.....

प्रश्न 2 : जैनेन्द्र कुमार का पहला उपन्यास है परख। (सच/झूठ)

प्रश्न 3 : खाली जगह की पूर्ति किजीए-

जैनेन्द्र कुमार .....युग के कहानीकार है।

8.3.2 जाह्नवी - कहानी

आज तीसरा रोज है। तीसरा नहीं, चौथा रोज है। वह इतवार की छुट्टी का दिन था। सबेरे उठा और कमरे से बाहर की ओर झाँका तो देखता हुँ, मुहल्ले के एक मकान की छत पर काँव-काँव करते हुए कौओं से धिरी हूई एक लड़की खड़ी है। खड़ी-खड़ी बुला रही है, ''कौओं आओ, कौओं आओ।'' कौए बहुत काफी आ चुके हैं; पर और भी आते जाते हैं। वे छत की मुँड़िर पर बैठे अधीरता से पंख हिलाकर बेहद शोर मचा रहे हैं। फिर भी उन कौओं की संख्या से लड़की का मन जैसे भरा नहीं हैं। बुला रही है, ''कौओं आओं, कौओं आओं।''

देखते-देखते छत की मुँड़िर कौओं से बिल्कुल काली पड़ गई। उनमें से कुछ अब उड़-उड़ कर लड़की की धोती से जा टकराने लगे। कौओं के खूब आ घिरने पर लड़की मानो उन आमंत्रित अतिथियों के प्रति गाने लगी-

''कागा चुन चुन खाइयो...।''

गाने के साथ उसने अपने हाथ की रोटियों में से तोड़-तोड़ कर नन्हें-नन्हें दुकड़े भी चारों ओर फेंकने शुरु किये। गाती जाती थी। ''कागा चुन-चुन खाइयो...।'' वह मग्न मालूम होती थी और अनायास उसकी देह थिरक कर नाच-सी जाती थी। कौए चुन-चुन खा रहे थे और वह गा रही थी- ''कागा चुन-चुन खाइयो...।''

आगे वह क्या गाती है, कौओं की काँव-काँव और उनके पंखों की फड़फड़ाहट के मारे साफ चुनाई न दिया। कौए लपक-लपक कर मानो टुटने से पहले उसके हाथों

से टुकड़ा छीन ले रहे थे। वे लड़की की चारों ओर ऐसे छा रहे थे, मानो वे प्रेम से उसको ही खाने को उद्यत हों। और लड़की कभी इधर कभी उधर झुक कर घूमती हुई ऐसे लीन भाव से गा रही थी कि जाने क्या मिल रहा हो।

रोटी समाप्त होने लगी। कौए भी समझ गए। जब अंतिम टुकड़ा हाथ में रह गया तो वह गाती हुई उस टुकड़े को हाथ में फहराती हुई जोर से दो तीन-चक्कर लगा उठी। फिर उसने वह टुकड़ा ऊपर आसमान की ओर फेंका- ''कौओं खाओ, कौओं खाओ।'' और बहुत से कौए एक ही साथ उड़कर उसे लपकने झपटे। उस समय उन्हें देखती हुई लड़की मानो आनन्द में चीखती हुई सी आवाज में गा उठी-

''दो नैना मत खाइयो, मत खाइयो...।
पीउ मिलन की आस।''

रोटियाँ खत्म हो गईं। कौए उड़ चले। लड़की एक-एक कर उनको उड़ कर जाता हुआ देखने लगी। पल-भर में छत कोरी हो गई। अब वह आसमान के नीचे अकेली अपनी छत पर खड़ी थी। बहुत से मकानो की बहुत-सी छतें थीं! उन पर कोई होगा, कोई न होगा! पर लड़की दूर अपने कौओं को उड़ते जाते हुए देखती रह गई। गाना समाप्त हो गया था। धूप अभी फूटी ही थी। आसमान गहरा नीला था। लड़की के ओंठ खुले थे, दृष्टि स्थिर थी। जाने, भूली-सी वह क्या देखती रह गई।

थोड़ी देर बाद उसने मानो जग कर अपने आसपास के जगत् को भी देखा। इसी की राह में क्या मेरी ओर भी देखा? देखा भी हो; पर शायद मैं उसे नहीं दीखा था। उसके देखने में सचमुच कुछ दीखता ही था, यह मैं कह नहीं सकता। पर कुछ ही पल के अन्तर वह मानो वर्तमान के प्रति, वास्तविकता के प्रति, चेतन हो आई। तब फिर बिना देर लगाए छट-पट उतरती हुई वह नीचे अपने घर में चली गई।

मैं अपनी खिड़की में खड़ा-खड़ा चाहने लगा कि मैं भी देखूँ, कौए कहाँ-कहाँ उड़ रहे हैं, और वे कितनी दूर चले गए हैं। क्या वे कहीं दीखते भी हैं? पर मुश्किल से मुझे दो-एक ही कौए दीखे। वे निरर्थक भाव से यहाँ बैठे थे, या वहाँ उड़ रहे थे। वे मुझें मूर्ख और घिनौने मालूम हुए। उनकी काली देह और काली चोंच मन को बुरी लगी। मैंने सोचा कि ''नहीं, अपनी देह मैं कौओं से नहीं नूचबाऊँगा। छि: चुन-चुन कर इन्हीं के खाने के लिए क्या मेरी देह है? मेरी देह और कौए! - छी:।''

जान पड़ता है खड़े-खड़े मुझे काफी समय खिड़की पर हो गया; क्योंकि इस बार देखा कि ढेर के ढेर कपड़े कंधे पर लादे वही लड़की फिर उसी छत पर आ गई। इस बार वह गाती नहीं है; वहाँ पड़ी एक खाट पर उन कपड़ों को पटक देती है और फिर उन कपड़ों में से एक-एक को चुन कर, फटक कर, वहीं छत पर सुखा देती है। छोटे-बड़े उन कपड़ो की गिनती काफी रही होगी। वे उठाए जाते रहे, फटके जाते रहे फैलाए जाते रहे; पर उनका अंत शीघ्र आता न दिखा। आखिर सब खत्म हो गए तो

लड़की ने सिर पर आए हुए धोती के पल्ले को पीछे किया। उसने एक अंगड़ाई ली, फिर सिर को जोर से हिला कर अनबँधे अपने बालों को छिटका लिया और धीमे-धीमे वहीं डोल कर उन बालों पर हाथ फेरने लगी। कभी बालों की लट को सामने ला कर देखती फिर उसी को लापरवाही से पीछे फेंक देती। उसके बाल गहरे काले थे और लम्बे थे। मालूम नहीं, उसे अपने इस वैभव पर सुख था या दुख था। कुछ देर वह उँगलियाँ फेर-फेर कर अपने बालों को अलग-अलग छिटकाती रही। फिर चलते-चलते एकाएक उन सब बालों को इकट्ठा समेट कर झटपट जुड़ा-सा बाँध, पल्ला सिर पर खींच, वह नीचे उतर गई।

उसके बाद में खिड़की पर नहीं ठहरा। घर में छोटी साली आई हुई है। इसी शहर के दुसरा भाग में रहती है और ब्याह न करके कालिज में पढ़ती है। मैने कहा-- ''सुनो, यहाँ आओ।''

उसने हँस कर पूछा- ''यहाँ कहाँ?''

खिड़की के पास आ कर मैंने पूछा- 'क्यों जी जाह्नवी का मकान जानती हो?''

''जाह्नवी! क्यों वह कहाँ है?''

''मै क्या जानता हूँ कहाँ है। पर देखो, वह घर तो उसका नहीं है?''

उसने कहा-- ''मैने घर नहीं देखा। इधर उसने कालिज भी छोड़ दिया है?''

''चलो अच्छा है।'' मैने कहा और उसे जैसे-तैसे टाला। क्योंकि वह पूछने-पाछने लगी थी कि क्या काम है, जाह्नवी को मैं क्या और कैसे, क्यों जानता हूँ। सच यह था कि मै रत्ती भर इसे नहीं जानता था। एक बार अपने ही घर में इसी साली की कृपा और आग्रह पर एक निगाह उस को देखा था। बताया गया था कि वह जाह्नवी है, और मैने अनायास स्वीकार कर लिया था कि अच्छा, वह जाह्नवी होगी। उसके बाद की सचाई यह है कि मुझे कुछ नहीं मालूम कि उस जाह्नवी का क्या बन गया और क्या नहीं बना। पर किसी सचाई को बहनोई के मुँह से सुन कर स्वीकार कर ले तो साली क्या? तिस पर सचाई ऐसी नीरस। पर ज्यों-त्यों मैंने उसे टाला।

बात बात में मैंने कहना भी चाहा कि ऐसी ही तुम जाह्नवी को जानती हो, ऐसी ही तुम साथ पढ़ती थी कि जरा बात पर कह दो ''मालूम नहीं।'' लेकिन मैंने कुछ कहा नहीं।

इसके बाद सोमवार हो गया। मंगलवार भी हो गया और आज बुध भी हो कर चुका जा रहा है। चौथा रोज है। हर रोज सबेरे खिड़की पर दीखता है कि कौए काँव-काँव , छीन-झपट कर रहे हैं और वह लड़की उन्हे रोटी के टुकड़ों के मिस कह रही हैं, ''कागा चुन-चुन खाइयो...।''

मुझको नहीं मालूम कि कौंए जो कुछ उसका खाएँगे उसे कुछ भी उसका

सोच है। कौओं को बुला रही है-- ''कौओं कौओ, आओ आओ'', साग्रह कह रही है--''कौओं खाओ, कौओं खाओ, कौओं खाओं!'' वह खुश है कि कौए आ गए हैं और वे खा रहे हैं। ''पर एक बात है कि ओ कौओं, जो तन चुन-चुन कर खा लिया जायगा उसको खा लेने में खुशी से मेरी अनुमति है। वह खा-खू कर तुम सब निबटा देना। लेकिन ऐ मेरे भाई कौओं, इन दो नैना को छोड़ देना। इन्हें कहीं मत खा लेना। क्या तुम नहीं जानते कि उन नैनों में एक आस बसी है जो पराए के बस है। वह नैना पीउ की बाट में हैं। ऐ कौओं, वे मेरे नहीं हैं, मेरे तन के नहीं हैं। वे पीउ के आस को बसाए रखने के लिए हैं। सो उन्हे छोड़ देना।''

आज सबेरे भी मैने यह सब कुछ देखा। कौओं को रोटी खिला-कर वह उसी तरह नीचे चली गई। फिर छोटे-बड़े बहुत से कपड़े धो कर लाई। उसी भाँति उन्हें झटक कर सुखा दिया। वैसे ही बाल छितरा कर थोड़ी देर डोली। फिर सहसा ही उन्हें जूड़े में सँभाल कर नीचे भाग गई।

जाह्नवी को घर में एक बार देखा था। पत्नी ने उसे खास तौर पर देख लेने को कहा था। और उसके चले जाने पर पूछा था-- ''क्यों कैसी है?''

मैने कहा था-- ''बहुत भली मालूम होती है, सुन्दर भी है। पर क्यों?''

''अपने बिरजू के लिए कैसी रहेगी?''

बिरजू दूर के रिश्ते में मेरा भतीजा लगता हैं। इस साल एम. ए. में पहुँचा हैं। मैने कहा-- ''अरे, ब्रजनंदन! वह उसके सामने बच्चा है!''

पत्नी ने अचरज से कहा-- ''बच्चा है! बाईस बरस का तो हुआ।''

''बाईस छोड़ ब्यालीस का भी हो जाय। देखो कैसे ठाठ से रहता है। यह लड़की देखो, कैसी बस सफेद साड़ी पहनती है। बिरजू इसके लायक कहाँ है। यों भी कह सकते हो कि यह बिचारी लड़की बिरजू के ठाठ के लायक नहीं है।''

बात मेरी कुछ सही, कुछ व्यंग्य थी। पत्नी ने उसे कान पर भी न लिया। कुछ दिनों बाद मुझे मालूम हुआ कि पत्नीजी की कोशिशों से जाह्नवी के माँ बाप से (माँ के द्वारा बाप से) काफी आगे तक बढ़ कर बातें कर ली गई हैं। शादी के मौके पर क्या देना होगा, क्या लेना होगा, एक-एक कर सभी बातें पेशगी तय होती जा रही हैं।

इतने में सब किए करेए पर पानी फिर गया। जब बात बिल्कुल किनारे पर आ गई थी तभी हुआ क्या, कि हमारे ब्रजनंदन के पास एक पत्र आ पहुँचा। उस पत्र के कारण एकदम सब चौपट हो गया। इस तरह रंग में भंग हो जाने पर हमारी पत्नी का मन पहले तो गिर कर चूर-चूर सा होता जान पड़ा, पर फिर वह उसी पर बड़ी खुश मालूम होने लगी।

मैं तो मानों इन मामलों में अनावश्यक प्राणी हूँ ही। कानों-कान खबर तक न हुई। जब हुई तो इस तरह--

पत्नी एक दिन सामने आ धमकीं। बोलीं -- ''यह तुमने जाह्नवी के बारे में पहले-से क्यों नहीं बतलाया?''

मैने कहा-- ''जाह्नवी के बारे में मैने पहले-से क्या बतलाया भाई?''

''यही कि वह ऐसी है?''

मैने पूछा-- ''ऐसी कैसी?''

उन्होंने कहा-- ''अब बनो मत। जैसे तुम्हें कुछ नहीं मालूम।''

मैने कहा-- ''अरे, यह तो कोई हाई-कोर्ट का जज भी नहीं कह सकता कि मुझे कुछ भी नहीं मालूम। लेकिन, आखिर जाह्नवी के बारे में मुझे क्या मालूम है, यह तो मालूम हो।''

श्रीमतीजी ने अकृत्रिम आश्चर्य से कहा- ''बिरजू के पास खत आया है, सो तुमने कुछ नहीं सुना? आजकल की लड़कीयाँ - बस कुछ न पूछो। यह तो चलो भला हुआ कि मामला खुल गया। नहीं तो--''

क्या मामला, कहाँ, कैसे खुला और भीतर से क्या कुछ रहस्य बाहर हो पड़ा सो सब बिना जाने में क्या निवेदित करता? मैने कहा-- ''कुछ बात साफ भी कहो।''

उन्होने कहा-- ''वह लड़की आशनार्स में फँसी थी। - पड़ी-लिखी सब एक जात की होती हैं।''

मैने कहा- ''सब की जात-बिरादरी एक हो जाय तो बखेड़ा टले। लेकिन असल बात भी तो बताओ।''

''असल बात जाननी है तो जाकर पूछो उसकी महतारी से। भली समधिन बनने चली थी! वह तो मुझे पहले ही से दाल में काला मालूम होता था। देखो न, कैसी भोली-भाली बातें करती थी। बस तो, देर क्या थी, सब हो चुका था। बस लगन-मुहूर्त की बात थी। राम-राम भीतर पेट में कैसी कालिख रखे है, मुझे पता न था।' चलो, आखिर परमात्मा ने इज्चत बँचा ली। वह लड़की घर में आ जाती तो मेरा मुँह तब दिखाने लायक रहता?''

मेरी पत्नी का मुँह क्यों किस भाँति दिखाने लायक न रहता, उसमें क्या विकृति आ रहती, सो उनकी बातों से समझ में न आया। उनकी बातों में रस कई भाँति का मिला, तथ्य न मिला। कुछ देर के बाद उन बातों से मैने तथ्य पाने का यत्न ही छोड़ दिया और चुपचाप पाप-पुण्य, धर्म-अधर्म का विवेचन सुनता रहा। पता लगाने पर मालूम हुआ कि ब्रजनंदन के पास खुद यानी जाह्नवी का पत्र आया था। पत्र मैने स्वयं देखा। उस पत्र को देख कर मेरे मन में कल्पना हुई कि अगर वह मेरी लड़की होती तो? - मुझे यह अपना सौभाग्य मालूम नहीं हुआ कि जाह्नवी मेरी लड़की नहीं है। उस पत्र की बात कई बार मन में उठी है और घुमड़ती रह गई। ऐसे समय चित्त का समाधान उड़ गया और शून्य चारों ओर से ढके हुए हैं उसकी ओर देखता रह गया हूँ।

पत्र बड़ा नहीं था। सीधे-सादे ढंग से उसमें यह लिखा था कि आप जब विवाह के लिये यहाँ पहुँचेंगे तो मुझे भी प्रस्तुत पायेंगे। लेकिन मेरे चित्त की हालत इस समय ठीक नहीं है और विवाह जैसे धार्मिक अनुष्ठान की पात्रता मुझमें नहीं है। एक अनुगता आपको विवाह द्वारा मिल जायगी। लेकिन विवाह द्वारा सेविका नहीं मिलनी चाहिए-- धर्मपत्नी मिलनी चाहिये। -- वह जीवनसंगिनी भी हो। वह मैं हूँ या हो सकती हूँ इसमें मुझे बहुत सन्दह है। फिर भी अगर आप चाहें, आपके माता-पिता चाहें तो प्रस्तुत मै अवश्य हूँ। विवाह में आप मुझे लेंगे और स्वीकार करेंगे तो मैं अपने को दे ही दूँगी और आपके चरणों की धूलि माथे से लगाऊँगी। आपकी कृपा मानूँगी। कृतज्ञ होऊँगी। पर निवेदन है कि यदि आप मुझ पर से अपनी माँग उठा लेंगे, मुझे छोड़ देंगे, तो कृतज्ञ होऊँगी। निर्णय आपके हाथ में है। जो चाहें, करें।

मुझे ब्रजनंदन पर आश्चर्य आकर भी आश्चर्य नहीं होता। उसने दृढ़ता के साथ कह दिया कि मैं यह शादी नहीं करुगा। लेकिन उसने मुझसे अकेले में यह भी कहा कि चाचा जी, मैं और विवाह करुंगा ही नहीं, करुंगा तो उसी से करुंगा। उस पत्र को वह अपने से अलहिदा नहीं करता है। और में देखता हूँ कि उस ब्रजनंदन का ठाठ-बाट आप ही कम होता जा रहा है। सादा रहने लगा है और अपने प्रति सगर्व बिलकुल भी नहीं दीखता है। पहले विजेता बनना चाहता था, अब विनयावनत दीखता है और आवश्यकता से अधिक बात नहीं करता। एक बार प्रदर्शिनी में मिल गया। मैं देखकर दहरत में रह गया। ब्रजनंदन एकाएक पहिचाना भी न जाता था। मैने कहा- ''ब्रजनन्दन, कहो क्या हाल है?''

उसने प्रणाम करके कहा-- ''अच्छा है।''

वह मेरे घर पर भी आया।

पत्नी ने उसे बहुत प्रेम किया और बहुत-बहुत बधाइयाँ दीं कि ऐसी लड़की से शादी होने से चलो भगवान ने समय पर रक्षा कर दी। जाह्नवी नाम की लड़की की एक-एक छिपी बात बिरजू की चाची के मालूम हो गई है। वे बातें- ओह! कुछ न पूछो, बिरजू भैया! मुँह से भगवान किसी की बुराई न करावे। लेकिन--

फिर कहा-- ''भई, अब बहू के बिना काम कब तक हम चलावें, तू ही बता। क्यों रे, अपनी चाची को बुढ़ापे में भी तू आराम नहीं देगा? सुनता है कि नहीं?''

ब्रजनंदन चुपचाप सुनता रहा।

पत्नी ने कहा-- ''और यह तुझे हो क्या गया है? अपने चाचा की बात तुझे भी लग गई है क्या? न ढंग के कपड़े, न रीत की बातें। उन्हें तो अच्छे कपड़े-लत्ते शोभते नहीं हैं। तू क्यों ऐसा रहने लगा है रे?''

ब्रजनंदन ने कहा-- ''कुछ नहीं, चाची। और कपड़े घर रखे हैं।''

अकेले पाकर मैने भी उससे कहा-- ''ब्रजनंदन बात तो सही है। अब शादी

करके काम में लगना चाहिए और घर बसाना चाहिए। है कि नहीं?''

ब्रजनंदन ने मुझे देखते हुए बड़े बूढ़े की तरह कहा-- ''अभी तो बहुत उमर पड़ी है, चाचाजी।''

मैने इस बात को ज्यादा नहीं बढ़ाया।

अब खिड़की के पास इतवार को, सोमवार को, मंगलवार को और आज बुधवार को भी सबेरे ही सबेरे छत पर नित सेटी के मिस कौओं को पुकार- पुकार कर बुलाने खिलाने वाली यह जो लड़की देख रहा हूँ सो क्या जाह्नवी है ? जाह्नवी को मैंने एक ही बार देखा है, इसलिए मन को कुछ निश्चय नहीं होता है। कद भी इतना ही था; लावण्य शायद उस जाह्नवी में अधिक था। पर यह वह नहीं है-- जाह्नवी नहीं है, ऐसी दिलासा मैं मन को तनिक भी नहीं दे पाता हूँ। सबेरे ही सबेरे इतने कौए बुला लेती है कि खुद दीखती ही नहीं, कंाले काले वे ही वे दीखते हैं। और वे भी उसके चारों ओर ऐसी छीन-झपट सी करते हुए उड़ते रहते हैं मानो बड़े स्वाद से, बड़े प्रेम से चींथ-चींथ कर उसे खाने के लिए आपस में बदाबदी मचा रहे हैं। पर उनसे घिरी वह कहती है, ''आओ, कौओं, आओ।'' जब वे आ जाते है तो गाती है--

''कागा चुन चुन खाइयो...!''

और जब जाने कहाँ-कहाँ इकट्ठे के इकट्ठे काँऊ-काँऊ करते हुए चुन-चुन कर खाने लगते हैं और फिर भी खाऊँ-खाऊँ करके उससे भी ज्यादा माँगने लगते हैं तब वह चीख मचा कर चिल्लाती है-- कि ओ रे कागा, नहीं, ये--

''दो नैना मत खाइयो!
मत खाइयो--
पीउ मिलन की आस।''

8.3.3 प्रतिपाद्य विषय की समीक्षा

जाह्नवी जैनेन्द्र कुमार की एक महत्वपूर्ण कहानी है। इसमें प्रेम में टूटी हुई एक स्त्री की मानसिक दशा की अभिव्यक्ति है किन्तु यह सारी अभिव्यक्ति एक अनुकूल परिवेश-बिंब के माध्यम से है। कथावाचक पात्र जाह्नवी को सामने की छत पर देखता है और उसे लगता है कि यह जाह्नवी ही होगी। वह उड़ते हुए कौओं के बीच घिरी हुई है और रोटी के टुकड़े फेंकती हुई गाती है-

''कागा चुन चुन खाइयो...!
दो नैना मत खाइयो
मत खाइयो-
पीउ मिलन की आस।''

इन पंक्तियों की अन्तर्निहित भाव और कौओं का घिरा हुआ काला झूठ ही जाह्नवी की कथा है। जाह्नवी कहती है, सब खा जाओ, अब इस जीवन में रखा ही क्या है लेकिन ये दो नैना मत खाना, इनमें अभी भी प्रिय को देखने की इच्छा है, ये नैना अभी भी प्रिय की राह देखती है, और इसी बिंब के भीतर से उभरती हुई कथा अतीत की ओर चली जाती है और फिर एक हल्की सी अतीत कथा लौटकर इसी बिंब पर आघात करती है और बिंम्ब अपनी अनुभूति की समग्रता और तीव्रता में अत्यधिक मार्मिक हो उठता है। ऐसा कहा जा सकता है कि जाह्नवी कहानी में चिरवियोग का निरुपण हुआ है। कहानी में रहस्यमयता का भी दर्शन होता है।

कहानी अपनी स्वाभाविक गति से आगे बढ़ती है। लेखक कथावाचक के रूप में कहानी के हर पहलू को हमारे सामने रखते जाते हैं। जाह्नवी हर रोज छत पर आती है, कोओं को बुलाकर रोटी खिलाती है और लेखक रोज ये दृश्य प्रत्यक्ष करते हैं। कौएँ खाकर उड़ जाते है, फिरभी वह उन्हें देखती रहती थी। गाना समाप्त हो जाता था। लेकिन उसकी ओंठ खुले थे, दृष्टि स्थिर थी। लेखक सोचते हैं ''जाने, भूली-सी वह क्या देखती रह गई।'' ऐसा लगता है जैसे वह किसी की राह देख रही हो...।

जाह्नवी को लेकर लेखक के मन में अनेक शंकाए हैं। छत पर कपड़े सुखाती हुई, कोओं को गाना गाकर रोटी खिलाती हुई लड़की क्या जाह्नवी है ? जब ब्रजनंदन की चाची ने उसका विवाह जाह्नवी के साथ तय कर दिया तब उसने ब्रजनंदन को पत्र क्यों लिखा। क्या इसलिए कि वह किसी और से प्रेम करती थी ? अगर वह किसी और से प्रेम करती थी तो वह कौन था ? ऐसा लगता है जाह्नवी छत पर अपने प्रेमीका राह देखती है। शायद उसके नैन प्रियतम के प्रतीक्षा में प्रतिक्षारत है। इसलिए वह कहती हैं ''इन दो नैनों को छोड़ देना। इन्हे कहीं मत खा लेना। क्याँ तमु नहीं जानते कि उन नैनों मे एक आस बसी है जो पराए के बस है। वह नैना पीउ की बाट में हैं।''

जाह्नवी ने ब्रजनंदन की जो पत्र लिखा, उस पत्र को लेकर जाह्नवी के चरित्र पर तमाम लांक्षन लगाए गए और ब्रजनंदन की चाची ने इस बात पर संतोष व्यक्त किया कि मामला समय पर खुल गया। बच गए; नहीं तो कहीं मुँह दिखाने लायक नही रहते। लेकिन ठिक उसी वक्त ब्रजनंदन के चाचा का अनुभव है कि ''अगर वह मेरी लड़की होती तो ? मुझे यह अपना सौभाग्य मालूम नहीं हुआ कि जाह्नवी मेरी लड़की नही है।'' चाचा का यह सोच कहानी को एक नया अर्थ प्रदान करता है।

जैनेन्द्र ने अपनी कहानियों में जिस सत्य को अभिव्यक्त किया है, उसके आयाम अधिक नहीं है उनकी कहानियों में इसका सबसे प्रमुख आयाम है प्रेम का त्रिकोण। इस त्रिकोण के माध्यम से उन्होने प्रेम के स्वरूप को समझाने का प्रयत्न किया है। इस त्रिकोण वाली उनकी कहानियों में पात्रों की मनोवृत्तियों का सूक्ष्म चित्रण

है। और ये मनोवृत्तियाँ प्राय: असामान्य हैं। जाह्नवी कहानी में भी इस त्रिकोण प्रेम की झलक मिलना जाह्नवी का छत पर अपना प्रेमी की राह देखना और ब्रजनंदन का ये कहना कि 'मैं और विवाह करुँगा ही नहीं, करुँगा तो उसी से करुँगा।'' प्रेम की त्रिकोणात्मक संबंध ही स्थापित करता है।

जाह्नवी एक भावप्रवन कहानी है। कहानी कहानीकार की अनुभूतियों की अभिव्यक्ति है। इस कहानी में जैनेन्द्र ने बहुत सरल और सजीव रूप से स्त्री मन की सूक्ष्म मनोवृत्तियों का चित्रण किया है।

- *कथावस्तु* : जाह्नवी महान कथाकार जैनेन्द्र कुमार का यह उल्लेखयोग्य कहानी है। कहानी का मुख्य पात्र है जाह्नवी। लेखक हर रोज की तरह सबेरे उठकर, कमरे से बाहर की ओर झाँक रहे थे, मुहल्ले के एक मकान की छत पर काँव-काँव करते हुए कौओं से घिरी हुई एक लड़की उन्हे दिखाई दिया। आज चौथा रोज है जब वह इस लड़की को सुबह छत पर देख रहे है। हर रोज सुबह यह लड़की गाना गाकर कौऔ की आंमन्त्रित करती है और रोटी खिलाती है। लड़की गाती है ...

  ''कागा चुन चुन खाइयो...।
  दो नैना मत खाइयो, मत खाइयो...
  पीउ मिलन की आस।''

  गाने के साथ वह अपने हाथ की रोटियों में से तोड़ तोड़ कर नन्हे नन्हे टुकड़े चारों ओर फेंकती है। पूरा छत कौओं से बिल्कुल काली पड़ जाती है। विगत तीन दिन से यही नजारा लेखक देख रहे हैं। और आज भी वही नजारा है। लड़की बहुत उत्साहित होकर काओं को बुलाती हे और रोटी खिलाती है। लेखक ने देखा, कि रोटियाँ खत्म हो गई, कौए उड़ चले। लड़की एक एक कर उनके उड़ कर जाता हुआ देखने लगी। अब लड़की अकेली छत पर खड़ी थी। गाना समाप्त हो गया था। लड़की के ओठ खुले थे, वह अभी भी स्थिर दृष्टि से किसी ओर देख रही थी। लेखक के घर उनके साली आइ हुई थी। उन्होने उनसे पूछा क्या वह जाह्नवी का मकान कहा है जानती है? इससे ज्यादा कुछ पूछना उन्हे मुनासिब नहीं लगा। क्यों कि उन्होंने एकबार ही जाह्नवी को अपने घर में देखा था। उनकी साली के साथ वह आई थी।

  इसके बाद भी हर रोज लड़की छत पर आकर गाना गाती हुई कौओं को रोटी खिलाती है और हर रोज लेखक ये नजारा देखते हैं। वह कोओं से कहती है ''एकबात है कि ओ कौओं, जो तन चुन-चुन कर खा लिया जायगा उसको खा लेने में खुशी से मेरी अनुमति है। वह खा-खु कर तुम सब निबटा देना। लेकिन ऐ मेरे भाई कौओं इन दो नैनों को छोड़ देना। इन्हे कहीं मत खा लेना... वह नैना पीउ

की बाट में है। उस दिन भी लेखक ये नजारा देख रहे थे कि उनकी पत्नी आकर पूछती है कि उन्हे जाह्नवी कैसी लगती है ? इसी प्रसंग में वह आगे कहती है कि उन्होंने जाह्नवी को बिरजु के लिय जो उनका भतीजा है, पसंद किया है। फिर लेखक को पता चलता है कि यह शादी की बात बहुत आगे बढ़ चुका है। चाह्नवी की माता पिता से भी बातचीत हो गई। लेकिन जब सब ठीक ही गया उस समय ब्रजनंदन (भतीजा) के पास एक पत्र आ पहुँचा पत्र जाह्नवी था और सब चौपट हो गया। पता चला कि जाह्नवी किसी और से प्रेम करती है। वह इस शादी के लिए मानसिक रुप से तैयार नहीं है। इसके बाद लेखक की पत्नी के लिए जाह्नवी अच्छी लड़की नहीं रही लेकिन जब लेखक ने उस पत्र को पढ़ा तब उन्हें ऐसा लगा कि अगर वह उनकी लड़की होती तो! ब्रजनंदन ने भी दृढ़ता के साथ कह दिया कि मैं यह शादी नहीं करूंगा। लेकिन उसने लेखक को अकेले में यह भी कहा कि वह विवाह करेगा ही नहीं, करेगा तो उसीसे करेगा। उसके बाद भी लेखक देखता है कि वह लड़की छत पर सुबह आती है और कौओं को रोटी खिलाती है। लेखक सोचते हैं किजो लड़की वह रोज देखते हैं क्या वही जाह्नवी है ? जाह्नवी को उन्होने एक बार ही देखा है। फिर भी वह मान लेते हैं कि वही लड़की जाह्नवी है। जो रोज सबेरे गाती है ...

''कागा चुन चुन खाइयो

.....

दो नैना मत खाइयो।

मत खाइयो...

पीउ मिलन की आस।''



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 4 : लड़की घर के किस हिस्से पर जाकर गाना गाती है ?

.....

प्रश्न 5 : खाली जगह को पूर्ण कीजिए–

.....चुन चुन खाइयो ..... मत खाइयो।

प्रश्न 6 : लड़की कौओं को रोटी खिलाती है। (झूठ/सच)

.....

- *चरित्र–चित्रण :* कहानी का मुख्य पात्र है जाह्नवी। लेखक स्वयं कथावाचक के रुप में नजर आता है। अन्य पात्र–लेखक की पत्नी, ब्रजनंदन और साली गौण चरित्र है। अत: कहानी के मुख्य पात्र जाह्नवी का ही चरित्र चित्रण किया गया हैं...

जाह्नवी कहानी का आरम्भ होता है एक लड़की से जो हर सुबह छत पर कौओं को रोटी खिलाती रहती है। लेखक के अनुसार यह लड़की ही जाह्नवी है। जिसको उनके भतीजा ब्रजनंदन के लिए पसंद किया गया था। लेकिन पता चला लड़की किसी और से प्रेम करती है।

जाह्नवी की चिट्ठी से, छत पर उसका आव-भावसे और उसके गाना सुनकर हम निश्चित रुप से कह सकते हैं कि वह किसी के प्रेम में आकन्ठ डूबी हुई है। जाह्नवी वियोगिनी है। वह किसी से निस्वार्थ प्रेम करती है और उसी की प्रतिक्षा में प्रतिक्षारत है।

जब जाह्नवी ब्रजनंदन को पत्र लिखती है जिसमें उसने अपनी मानसिक स्थिति का वर्णन किया है, उसमें जाह्नवी का निदर। और निर्भीक होना पता चलता है। अपना हाल वह बहुत कुशलतापूर्वक बताती है।

जाह्नवी सुन्दर युवती है। लेखक को वह बहुत भली मालूम होती है। उनकी पत्नी को भी वह पसंद थी लेकिन चिट्ठी मिलने के बाद उनको जाह्नवी अच्छी नहीं लगती। जाह्नवी पर बहुत से लांछन लगाये जाते हैं। लेकिन जाह्नवी को इससे क्या। उसके नैन तो अपने प्रेमी की राह देख रहे हैं।

जिस भाव से जाह्नवी ने चिट्ठि लिखी उससे पता चलता है कि वह बहुत ही सीधा और सपाट बोलती है। किसी भी बात का लुकाव छिपाव नहीं। जो उसके मन में है वही उसकी जुबान पर है।

जाह्नवी प्रेममेंटूटी हुई एक स्त्री है लेकिन कमजोर नहीं है।

- *संवाद और वातावरण :* 'जाह्नवी' कहानी में प्रयुक्त कथोपकथन या संवाद अत्यंत सजीव, स्वाभाविक और पात्रानुकूल है संवाद संक्षिप्त, सूक्ष्म और चरित्रोदघाट्क में सहायक हैं।

  यथा – ''क्यों, कैसी है ?''

  मैंने कहा था– ''बहुत भली मालूम होती है, सुन्दर भी है। पर क्यों ?''

  ''अपने बिरजु के लिए कैसी रहेगी ?''

  मैने कहा – ''अरे, ब्रजनन्दन! वह उसके सामने बच्चा है।''

  पत्नी ने अचरज से कहा – ''बच्चा है! बाइस बरस का तो हुआ।''

  जाह्नवी कहानी में वातावरण चित्रण का ज्यादा अवसर है। सुबह की वह छत, और लड़की का वहाँ कौओं को रोटी खिलाना, सव कुछ बहुत स्वाभाविक सा लगता है।'' छूप अभी-फूटी ही थी। आसमान गहरा नीला था।'' सुबह का ऐसा वर्णन अत्यंत सजीव और सुन्दर है।

- *भाषा-शैली :* जैनेन्द्र कुमार की भाषा शैली इनके शिल्प विधान की प्रमुख विशेषताओं में से है। इसमें इतनी स्वाभाविकता और प्रवाह है कि कहानियाँ अपनी संवेदना के

साथ पाठक के अंतस्थल को भी स्पर्श करती हैं। जहाँ व्यक्ति विश्लेषण हुआ वहाँ की भाषा गद्य शिल्पी की हुई है ? जैनेन्द्र की भाषा में भावोचित शब्द निर्माण स्वाभाविक शब्दचयन और शब्द-विस्तार इतना है कि उन्होने सूक्ष्म से सूक्ष्म भावों की अभिव्यक्ति में सफलता प्राप्त की है। 'जाह्नवी' कहानी की शैली अत्यंत सजीव, सरल और प्रवाहपूर्ण है।



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 7 : जाह्नवी किसे पत्र लिखती है ?

.....

प्रश्न 8 : ब्रजनंदन लेखक का भतिजा है। (सच/झूठ)

.....



8.4 प्रस्तुत अध्याय से हमने सीखा

- जाह्नवी जैनेन्द्र कुमार की अमर कहानियों में से एक है।
- यह कहानी मानव मनोविज्ञान पर आधारित है।
- कहानी प्रेम में टूटी हुई एक स्त्री की मानसिक दशा की अभिव्यक्ति है।
- प्रेम पर अटूट विश्वास होना जरुरी है।



8.5 विस्तृत जानकारी हेतु पढ़ें

1) डॉ हरदयाल : *हिन्दी कहानी परम्परा और प्रगति*
2) कुमार कृष्ण : *कहानी के नये प्रतिमान*
3) डॉ लक्ष्मीनारायण लाल : *आधुनिक हिन्दी कहानी*
4) रामदरश मिश्र : *हिंदी कहानी : अंतरंग पहचान*

8.6 स्वनिरीक्षण का पुनर्निरीक्षण

प्रश्नोत्तर 1 : 1905 में, कौड़ियागंज, अलीगढ़ में।

प्रश्नोत्तर 2 : सच

प्रश्नोत्तर 3 : प्रेमचन्दोत्तर

प्रश्नोत्तर 4 : छत पर

प्रश्नोत्तर 5 : कागा, दो नैना

प्रश्नोत्तर 6 : सच

प्रश्नोत्तर 7 : ब्रजनंदन को



8.7 सम्भावित प्रश्न



प्रश्न 1 : जाह्नवी की चारित्रिक विशेषताओं को रेखांकित कीजिए।

प्रश्न 2 : 'जाह्नवी' एक मनोवेज्ञानिक है। धरातल पर रचित कहानी है। स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न 3 : जाह्नवी ब्रजनंदन को पत्र क्यों लिखती है और पत्र में क्या लिखती है ?

प्रश्न 4 : कहानी की कसौटी पर 'जाह्नवी' कहानी की समीक्षा कीजिए।

प्रश्न 5 : वातावरण तथा भाषा-शैली की दृष्टि से 'जाह्नवी' कहानी का विश्लेषण कीजिए।

प्रश्न 6 : 'जाह्नवी' कहानी के शीर्षक की सार्थकता पर प्रकाश डालिए।

*** ***** ***

इकाई 9 : आचार्य रामचन्द्र शुक्ल – मित्रता

इकाई की रूपरेखा

9.1 उद्देश्य

9.2 प्रस्तावना

9.3 आचार्य रामचन्द्र शुक्ल

9.3.1 जीवन एवं साहित्य

9.3.2 मित्रता : कथ्य एवं उद्देश्य

9.3.2 मित्रता : महत्त्वपूर्ण प्रसंग

9.4 प्रस्तुत अध्याय से हमने सीखा

9.5 विस्तृत जानकारी हेतु पढ़ें

9.6 स्वनिरीक्षण का पुनर्निरीक्षण

9.7 सम्भावित प्रश्न

9.1 उद्देश्य

प्रस्तुत अध्याय से आप सीखेंगे –

- आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के जीवन एवं साहित्य के विषय में
- मित्रता क्या है तथा इसका औचित्य क्या है
- आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का साहित्य में अवदान के विषय में
- हिन्दी निबंध और मित्रता के विषय में

9.2 प्रस्तावना

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के समय गद्य शैली का पूर्ण विकास हुआ, भाषा का परिष्कार हुआ और व्याकरणिक दृष्टि से उसे व्यावहारोपयोगी एवं सुस्थिर बनाया गया तो द्विवेदी युग के बाद ही एक नये सबल एवं समृद्ध युग का प्रारंभ हुआ। यह युग हिन्दी निबंधों एवं अन्य गद्य विधाओं के लिए स्वस्थता, सबलता, प्रौढ़ता लेकर आया। लक्ष्मीनारायण सुधांशु अपने हिन्दी साहित्य का वृहत् इतिहास में लिखते हैं– ''पिछले युग की जो आन्तरिक और बाहरी स्थूलता थी, वह जारी रही और निबंध सूक्ष्म एवं अन्तर्मुखी हो गया। विवरण का अनावश्यक आडम्बर हटाया गया और रूप तथा आत्मा उसकी प्रौढ़ता की ओर बढ़ती गयी। दृष्टिकोण की व्यापकता से विषय की विशदता, सुलझे विचारों से शैली की सहजता का स्वयं समावेश हुआ।'' इस युग के प्रणेता एवं कर्णधार आचार्य रामचन्द्र शुक्ल हैं। यह युग शुक्ल–युग के नाम से ख्यात् एवं गद्य के सर्वांगीण विकास का स्वर्ण युग कहलाता है।



इसे भी जानें

शुक्ल युग के प्रमुख निबंधकार हैं - शिवपूजन सहाय, जयशंकर प्रसाद, बाबू गुलाब राय, वियोगी हरि, पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी, रायकृष्ण दास, शांतिप्रिय द्विवेदी , माखनलाल चतुर्वेदी, वासुदेवशरण अग्रवाल।

9.3 आचार्य रामचन्द्र शुक्ल : जीवन एवं साहित्य

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का जन्म 4 अक्टूबर 1884 ई.को उत्तर प्रदेश के बस्ती जिले के अगोना नामक गाँव में हुआ। इनके पिता चन्द्रबली शुक्ल सदर कानूनगो थे। इन्हें नौ वर्ष की आयु में मातृ-वियोग सहना पड़ा। पिता एवं विमाता के निरंकुश शासन तथा उपेक्षापूर्ण व्यवहार ने इनके बाल हृदय पर कुठाराघात किया। बचपन मिरजापुर में बीता। यहीं से सन् 1901 में हाई स्कूल की परीक्षा पास की तथा इलाहाबाद स्थित कायस्थ विद्यालय में पढ़ने चले गये किन्तु ईण्टर की पढ़ाई अधूरी छोड़ सन् 1904 में मिरजापुर स्थित लंदन मिशन स्कूल के ड्राईंग मास्टर बने। यह वही स्कूल था जहाँ से इन्होंने हाई स्कूल परीक्षा पास की थी। काशी नागरी प्रचारणी सभा, वाराणसी, के आमंत्रण पर सन् 1908 ई. में अपना योगदान दिया तथा हिन्दी शब्दसागर के सम्पादन से जुड़े। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में सन् 1919 ई. में अपना योगदान दिया तथा सन् 1937 ई. में यहीं हिन्दी विभाग के विभागाध्यक्ष बने।

9.3.1 आचार्य रामचन्द्र शुक्ल : जीवन एवं साहित्य

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के प्रारंभिक निबंध अंग्रेजी से अनूदित है। कल्पना का आनन्द (एडिसन - प्लेजर ऑफ इमेजिनेशन), साहित्य (जॉन हेनरी न्यूमैन-लिटरेचर), आदर्श जीवन (प्लेन लिविंग एण्ड हाई थिंकिंग), विश्वप्रपंच (जोसेफ मैकबैक - रिडल ऑफ द यूनिवर्स)। इस बीच इन्होंने हिन्दी निबंध भी लिखे जो चिन्तमणि में संग्रहीत हैं जो आगे चलकर चार भागों में प्रकाशित हुए। इनकी कुछ प्रमुख कृतियाँ इस प्रकार हैं- हिन्दी साहित्य का इतिहास (वस्तुतः यह पुस्तक हिन्दी शब्द सागर की भूमिका के रूप में लिखी गई थी, जो कालान्तर में एक स्वतंत्र पुस्तक के रूप में छपी) जायसी, जायसी-ग्रन्थावली, तुलसीदास, सूरदास, रस मीमांसा, मधु स्रोत (कविता), हिन्दी शब्द सागर इत्यादि प्रमुख हैं।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने निबंध के प्रत्येक विधा पर लेखनी चलायी। इनके निबंधों में एक ओर चिन्तन की मौलिकता, विवेचन की गंभीरता, विश्लेषण की सूक्ष्मता एवं शैली की प्रौढ़ता दृष्टिगोचर होती है, वहीं दूसरी ओर इनमें लेखक की

वैयक्तिकता, भावात्मकता एवं व्यंग्यात्मकता भी है। इनके निबंधों में व्यक्ति एवं विषय का ऐसा सफल समन्वय हुआ है कि इस बात निर्णय करना कठिन हो जाता है कि इन्हें व्यक्ति प्रधान कहा जाये या विषय प्रधान। इनके निबंधों में सूक्ष्म मनोवैज्ञानिकता के साथ-साथ इनके समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण का भी हमें आभास होता है। भावाभिव्यंजना के लिए उपयुक्त एवं सशक्त सारगर्भित शब्दावली का प्रयोग इनकी विशेषता है। इनके शब्द-विधान में तत्समता, अधिक पायी जाती है। यही कारण है कि अंग्रेजी के प्रारंभिक निबंधकार लॉर्ड बेकन (1561-1626) से आचार्य शुक्ल की तुलना की जाती है।

वस्तुत: आचार्य शुक्ल की शैली मूलत: विचार और विवेचन की शैली है। इनके निबंध इनके बौद्धिक मन्थन के परिणाम हैं। ये अमोघ व्यंग्य-शैली के लिये भी प्रसिद्ध हैं। अत: कह सकते हैं कि विचारत्मकता, भावात्मकता एवं व्यंग्यप्रियता-ये शुक्ल के निबंध शैली की तीन प्रमुख विशेषताएँ हैं। यही कारण है कि संयम, मर्यादा-प्रियता, सामंजस्यमयी जीवन - दृष्टि, तत्त्वान्वेषिणी प्रज्ञा, स्वाभिमान, देश-प्रेम, सौन्दर्य चेतना, आत्मविश्वास, पसन्द-नापसंद, रीझ-खीझ - ये सब इनकी गद्य शैली के रूप में संघटक तत्त्व बन गये हैं। इनके संयम, मर्यादाप्रियता और सामंजस्यमयी जीवन-दृष्टि का ही परिणाम है कि इनकी बातें नपी-तुली होती थी।

इनके निबंधों में प्रवेश पाने के लिए एक सीमा तक काव्यशास्त्रीय एवं दार्शनिक विषयों का ज्ञान अपेक्षित है। इन्होंने काव्य चित्रण को प्रमाणित करने वाले निबंध लिखे, जिनका महत्व आज भी है। कविता क्या है, काव्य में लोकमंगल की साधनावस्था, साधारणीकरण और व्यक्ति-वैचित्र्यवाद, रसात्मक बोध के विविध रूप, काव्य में रहस्यवाद, काव्य में अभिव्यंजनावाद। वस्तुत: आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की रचना दृष्टि इनके नैतिक जीवनबोध से प्रेरित और परिचालित है। इनके जीवनबोध में महावीर प्रसाद द्विवेदी के मातृभाषा प्रेम, स्वतंत्रता और लोकोपकार के घटक तत्त्वों का ही विस्तार लक्षित होता है। इनमें अन्तर केवल इतना है कि जहाँ आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने इन तत्त्वों को इतिहास और महापुरुषों की जीवनियों से ग्रहण किया वहीं आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने इन्हें दर्शन, धर्म, साहित्य और मनोविज्ञान के विचार-केन्द्रों से ग्रहण करके अपने से पुष्ट किया।

इन्होंने अपने निबंध समास शैली में लिखे हैं। इनकी भाषा चुस्त एवं इनमें विचारों की एक पूरी अर्थ परम्परा गुम्फित है। ''बीच-बीच में जब कभी वे उनमें कोई आत्म-प्रसंग, मित्र प्रसंग या काव्य-प्रसंग डालकर या किसी प्रतिपक्षी पर गूढ़ व्यंग्य करके ईषत् हास्य की सृष्टि करते हैं तो पाठक को एक रम्यभूमि मिल जाती है और वह सुख की अनुभव करता है। आचार्य शुक्ल के निबंधों में आद्योपान्त एक खास ढंग की पारिभाषिकता भी है इसलिए उनकी मर्मभूमि में सुपठित, विचारशील और सहृदय

पाठक ही प्रवेश पा सकता है। आचार्य शुक्ल के व्यक्तित्व का विकास स्वतंत्रता संघर्ष के दौरान हुआ था। यह वह समय था जब अंग्रेज सामान्यत: भारतीय मनीषा को हर स्तर पर पिछड़ी हुई प्रमाणित कर रहे थे। आचार्य शुक्ल ने उनकी चुनौती को स्वीकार किया। उनके चिन्तन के पीछे तिलक के अनासक्त कर्मयोग का तप कार्य कर रहा था। इनका सारा साहित्य चिन्तन भारतीय मनीषा के उत्कर्ष बिन्दुओं को रेखांकित करने वाला है। इनके निबंध सच्चे अर्थों में इनकी रागदीप्त बौद्धिक यात्रा के आलोक बिन्दु हैं। इनकी मृत्यु 2 फरवरी 1941 ई. को हुई।



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 1 : आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का जन्म कब और कहाँ हुआ था ?

.....



अनुशीलन

आप आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के निबंध पढ़ें तथा उनकी समीक्षा प्रस्तुत करें। इससे आपका हिन्दी संबंधी ज्ञान बढ़ेगा।

9.3.2 मित्रता : कथ्य एवं उद्देश्य

आचार्य शुक्ल के चिंतन में यथार्थ और आदर्श का अद्भुत सामंजस्य है। आदर्श पर उनकी आस्था है और यथार्थ के प्रति स्वीकार। गोस्वामी तुलसीदास की तरह वे भी यह मानते हैं कि यह संसार गुणदोषमय है, मूल्य बोध ज़रूर सत् के पक्ष में झुका हुआ है। शुक्ल जी की यह दृढ़ मान्यता थी कि आदर्श लोक हमेशा साध्य है और रहेगा। शुक्ल जी की यही दृष्टि उन्हें प्रयत्न पक्ष के प्रति आस्थावान बनाती है। इसका तात्पर्य यह भी है कि काल विशेष के लिए जो लोक-व्यवस्था स्थापित की जायेगी, वह कालांतर में भीतरी विकृतियों या बाहरी चुनौतियों के कारण अपर्याप्र सिद्ध हो सकती है उस स्थिति में उसे बदलना और नयी व्यवस्था बनाना ही लोक मंगल के अनुरूप होगा। अत: यह कहा जा सकता है किन आचार्य शुक्ल का दर्शन गतिशील दर्शन है, जड़ नहीं। शुक्ल जी अपने युग पर पैनी निगाह रखने वाले चिंतक साहित्यकार थे। उनका युग स्वतंत्रता-संघर्ष का युग था। वे ऐसी व्यवस्था चाहते थे जिससे भारत की राष्ट्रीय अस्मिता सुरक्षित रहे और वह विकास के मार्ग पर अग्रसर हो सके। उनके मन में अपने समय के भारत की पराधीन स्थिति के प्रति गहरी पीड़ा थी- 'उसी

भारतवर्ष को जहाँ से किसी समय में भूमण्डल की सभ्य जातियों को सदाचरण और धर्म की शिक्षा मिलती थी, आज काल ने दारिद्रय, अज्ञान और मूर्खता के साथ सच कर दिया है।'[5] इसी संदर्भ में उन्होंने What has India to do (भारत को क्या करना चाहिए) नामक निबंध लिखा था। इस निबंध में वे अपनी राजनीतिक एवं सामाजिक एवं परिस्थिति को बदलने का आह्वान करते हैं। वे इसके लिए एक साथ समाज सुधारक, आन्दोलनकर्ता, कवि और शिक्षाविद् की आवश्यकता का अनुभव करते हैं।[6] इससे पता चलता है कि अपने समय की नब्ज पर उनकी पकड़ कितनी मजबूत थी। वे अपने समय के विश्व में उठ रहे सामाजिक, साहित्यिक एवं सांस्कृतिक आन्दोलनों से परिचित थे और सूक्ष्म दृष्टि से उसका निरीक्षण-परीक्षण भी कर रहे थे। शुक्ल जी का लेखनकाल विश्व पटल पर कम्युनिज़्म विचारधारा के कदम एवं प्रसार का काल भी है। इसके मूल में कार्ल मार्क्स द्वारा प्रतिपादित विचार रहा है। भारतवर्ष पर भी इस विचाराधार का जबर्दस्त प्रभाव पड़ा। यहाँ के साहित्यकार, सामाजिक राजनीतिक चिंतक एवं संस्कृतिकर्मी मार्क्सवादी विचारधारा के प्रभाव में आये। अपनी काव्य रचना के क्रम में छायावाद के प्रसद्धि कवि सुमित्रानंदन पंत का झुकाव इसकी ओर हुआ। फलस्वरूप 'युगांत' 'युगवाणी' एवं 'काव्य-संग्रहों की कविताएँ कम्युनिज़्म के प्रभाव में रची गयीं। प्रेमचंद ने भी बोल्शेविक क्रांति की प्रशंसा की। मार्क्सवाद के शोषण के विरुद्ध क्रांतिके नारे का साहित्य पर गहरा प्रभाव पड़ा। हिन्दी-साहित्यमें चला 'प्रगतिवाद' नामक आंदोलन इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है। किंतु आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का लेखन मार्क्सवादी विचारधारा से बिल्कुल अप्रभावित रहा, बल्कि यह कहना अधिक युक्तिसंगत होगा कि उन्होंने मार्क्सवादी सिद्धांत की तीखी आलोचना की। उन्होंने अपनी सैद्धांतिक और व्यावहारिक आलोचना में इसकी विसंगतियों को उजागर किया। यहाँ यह नहीं समझना चाहिए कि आचार्य शुक्ल संकीर्ण राष्ट्रीय विचारों के बंदी थे। उन्होंने तो खुलकर विदेशी विचारों की समीक्षा की और उसे स्वीकृति भी प्रदान की। एडिसन के 'प्लेजर्स ऑव इमेजिनेशन' और हैकेल की प्रसिद्ध पुस्तक 'रिडल ऑव दि यूनिवर्स' का अनुवाद उन्होंने किया। आपने आलोचना-सिद्धांतों में उन्होंने शैण्ड एडिसन एवरक्राम्बी और आई.ए. रिचर्ड्स को मान्यता दी। वस्तुत: वे सम्यक् दृष्टि के पक्षपाती थे। उन्होंने स्पष्ट कहा है- 'विदेशी संस्कृति के देश में कुछ गहराई तक फैलने से विदेशी दृष्टि से अपने यहाँ की बातों को देखने का रिवाज इतिहास, काव्य आदि में भी थोड़ा बहुत प्रभाव पाया जाता है। शुद्ध ज्ञान के प्रकरण में तो सम्यक् दृष्टि चाहिए- न देशी, न विदेशी।'

शुक्ल जी का भारतीय चिंतन पद्धति एवं जीवन दृष्टि में गहरा विश्वास है। भारतीय जीवन दृष्टि प्रकृति में व्याप्त अनेकरूपता-विविधता को महत्व देती है। इसलिए वे साहित्य में विविधता और विरुद्धों के सामांजस्य पर अधिक बल देते हैं।

उपनिषदों में संसार के लिए विशेषण ही प्रचलित हैं- नाना नाम रूपात्मकं जगत्। आचार्य शुक्ल जी इसे स्वीकार करते हैं।

मित्रता निबंध एक अत्यंत व्यावहारिक निबंध है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह नि:संग नहीं रह सकता। किन्तु मित्रता के नाम पर ऐसे-वैसे व्यक्तियों का संगति भी उचित नहीं जो क्षुद्रस्वार्थ एवं निम्न नैतिक स्तर से बंधा रहता है। वस्तुत: मित्र की पहचान कैसे हो सकती है इसे बड़े ही सहज एवं सरल ढंग से आचार्य शुक्ल ने प्रस्तुत निबंध में परोसा है। विश्वासपात्र मित्र जीवन के लिए औषधि समान होता है वहीं अविश्वासपात्र मित्र जीवन के प्रत्येक क्षेत्र के लिए घातक। अत: मित्रता के सन्दर्भ में हमें बहुत सावधानी से आगे बढ़ना चाहिए। मित्र सत्य निष्ठ हो, पथ-प्रदर्शक हो, सहयोग सहानुभूति रखता हो,ऐसा मित्र जीवन के लिए वरदान साबित होता है। दु:ख के क्षण में मित्र की पहचान होती है।

वस्तुत: कभी-कभार ऐसा भी होता है जिसे आप मित्र नहीं समझते किन्तु आपकी विपत्ति में आपके साथ खड़ा होना चाहता है। आपके दरवाजे पर जाये तो बाद में कहकर दरवाजा नहीं बन्द करना चाहिए। यह आपकी मूर्खता है। इन्हीं बातों को आचार्य शुक्ल अपने इस निबंध में उठाते हैं। प्रस्तुत निबंध के विवेचन से स्पष्ट होता है कि इसमें सूक्ष्मता तथा गंभीरता है। इस निबंध की विशेषता यह है कि इसमें मौलिकता, नवीन दृष्टि से विचार, एवं भाषा शैली की दृष्टि उच्चकोटि का चिन्तन रखता है। इस निबंध के माध्यम से निबंधकार विषय के स्थान पर स्वयं पाठक के मन पर छा गये हैं।

प्रस्तुत निबंध का कथ्य एवं उद्देश्य है कि मित्रता के चुनाव की उपयुक्तता पर ही व्यक्ति के जीवन की सफलता-असफलता निर्भर करता है। कारण संगति का गुप्त प्रभाव हमारे आचरण, संस्कार पर विस्तृत रूप से पड़ता है। मनुष्य के भीतर ही गुण-अवगुण, शुद्धात्मा-दुखात्मा वास करता है। यह मित्र ही होता है जो अच्छे-बुरे का फर्क बताता है। गलत रास्ते जाने नहीं देता। मित्र हमारे जीवन में शिक्षक, पथ-प्रदर्शक होता है। जिस प्रकार शिक्षक हमारी खामियों को निकाल अच्छी सीख देता है, आम जीवन में मित्र का भी यही काम होता है कि वह आपको उचित राय दे।



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 2 : आचार्य रामचन्द्र शुक्ल को अंग्रेजी के किस प्रारंभिक निबंधकार से तुलना की जाती हैं?

.....

प्रश्न 3 : आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के प्रारंभिक निबंध किस प्रकार के हैं?

.....

9.3.3 मित्रता : महत्त्वपूर्ण प्रसंग

➢ *''सच्ची मित्रता में उत्तम से उत्तम वैद्य की सी निपुणता और परख होती है, अच्छी से अच्छी माता का–सा धैर्य और कोमलता होती है।''*

एक प्राचीन विद्वान का कथन है ''विश्वास पात्र मित्र से बड़ी भारी रक्षा रहती है। जिसे ऐसा मित्र मिल जाये उसे समझना चाहिए कि खजाना मिल गया।'' विश्वासपात्र मित्र जीवन की एक औषधि है, हमें अपने मित्र से यह आशा रखनी चाहिए कि वे उत्तम संकल्पों में हमें दृढ़ करेंगे, दोषों और त्रुटियों से हमें बचाएंगे, हमारे सत्य, पवित्रता और मर्यादा के प्रेम को पुष्ट करेंगे। जब हम कुमार्ग पर पैर रखेंगे, तब वे हमें सचेत करेंगे, जब हम हतोत्साह होंगे तब हमें उत्साहित करेंगे। वे हमें उत्तमतापूर्वक जीवन निर्वाह करने में हर तरह से सहायता करेंगे।

कहने का तात्पर्य यह कि सच्च मित्र वही हो सकता है जो आपके प्रत्येक गुण–दोष पर गौर करें और आपको सन्मार्ग पर चलने को प्रेरित करे एवं आपके साहचर्य में निरंतर बना रहे। मित्र सर्वगुण संपन्न होता है। एक अच्छी माता का–सा धैर्य एवं कोमलता से आपको निरंतर सिंचित करे। जिस प्रकार एक शिक्षित मां ही सर्वप्रथम अच्छी सेवा सुषुर्शा एवं शिक्षा के बाद घर से निकालती है बच्चों को, या हमारे जीवन में माँ की जितनी बड़ी भूमिका होती है ठीक उसी प्रकार हमारे जीवन को भी एक अच्छा मित्र ही सजा–संवार सकता है।

हमें ऐसा मित्र चाहिए जो सच्चा पथ–प्रदर्शक, भातृत्व भाव लिये, सच्ची सहृदयता एवं सहानुभूति के साथ आपको संस्कृत रखे। आपके गुणों को ही न बखाने, वरन् आपके बुराइयों को भी उजागर करें एवं उसका परिमार्जन करे। प्रस्तुत निबंध में लेखक यह भी कहता है कि मित्रता के लिए यह आवश्यक नहीं है कि दो मित्र एक ही प्रकार का कार्य करते हों या एक ही रूचि के हों। प्रकृति और आचरण की समानता भी आवश्यक या वांछनीय नहीं है। दो भिन्न प्रकृति के मनुष्यों में बराबर प्रीति और मित्रता रही है। राम धीर और शांत प्रकृति के थे, लक्ष्मण उग्र और उद्धत स्वभावके थे, पर दोनों भाइयों में अत्यंत प्रगाढ़ स्नेह था। उदार तथा उच्चाशय कर्ण और लोभी दुर्योधन के स्वभावों में कुछ विशेष समानता न थी, पर उन दोनों की मित्रता खूब निभी।
कहने का तात्पर्य यह कि मित्रता विशृंखता नहीं शृंखला लाती है। अच्छी मित्रता इसलिए औषधि है।



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 4 : चिन्तामणि निबंध संग्रह कितने भागों में प्रकाशित है ?

.....

➢ *''कुसंग का ज्वार सबसे भयानक होता है। यह केवल नीति और सद्वृत्ति का हीं नाश नहीं करता, बल्कि बुद्धि का क्षय करता है।''*

कुसंगति सबसे बुरी चीज है। यह आपके संस्कार, संस्कृति, परम्परा आदि पर चोट करती है। कुसंगति का बुरा परिणाम जितना प्रत्यक्ष रूप से पड़ता है उससे कहीं अधिक बुरा परिणाम परोक्ष रूप से भी पड़ता है। कुसंगति हमारे चित्त का भी नाश करती है। रचनाकार कहती भी है कि जिनकी आत्मा अपने इन्द्रिय विषयों में लिप्त है, जिनका हृदय नीच आशयों और कुत्सित विचारों से कलुषित है, ऐसे नाशोन्मुखी प्राणियों को दिन-दिन अन्धकार में पतित होते देख कौन ऐसा होगा तरस न खाय। जिसने स्वसंस्कार का विचार अपने मन में ठान लिया हो, उसे ऐसे प्राणियों की साथ नहीं रहना चाहिए।

रचनाकार के कहने का तात्पर्य यह है कि कुसंगति ज्वर बहुत ही भयानक होता है। अर्थात् कुमार्गी मित्र आपको न मात्र नैतिक रूप से स्खलित करेगा बल्कि वह आपके सभी गुणों को भी अवगुण में बदल देगा। यह केवल आपको नैतिक रूप से पतित नहीं करता वरन् आपकी सद्वृत्ति तथा बुद्धि तक को भ्रष्ट कर देता है। इससे आपके जीवन की गति तक रुक जाती है।



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 5 : आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का किसका परिणाम है ?

.....

प्रश्न 6 : आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की निबंधों को किस प्रकार का पाठक सुपाच्य रूप से पढ़ सकता है ?

.....



9.4 प्रस्तुत अध्याय से हमने सीखा

- प्रस्तुत अध्याय से हमें यह ज्ञान मिलता है कि हम मित्र का चयन कैसे करें। मित्र एक प्रकार से जीवन को गति देने या जीवन को बर्बाद करने का काम करता है। मित्रता अच्छे व्यक्ति से होगी तो हमारी पवित्रता बनी रहेगी। यह विश्वास और सहभागिता को उच्च शिखर प्रदान करने वाला होता है। यदि हम यह जान लें कि मैत्री का उद्देश्य एवं जीवन के व्यवहार में उसका क्या असर पड़ेगा या इसका मूल्य क्या है, तभी अच्छी मित्रता हो सकती है।

- प्रस्तुत निबंध में निबंधकार ने हमें बताना चाहा है कि मित्रता जीवन के लिए कितना महत्त्वपूर्ण है। व्यक्ति घर के बाहर इसी अच्छे मित्रता के बल पर जीता है। अत: उसे चाहिए कि अच्छी मित्रता करने का प्रयत्न करे।



9.5 विस्तृत जानकारी हेतु पढ़ें

1) तिवारी, रामचन्द्र ; *आचार्य रामचन्द्र शुक्ल*; विश्वविद्यालय प्रकाशन चौक वाराणसी
2) तिवारी, रामचन्द्र ; *हिन्दी गद्य साहित्य* ; विश्वविद्यालय प्रकाशन, चौक वाराणसी
3) तिवारी, रामचन्द्र ; *आचार्य रामचन्द्र शुक्ल और उनके समकालीन आलोचक*; विश्वविद्यालय प्रकाशन, चौक, वाराणसी



9.6 स्वनिरीक्षण का पुनर्निरीक्षण

प्रश्नोत्तर 1 : आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का जन्म 4 अक्टूबर 1884 ई. को उत्तरप्रदेश के बस्ती जिले के अगोना गांव में हुआ था।

प्रश्नोत्तर 2 : लॉर्ड बेकन।

प्रश्नोत्तर 3 : आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के प्रारंभिक निबंध अंग्रेजी से अनूदित है।

प्रश्नोत्तर 4 : चिन्मामणि निबंध संग्रह चार भागों में प्रकाशित है।

प्रश्नोत्तर 5 : आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का निबंध इनके बौद्धिक मन्थन का परिणाम है।

प्रश्नोत्तर 6 : आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के निबंधों में इनकी मर्मभूमि के सुपठित पाठक विचारशील और सहृदय पाठक ही प्रवेश पा सकती हैं।



9.7 संभावित प्रश्न

प्रश्न 1. बौद्धिक मन्थन क्या है ?

प्रश्न 2. शुक्ल युग के किसी निबंधकार के विषय में लिखें।

प्रश्न 3. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के निबंधों की विवेचना कीजिए।

प्रश्न 4. आचार्य शुक्ल ने किस प्रकारके निबंध लिखें हैं।

प्रश्न 5. समास शैली क्या है ?

*** ***** ***

इकाई 10 : आचार्य शिवपूजन सहाय – साहित्य

इकाई की रूपरेखा

10.1 उद्देश्य

10.2 प्रस्तावना

10.3 आचार्य शिवपूजन सहाय

10.3.1 जीवन एवं साहित्य

10.3.2 साहित्य – कथ्य एवं उद्देश्य

10.3.3 साहित्य – महत्वपूर्ण प्रसंग

10.4 प्रस्तुत अध्याय से हमने सीखा

10.5 विस्तृत जानकारी हेतु पढ़ें

10.6 स्वनिरीक्षण का पुनर्निरीक्षण

10.7 सम्भावित प्रश्न

10.1 उद्देश्य

प्रस्तुत अध्याय से आप सीखेंगे–

- आचार्य शिवपूजन सहाय के विषय में
- आचार्य शिवपूजन सहाय एवं साहित्य निबंध के विषय में
- शास्त्रीय परम्परा में आचार्य शिवपूजन सहाय का स्थान
- नवजागरण के उन्नायकों में अग्रणी आचार्य शिवपूजन सहाय की भूमिका के बारे में।
- हिन्दी साहत्य में आचार्य शिवपूजन सहाय के स्थान के विषय में

10.2 प्रस्तावना

इस संसार मे कला की विविध विधाओं में साहित्य भी एक विधा है और साहित्य की विविध विधाओं में से निबंध भी एक विधा है। यह सशक्त गद्य–विधा गद्यकार की कसौटी है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने कहा है "यदि गद्य कवियों या लेखकों की कसौटी है तो निबंध गद्य की कसौटी है।" वस्तुत: निबंध गद्य–विधा का सुविकसित और परिमार्जित रूप है और इसमें रचनाकार के विचारों एवं भावों की एक सुगठित शृंखला पायी जाती है।

शुक्ल युगीन निबंधकारों में आचार्य शिवपूजन सहाय सर्वाधिक महत्वपूर्ण निबंधकार रहे हैं। इनमें आचार्यत्व के सभी गुण पाये जाते हैं। इन्होंने शास्त्रीय परंपरा का निर्वाहन किया। आचार्य सहाय ने भाव, भाषा एवं शैली की दृष्टि से अपनी मौलिकता का परिचय देते हैं। निबंधकार आचार्य सहाय भाषा के जादूगर थे। इनकी मस्ती और जिन्दादिली, इनके विशद

साहित्यानुभव और विशाल पैनी दृष्टि के प्रसाद हिन्दी के निधि है। इन्होंने अपने सम्पादकत्व काल में आज, गंगा, मतवाला, हिमालय जैसे पत्र-पत्रिकाओं में कई उच्चकोटि के निबंध लिखे। निबंध के क्षेत्र में इनकी अपनी विशेषताएँ हैं। सामान्य से सामान्य विषय को प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करना भी इन्हीं विशेषताओं में एक है। परिहास तथा व्यंग्य, भाषा में प्रांजलता, कहावतों तथा मुहावरों के समुचित पुट से इनका निबंध अधिक प्रभावशाली एवं चमत्कृत हो उठता है।

इनकी समस्त रचनाएँ शिवपूजन रचनावली चार खण्डों में प्रकाशित हैं जिन्हें बिहार राष्ट्रभाषा परिषद ने प्रकाशित की हैं।

अनुशीलन

आचार्य शिवपूजन सहाय के निबंधों को पढ़ते हुए उसकी समीक्षा करने का प्रयास करें, जो आपकी परीक्षा के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है।

10.3 आचार्य शिवपूजन सहाय : जीवन एवं साहित्य

आचार्य शिवपूजन सहाय का जन्म 9 अगस्त 1893 ई. में बिहार के शाहाबाद जिले के उनवास गाँव में हुआ था। हिन्दी भाषा के टकसाल के रूप में ख्यात् आचार्य सहाय कहा करते थे– 'मैं हिन्दी की सर्वगुण सम्पन्नता में दृढ़ विश्वास करता हूँ और उसकी सर्वशक्तिशालिता में ...' कहने में न केवल विश्वास और आशा रखते थे बल्कि उसे कर भी दिखाया अपने साहित्य ...ाध्यम से। सन् 1912 ई. में मैट्रीक पास कर हिन्दी अध्यापक बने। इनका साहित्यक्षेत्र में उस समय पदार्पन हुआ जब बालगंगाधर तिलक का युग समाप्त हो रहा था और मोहनदास कर्म चन्द गांधी (माहात्मा गांधी) भारतीय राजनीति या स्वतंत्रता आंदोलन में युग का श्रीगणेश करने वाले थे। अत: इन्होंने लाल-बाल-पाल और गांधी युग को बहुत निकट से देखा था।

10.3.1 जीवन एवं साहित्य

सामाजिक जीवन का शुभारम्भ हिन्दी शिक्षक के रूप में किया और साहित्यक्षेत्र में पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से आये। आपके आरम्भिक लेख तथा कहानियाँ 'शिक्षा', 'लक्ष्मी', 'मनोरंजन' तथा 'पाटलिपुत्र' आदि पत्रिकाओं में प्रकाशित हैं।

इनकी सेवाएँ हिन्दी पत्रकारिता के क्षेत्र में उल्लेख्य हैं। 1921-22 ई. के आसपास आपने आरा से निकलने वाले 'मारवाड़ी सुधार' नामक मासिक का संपादन किया। 1923 ई. में कलकता के 'मतवाला मण्डल' के सदस्य हुए और कुछ समय के लिए 'आदर्श', 'उपन्यास तरंग' तथा 'समन्वय' आदि पत्रों में संपदान कार्य किया। 1925 ई. में कुछ मास के लिए 'माधुरी' के संपादकीय विभाग को अपनी सेवाएँ

अर्पित कीं। 1930 ई. में सुलतानगंज-भागलपुर से प्रकाशित होनेवाली 'गंगा' नामक मासिक पत्रिका के संपादक-मंडल के सदस्य हुए। एक वर्ष के उपरान्त काशी में रहकर साहित्यिक पाक्षिक 'जागरण' का संपादन किया। आप काशी में कई वर्ष तक रहे। 1934 ई. में लहेरियासराय (दरभंगा) जाकर मासिक पत्र 'बालक' का संपादन किया। स्वतंत्रता के बाद बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् के संचालक तथा बिहार हिन्दी साहित्य सम्मेलन की ओर से प्रकाशित 'साहित्य' नामक शोध-समीक्षाप्रधान त्रैमासिक पत्र के संपादक थे।

इनकी लिखी हुई पुस्तकें विभिन्न विषयों से संबंद्ध हैं तथा इनकी विधाएँ भी भिन्न-भिन्न हैं। 'बिहार का बिहार' बिहार प्रान्त का भौगोलिक एवं ऐतिहासिक वर्णन प्रस्तुत करती है। 'विभूति' में कहानियाँ संकलित हैं। 'देहाती दुनिया' (1926 ई.) प्रयोगात्मक चरित्र प्रधान औपन्यासकि कृति है इसकी पहली पांडुलिपि लखनऊ के हिन्दू-मुस्लिम दंगे में नष्ट हो गयी थी। इसका शिवपूजन सहाय जी को बहुत दुःख था। इन्होंने दुबारा वही पुस्तक फिर लिखकर प्रकाशित करायी किन्तु उससे आपको पूरा संतोष नहीं हुआ। ये कहा करते थे कि पहले लिखी हुई चीज कुछ और ही थी 'ग्राम सुधार' तथा 'अन्नपूर्णा के मंदिर में' नामक दो पुस्तकें ग्रामोद्धारसंबंधी लेखों के संग्रह हैं। इनके अतिरिक्त 'दो घड़ी' एक हास्यरसात्मक कृति है, 'माँ के सपूत' वालोपयगी तथा 'अर्जुन' और 'भीष्म' नामक दो पुस्तकें 'महाभारत' के दो पात्रों की जीवनी के रूप में लिखी गयी हैं। शिवपूजन सहाय ने अनेक पुस्तकों का संपादन भी किया है, जिसमें 'राजेन्द्र अभिनन्दन ग्रंथ' विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

शिवपूजन सहाय का हिन्दी के गद्य साहित्य में एक विशिष्ट स्थान है। इनकी भाषा बड़ी सहज रही है। इन्होंने उर्दू शब्दों का प्रयोग धड़ल्ले से किया है और प्रचलित मुहावरों के संतुलित उपयोग द्वारा लोकरुचि का स्पर्श करने की चेष्टा की है। कहीं-कहीं अलंकरणप्रधान अनुप्रासबहुला भाषा का भी व्यवहार किया है और गद्य में पद्य की सी छटा उत्पन्न करने की चेष्टा की है। भाषा के इस पद्यात्मक स्वरूप के बावजूद इनके गद्य लेखन में गाम्भीर्य का अभाव नहीं है। शैली ओज-गुण सम्पन्न है और यत्र-तत्र उसमें व्यक्तित्व कला की विशेषताएँ उपलब्ध होती है।

शिवपूजन सहायक का समस्त जीवन-हिन्दी सेवा की कहानी है। इन्होंने अपने जीवन का अधिकांश भाग हिन्दी-भाषा की उन्नति एवं उसके प्रचार-प्रसार में व्यतीत किया है। बिहार हिन्दी साहित्य सम्मेलन तथा बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् नामक हिन्दी की दो प्रसिद्ध संस्थाएँ इनकी कीर्ति कथाएं के अमूल्य स्मारक के रूप में हैं। इनके संस्मरण में बिहार में 'स्मृति ग्रंथ' भी प्रकाशित हुआ है। (शिवपूजन रचनवाली (चार खंडों में), बि.रा.भा. परिषद् पटना से साभार)

डॉ.रामचन्द तिवारी अपनी पुस्तक हिन्दी निबंध एवं निबंधकार में लिखते हैं – 'आपकी गणना अपने समय के श्रेष्ठ पत्रकार एवं साहित्यकार के रूप में की गयी है। आपने साहित्य, भाषा, इतिहास, राजनीति, धर्म, नैतिकता आदि अनेक विषयों पर लेखनी चलायी। आप एक विचारशील लेखक हैं। आपके वैचरिक व्यक्तित्व में गहरा नैतिक भावबोध है जिसका आधार गांधीवादी आदर्शवादिता है। हिन्दी के प्रति आपके मन में प्रगाढ़ प्रेम है। ऐसा लगता है कि आपका मन हिन्दी प्रेम से ही रचा गया था। आपकी भाषा प्राणवाण और शैली सजीव है। आपके समस्त लेखन को देखकर ऐसा लगा है कि आपने देश और मानवहित की वेदी पर तिल-तिल आत्माहुति दी है।'

आचार्य सहाय हिन्दी साहित्य के महत्वपूर्ण निबंधकार हैं, क्योंकि उन्होंने पूरी परम्परा और आधुनिकता के परिप्रेक्ष्य में निबंध लिखे हैं। उनकी मूल दृष्टि मानवतावादी है और जिसकी प्रतिष्ठा परम्परा और आधुनिकता के समन्वित बोध के बिना सम्भव नहीं है। उन्हें यह बोध अपने परिवेश के प्रति प्रतिबद्धता और गहरे अध्यवसाय से प्राप्त हुआ है इसीलिए वे अपनी दृष्टि के अनुरूप साहित्य, भाषा, संस्कृति, धर्म, दर्शन तथा अन्य विषयों पर आधृत निबंधों में एक मात्र मानवता की प्रतिष्ठा करते हैं। इन्होंने साहित्य से सम्बद्ध पर्याप्त निबंध लिखे हैं। इन्होंने इन निबंधों में परम्परा और आधुनिकता का गहरा तालमेल स्थापित किया है। इन निबंधों के अलावा आचार्य द्विवेदी के और भी कई निबंध हैं, जिनमें एक साथ परम्परा और आधुनिकता का प्रकाश है, किन्तु वे निबंधों में परम्परा और आधुनिकता को उतना ही काम्य मानते हैं, जिनसे मानवता को सुरक्षाकवच प्राप्त हो सके। उनके निबंधों में परम्परा प्राणचेतना और आधुनिक परिवेश के प्रति सजग चेतना है। उनके निबंध परम्परा और आधुनिकता के विवेक सम्मत सावेश से ही मानवता की गहरी सीख देते हैं। उनकी लोकप्रियता का कारण परम्परा और आधुनिकता का सामंजस्य रहा है।

अन्तत: कहा जा सकता है कि आचार्य शिवपूजन सहाय का साहित्य एवं उनका व्यक्तित्व एक-दूसरे का पूरक है। इनके लेखन, इनके विवेचन की अपनी पद्धति रही है। इनकी मृत्यु 21 जनवरी 1963 ई. को हुई।



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 1 : आचार्य शिवपूजन सहाय बिहार में लहेरियासराय में किस मासिक पत्रिका से जुड़े थे?

.....

प्रश्न 2 : आचार्य शिवपूजन सहाय की मृत्यु कब हुई?

.....

10.3.2 साहित्य – कथ्य एवं उद्देश्य

साहित्य समाज का दर्पण है। साहित्य में समाज झलकता है और समाज में साहित्य। साहित्य और समाज एक-दूसरे के पूरक हैं। साहित्य और साहित्य विषयक अध्ययन में फर्क है। साहित्य में सृजनात्मकता है, कला है और साहित्य विषयक अध्ययन ठीक-ठीक विज्ञान, इतिहास, भूगोल नहीं है तो भी ज्ञान या विद्या का ही एक प्रकार है। इस दृष्टिकोण से भी दोनों एक है। अत: साहित्य का क्षेत्र विस्तृत है। अत: व्यापक अर्थ रखने वाला साहित्य विश्वजनीन भाव का द्योतक है।

साहित्य युग का प्रतिनिधित्व करता है, जिस युग में साहित्य की रचना होती है, उस युग में समाज की आर्थिक, धार्मिक, रानीतिक, सामाजिक तथा अन्य विषय वस्तुओं, चेतना-अचेतन आदि विषय में जानकारी हमें अकेले साहित्य से प्राप्त होती है। साहित्य अतीत-वर्त्तमान-भविष्य का चिन्तन एवं समीक्षा भी प्रस्तुत करता है। ऐसे साहित्य के निर्माता साहित्यकार या साहित्य वस्तुत: पथ-प्रदर्शक की भूमिका में होता है और वह विश्व में सदैव अमर रहता है। साहित्य के बिना प्राणी या समाज शव के समान है।

साहित्य में सबकी भावना निहित होती है। साहित्य सबका हित देखता है। यह सत्य है कि साहित्य का निर्माण व्यक्तिगत होता है। परन्तु इसका लाभ समाज को ही होता है। अत: यह एक विशिष्ट दस्तावेज भी है। इससे लोकहित जुड़ा होता है। इसलिए साहित्य मानव समाज की उन्नति का मुख्य-पत्र भी है। निराशा और असहाय जनता जब अपने जीवन से ऊब जाती है, उस समय साहित्य ही उसमें नव-जीवन का संचार करता है। साहित्य अध्ययन के समय हम उसके रस-सागर में अवगहित करते हैं और अपनी सभी सुख-दु:ख को भूलकर उससे तादात्म्य स्थापित करते हैं। हम साहित्य संसार में भ्रमण करते समय इहलोक की चिन्ता छोड़ या मूल ब्रह्मानन्द-सहोदर-रस में सराबोर हो जाते हैं और इसके उपरान्त हमारा हृदय अपने उत्साह के साथ पुन: अपने कर्म-पथ पर अग्रसर हो जाते हैं। अत: साहित्य हमारी मानसिक क्षुधा को तृप्त करने के साथ-साथ युग विशेष के साथ चलने में महत्वपूर्ण सहायता प्रदान करता है।

साहित्य इतना सशक्त होता है कि यह हमारी दशा और दिशा तय करता है। यह संजीवनी शक्ति है। रचनाकार यहाँ तक कहता है कि 'उसी के शंखनाद से हमारी मोह-निद्रा भंग होती हैं। यदि वह हमारे जीवन-व्यापार में संग-संग न चलेगा, तो अपने पूर्वजों से हमारा नाता टूट जाएगा-पतन की खाई से निकलने का सहारा जाता रहेगा। उसकी महत्ता की कोई इयत्ता नहीं। अत: उसकी आराधना में ढत्ताचित्त होना हमारा एकान्त कर्तव्य है।



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 3 : साहित्य क्या है ?

.....



इसे भी जानें

मान्यता है कि मुंशी प्रेमचन्द के कई उपन्यासों को इन्होंने ही सुधारा था जिसके बल पर मुंशी प्रेमचन्द अमर कृतिकार हैं।

10.3.3 साहित्य : महत्वपूर्ण प्रसंग

➢ *'अन्यान्य लौकिक वैभव नश्वर हैं। यह अविनाशी है। इसीलिए इसका जो पल्ला पकड़े रहेगा, वह भी अमर होगा।'*

लौकिक वैभव नश्वर होता है। लौकिक वैभव हम विभिन्न स्रोतों से अर्जित कर लेते हैं। किन्तु यह टिकाऊ नहीं होता। इसका मुख्य कारण यह भी है कि यह नितांत व्यक्तिगत होता है और व्यक्तिगत वस्तु व्यक्ति तक नहीं सीमित होता है किन्तु साहित्य सृजन तो व्यक्तिगत कारणों से होता है पर अन्ततः यह होता समष्टिगत हीं। इसमें सहित का भाव होता है। यह मानव जाति के जीवन के लिये हितकर, सुखकर, श्रेयस्कर होता है। यह अविनाशी है। इसमें दृश्य मान जगत के समस्त चेतन-अचेतन, वैभव-विलास की नीधि निहित है किन्तु अदृश्य लोगों की संपदा का भी कुबेर यही है। किन्तु इसकी विशेषता यह है कि इसके भीतर जो कुछ भी है वह समष्टि की चेतना, प्रेरणा के रूप में है। जो भी देश, समाज यदि अपने साहित्य को समृद्ध करता या उसे वह हानि से बचाता है। वह देश या समाज उतन ही समृद्ध, गौखान्वित और अमर होता है। कारण साहित्य किसी भी समाज या देश का रीढ होता है जिसके बल पर वह खड़ा होता है।



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 4 : आचार्य शिवपूजन सहाय 'मतवाला-मण्डल' के सदस्य कब बनें ?

.....

➢ *'साहित्य की उन्नति के लिए भोग-विलास के बदले विद्या -विलासी बनना होगा।'*

भोग-विलास की वस्तुएँ या स्वयं भोग विलास ही को हम अर्जित करते हैं। यह कहीं भी, कभी भी हमें प्राप्त हो जाता है। हमारा जीवन अतीत में भी वगैर भोग-विलास के हीं चलता था, वर्त्तमान में भी यदि व्यक्ति चाहे तो बेगैर भोग-विलास के चल सकता है, इतना हीं भविष्य भी इसके बेगैर सुधर जाएगा। यह हमारा अभिन्न अंग हो नहीं सकता। यह क्षण भंगुर है। किन्तु इसके बदले यदि हम साहित्य की सेवा करते हैं तो न केवल हम बल्कि हमारा नव-प्रजन्म भी सुखी रहेगा। साहित्य में इतनी क्षमता है कि वह अतीत को वर्त्तमान बना सकता है। साहित्य भविष्य का रहस्यभेदन कर सकता है। रचनाकार स्वयं कहता भी है अपने जीवन रथ को सुख के पथ पर ले चलने वाली आवश्यकताओं में हमें साहित्य को भी सम्मिलित करना होगा। वे आगे कहते हैं साहित्य के आन्तरिक सौन्दर्य का विधिवत विश्लेषण करने में जो विचक्षण है, वे ब्रह्मानन्द-सहोदर सुख के उपभोक्ता हैं।

अत: भोग-विलास क्षणिक है किन्तु साहित्य विलास आपको न केवल ब्रह्मानन्द-सहोदर होने का गौरव दिलायेगा वरन् आपको अमरत्व भी प्रदान करेगा।



इसे भी जानें

आचार्य शिवपूजन सहाय की कुछ प्रमुख कृत्तियाँ –

बिहार व बिहार, विभूति, (कहानी संग्रह), देहाती दुनियाँ (उपन्यास), भीष्म, अर्जुन, ग्रामसुधार, दो घड़ी, माँ के सपूत, अन्नपूर्ण के मंदिर, कुछ इत्यादि तथा ये सभी रचनाएँ शिवपूजन रचनावली (चार खंडों) में प्रकाशित है। इसका प्रकाशन बिहार राष्ट्रभाषा परिषद ने किया है।

आचार्य शिवपूजन सहाय की बहुत सारी रचनाएं 'शिव' नाम से प्रकाशित हुई।

➢ *'यदि साहित्य के रस से हम वंचित हैं, तो प्रकृति की सुषमा में भी हमारे लिए कोई रस नहीं'*

वह व्यक्ति मूढ़ ही होगा जिसने साहित्य से नाता न जोड़ा हो या वह भी मूढ़ ही होगा जिसने साहित्यका रसास्वदान तो किया पर उससे कोई सीख न ली। साहित्य का सुख सब सुखों में उत्तम है और, साहित्य का रस भी सभी रसों से अलग और निराला है। साहित्य का रस जिसने पा लिया उसके लिये भूतल ही स्वर्ग है। सारा भोग-विलास एकतरफ और साहित्य-विलास एक तरफ, वहाँ भी साहित्य विलास ही भारी पड़ेगा।

वस्तुत: भोग-विलास के वस्तुओं का निर्माण भी साहित्य ने ही किया है। साहित्य ही वह विद्या है जिसने हमें हमारी परम्परा, संस्कार, संस्कृति,

सभ्यता से जोड़े रखा है और आगे भी जोड़े रखेगा। यह हमें निर्णय शक्ति देता है। हमें धीर गंभीर बनाता है। इसलिए रचनाकार कहते हैं कि जो व्यक्ति साहित्य के रस से वंचित है, वह प्रत्येक दृष्टिकोण से बेकार है।

साहित्य का समाज से सीधा सरोकार है। जो हमारे आसपास घटित हो रहा है, जो हमारे मन में चल रहा है, जो हमें सीधे-सीधे प्रभावित कर रहा है, जो हमारी जीवन शैली की दिशा और दशा निर्धारित करने में अहम् भूमिका निभा रहा है, या जो अप्रत्यक्ष रूप से मानवीय संवेदनाओं को समाज के हृदय पटल पर रेखांकित या चित्रांकित कर रहा है, उसका कोई ओर छोर साहित्य से निश्चित ही सम्बन्ध है। 'साहित्य समाज का दर्पण है,' यह एन्टीक वाक्य आज भी ताज़ा-सा लगता है। साहित्य समाज के आसपास घूमता है, क्योंकि वह समाज की दशा को तो उजागर करता ही है, साथ-साथ समाज के विकास का आलेख भी तैयार करता है।



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 5 : आचार्य शिवपूजन सहाय की देहाती दुनिया किस प्रकार की कृति है?

.....



10.4 प्रस्तुत अध्याय से हमने सीखा

- आचार्य शिवपूजन सहाय के पाठक सरलता से इनकी प्रक्रिया का आभास पा सकते हैं। इन्होंने अपने समय के धारा विशेष का विशेष प्रतिनिधित्व किया है। इनके निबंध में हृदय रंजकता, मनमोहकता और भाव विह्वलता मिलती है जो प्रेम, देश-भक्ति, समाजोत्थान आदि की भावना से ओत-प्रोत है। इनकी रचनाओं में युग चेतना साकार हुई है, राष्ट्रीयता ने अभिव्यक्ति पाई है और सामाजिक पाखण्ड और कुलिनता ने चोट खाई है। इनकी रचनाओं से यह स्पष्ट होता है कि ये अतीत एवं वर्त्तमान के प्रति कितने सजग हैं और भविष्य इनसे कितना आश्वस्त है।
- प्रस्तुत निबंध 'साहित्य' से हमारा दृष्टिकोण विस्तृत होता है। साहित्य का सृजन एवं उसका संरक्षण साथ ही उसके से मानव जाति का अतीत, वर्त्तमान, भविष्य का कितना सम्बद्ध है यह इस निबंध से स्पष्ट होता है। इस निबंध में आचार्य सहाय का व्यक्तित्व स्पष्ट झलकता है।

- आचार्य शिवपूजन सहाय आधुकि हिन्दी साहित्य के ऐसे स्वतंत्रचेत्ता आलोचक तथा चिंतक के रूप में हमारे सामने आए हैं, जो अपने तिरोधान के बाद भी आलोचना के सिंहासन के मध्यभाग में विराजमान हैं। यह भी निर्भ्रान्त रूप से कहा जा सकता है कि सम्पूर्ण भारतीय भाषा-साहित्य में आचार्य सहाय जैसे गम्भीर अध्ययनशील, सूक्ष्म अन्वीक्षण बुद्धि सम्पन्न एवं मर्मग्राहिणी प्रज्ञा युक्त आलोचक उंगलियों पर गिने जाने योग्य हैं।



10.5 विस्तृत जानकारी हेतु पढ़े

1) मूर्ति, मंगल ; *शिवपूजन सहाय* ; दिल्ली : साहित्य अकादमी।
2) शिशिर, कर्मेन्दू ; *शिवपूजन सहाय*; दिल्ली: प्रभात प्रकाशन।



10.6 स्वनिरीक्षण का पुनर्निरीक्षण

प्रश्नोत्तर 1 : 'बालक' मासिक पत्रिका
प्रश्नोत्तर 2 : 21 जनवरी 1963 ई.
प्रश्नोत्तर 3 : साहित्य समाज का दर्पण है
प्रश्नोत्तर 4 : सन् 1923 ई.

10.7 सम्भावित प्रश्न

प्रश्न 1. आचार्य शिवपूजन सहाय का संक्षिप्त जीवनी प्रस्तुत कीजिए।
प्रश्न 2. आचार्य शिवपूजन सहाय किन-किन पत्रिकाओं से जुड़े थे? लिखिए।
प्रश्न 3. आचार्य शिवपूजन सहाय के निबंधों के विषय में समीक्षा प्रस्तुत कीजिए।
प्रश्न 4. 'साहित्य' निबंध की समीक्षा प्रस्तुत कीजिए।
प्रश्न 5. आचार्य शिवपूजन सहाय भाषा के जादूगर थे। तर्कसंगत उत्तर दीजिए।

*** ***** ***

इकाई 11 : डॉ. बिरिंचि कुमार बरूआ – कौआ

इकाई की रूपरेखा

11.1 उद्देश्य
11.2 प्रस्तावना
11.3 डॉ. बिरिंचि कुमार बरूआ
  11.3.1 जीवन एवं साहित्य
  11.3.2 कौआ : कथ्य एवं उद्देश्य
  11.3.3 कौआ : महत्वपूर्ण प्रसंग
11.4 प्रस्तुत अध्याय से हमने सीखा
11.5 विस्तृत जानकारी हेतु पढ़ें
11.6 स्वनिरीक्षण का पुनर्निरीक्षण
11.7 संभावित प्रश्न

11.1 उद्देश्य

प्रस्तुत अध्याय में हम जानेंगे –

- डॉ. बिरिंचि कुमार बरूआ के विषय में
- असमीया साहित्य में डॉ. बिरिंची कुमार बरूआ के स्थान के विषय में
- एक रचनाकार के रूप में डॉ. बरूआ किस प्रकार से अन्य भारतीय रचनाकारों से साम्य-बैषम्य रखते हैं।
- कौआ निबंध के विषय में

11.2 प्रस्तावना

कौआ ललित निबंध है। यथासत्य यह है कि प्रस्तुत निबंध असमीया निबंध का हिन्दी रूपान्तर है। असमीया में यह निबंध आवाहन पत्रिका में छपी थी। प्रकृति में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका के बावजूद कौआ हमेशा ही अनादृत रहता है। समाज के निर्माण में अति महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाला निम्न वर्ग अपने रहन-सहन और अन्य गतिविधियों के कारण अनादृत है ठीक उसी प्रकार प्रकृति-प्रिय कौआ भी अपनी आवाज के लिए हमारे अप्रियकर है। कहना न होगा कि कौआ जैसे अनादृत पक्षी के लिए निबंधकार ने पाठकों के मन-मस्तिष्क में सहानुभूति उत्पन्न करने का प्रयत्न किया है।

11.3 डॉ. बिरिंचि कुमार बरूआ

डॉ. बिरिंचि कुमार बरूआ का जन्म असम के नगांव जिले में 16 अक्टूबर 1908 ई. को हुआ था। इनके पिता विजय कुमार बरूआ और माता लीलावती बरूआ थी। इनका निधन 30 मार्च 1964 को हुआ।

यदि एक वाक्य में कहें तो डॉ. बरूआ पंडित, गवेषक, गल्पकार, उपन्यासकार और शिक्षाविद् थे। इनकी प्रारंभिक शिक्षा नगांव में, स्नातक कॅटन महाविद्यालय से, सन् 1934 ई. में स्नातकोत्तर कलकत्ता विश्वविद्यालय से, सन् 1936 ई. में कानून में स्नातक एवं सन् 1947 ई. में लंदन विश्वविद्यालय से पीएच.डी. की। सन् 1938 से सन् 1948 ई. तक कलकत्ता विश्वविद्यालय के असमीया विभाग में अध्यापक रहे। सन् 1948 ई. से सन् 1964 ई. तक वे गौहाटी विश्वविद्यालय के असमीया विभाग में अध्यापक कार्यरत रहे। सन् 1963 ई. में अमेरिका के इंडियाना विश्वविद्यालय के भारतीय संस्कृति विभाग में विजिटिंग प्रोफेसर के रूप में कार्यरत रहे।

11.3 जीवन एवं साहित्य

डॉ. बरूआ असमीया तथा अंग्रेजी में धारा प्रवाह समान रूप से लिखते थे। आलोचक होने पर भी इन्होंने सृजनशील साहित्य की भी खूब रचना की। असमीया में इनके प्रमुख ग्रंथ हैं- असमीया कथा साहित्य, असमर लोक संस्कृति, बौद्धधर्म आरू साहित्य, जीवनर बारत, सेऊजी पातर काहिनी, काव्य आरू अभिव्यंजना, असमीया भाषा, जातकमाला इत्यादि। अंग्रेजी ग्रंथों में प्रमुख है- असामीज लिटरेचर, अ हिस्ट्री ऑफ असामीज लिटरेचर, स्टडीज इन एनसियन्ट असामीज लिटरेचर, शंकरदेव अ वैष्णवाईर सेंट ऑफ असाम इत्यादि। इनके अन्य ग्रंथों में स्वीटजरलैंड भ्रमण, प्रोफेसर बरूआ चिठि आदि भी समान रूप से प्रमुख है।

सन् 1964 ई. में असमर लोक संस्कृति नामक ग्रंथ पर इन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार दिया गया। डॉ. बरूआ कई पत्र-पत्रिकाओं से जीवन पर्यन्त जुड़े रहे एवं उनमें निरन्तर चिन्तनशील, प्रेरणादायक प्रसंगों को लेकर चर्चा करते रहे।

जहाँ तक डॉ. बरूआ के निबन्धों का प्रश्न है उनमें उनके पूरे साहित्यिक व्यक्तित्व का गहरा प्रभाव हैं। अत: वे निबंधों में अन्वेषक, आलोचक, सर्जनात्मक साहित्यकार की भूमिका में दिखाई देते हैं। इनके निबंधों का सर्वाधिक उल्लेखनीय पक्ष यह है कि उन्होंने पूरी परम्परा और आधुनिकता बोध के परिप्रेक्ष्य में निबंध लिखे हैं किन्तु इनके निबंधों में व्यक्त परम्परा न तो परम्परा का अंधानुकरण और न ही आधुनिकता् परम्परा निरपेक्ष रही है,बल्कि दोनों में एक गहरा तालमेल है।



अनुशीलन

कौआ निबंध के अतिरिक्त आप डॉ. बिरिंचि कुमार बरूआ को पढ़े तथा प्रस्तुत निबंध को तुलना करें एवं समीक्षात्मक लेख प्रस्तुत करें।

11.3.2 कौआ : कथ्य एवं उददेश्य

निबन्धकार डॉ. नगेन्द्र के भांति डॉ. बरूआ भी अपने निबंध का प्रारंभ एक संक्षिप्त भूमिका के साथ करते हैं। दोनों की साम्यता में यह ध्यान देने योग्य बात है कि दोनों हीं अलग-अलग विश्वविद्यालयों में ख्याति सम्पन्न अध्यापक रहे हैं। अत: अध्यापकीय शैली दोनों के निबंधों में स्पष्ट झलकता है।

कौआ कहने मात्र से प्रकृति वह पक्षी हमारे जेहन में आता है जो कॉव-कॉव से कभी कभार हमारा जीना दुभर कर देता है। कौआ कहने से रामायण युग भी याद आता है जिसने अपनी दुष्ट प्रवृत्ति से सीता और राम को चोट पहुँचायी थी। इसने अपना आदर खोया है। धूर्त्त के रूप में कौआ की ख्याति पुराण प्रसिद्ध है। इसकी बोली कम संकट-सूचक नहीं है।

कौआ निबंध के माध्यम से डॉ. बरूआ ने यथार्थपरक चिन्तन प्रस्तुत किया है। इनके निबंध की सबसे बड़ी विशेषता इनकी ऊर्जा है। यह ऊर्जा इन्होंने लोक जीवन से प्राप्त की है। यह निबंध एक ऐसे प्रतिभाशाली का निबंध है जो शताब्दियों से सुप्त लोकमानस से विषय-वस्तु निकाल कर उसी के मानसिक धरातल पर उतरकर बताना चाहा है। कौआ इसी की परिणति है।



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 1 : कौआ निबंध असमीया भाषा के किस पत्रिका में सर्वप्रथम प्रकाशित हुई थी ?

.....

प्रश्न 2 : डॉ. बिरिंचि कुमार बरूआ के माता-पिता की नाम क्या हैं ?

.....



अनुशीलन

असमीया साहित्य का इतिहास पढ़ते हुए डॉ. बरूआ का जीवन वृत्त लिखें।

11.3.3 कौआ : महत्वपूर्ण प्रसंग

➢ *'नाम के साथ प्राण का घनिष्ठ संबंध है। कोई नाम सुनने पर मुस्कराहट खिल जाती है, किसी नाम के उल्लेख भर से शरीर रोमांचित हो उठता है।'*

नाम एक ऐसा विषय-वस्तु है जो हमारे जेहन को झकझोड़ता है। अत: नाम के साथ प्राण का घनिष्ठ संबंध है। यदि हम अपने प्रिय प्राणी का नाम सुनते हैं तो भौंह खिल जाती है, मन गुद-गुदा जाता है, एक हल्की मुस्कान रेखा हमारे चेहरे पर आ जाती है किन्तु वहीं अगर हम किसी अनचाहे प्राणी का नाम सुनते हैं तो नाम-मौहं सिकुड़ जाते हैं।

कहने का तात्पर्य यह है कि नाम मात्र ही किसी को महत्वपूर्ण या गर्हित बना देती है। अर्थात नाम वह शब्द है जिससे हम प्यार भी करते है और नफरत भी। कोयला के नाम मात्र से से हृदय-वीणा के तार झंकृत हो उठते हैं किन्तु कौआ का नाम सुनने मात्र से दुष्ट, कपटी का आभास होता है। यह आज की बात नहीं मनुष्य एवं कौवे के विकासकाल से ही चली आ रही वैमनष्यता है।



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 3 : डॉ. बरूआ ने स्नातक कहां से पास किया था?

.....

प्रश्न 4 : डॉ. बरूआ ने पीएच.डी की डिग्री कहां से प्राप्त की थी?

.....

➢ *'जीवों में आदमी सबसे स्वार्थी है।'*

समाज के विकास में अनेकानेक चीजें बाधक बनती हैं। इनमें स्वार्थ भी एक अहम् है। इनसे समाज जर्जर और संकटग्रस्त होता है। स्वार्थ मानव मन में कब घर कर गयायह कहना मुश्किल है। वर्त्तमान काल में इसने समाज में कोढ़ का रूप धारण कर लिया है।

मनुष्य अपने व्यक्ति-हित के साधन में इतना तल्लीन हो गया कि उसका नैतिक पतन कब हुआ उसे पता ही नहीं चलता। वह गर्त्त में गिरता जाता है कि उसने क्या पाया, क्या खोया । किन्तु यह भी व्यक्ति के संस्कारपर निर्भर करता है अन्यथा चोट खा कर भी वह स्वार्थ से नहीं चुकता। आदमी बहुरूपिया होता जा रहा है। जिससे उसकी साधना सिद्धि होती है औह पह उसके पीछे-पीछे भागता है। प्रयोजन सिद्ध होने पर उसे त्याग दूसरे स्वार्थ की तलाश में वह भटकता रहता है।



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 5 : बिरिंचि कुमार बरूआ द्वारा रचित सेऊजी पातर कहानीकिस विधा का साहित्य है ?

.....

➢ *'तुलना पर हीं वस्तु का स्वरूप निर्णय होता है।'*

तुलना एक ऐसी वस्तु है जिसरके माध्यम से ऊँच-नीच, अच्छा-बुरा का पता कर सकते हैं। कोयल, तोता तथा मैना एक तरफ आपके प्रिय हैं तो कोई अप्रिय। रचनाकार कहता भी है दूसरी प्राणियों के साथ तुलना करने पर ही कौवे की चालाकी होने का पता चलता है। वस्तुत: अतीत के कलंक की छाप कौवे पर होने के कारण कौवे के सम्पर्क में सतर्क रहने का मौका सभी को मिला है। दार्शनिकों ने इसलिये सभी तत्वों पर विचार करने के पूर्व अपने को पहचानने का उपदेश दिया है।

कहने का अर्थ यह कि तुलनात्मक दृष्टि किन्तु ईमानदार दृष्टि से जब हम किसी वस्तु की तुलना करते हैं तभी जाकर हमें पता चलता है कि कौन कितने पानी में है।



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 6 : डॉ. बिरिंचि कुमार बरूआ का निधन कब हुआ।

.....



11.4 प्रस्तुत अध्याय से हमने सीखा

- प्रस्तुत अध्याय कौआ पर आधारित निबंध है। इसमें कौवे के विविध पक्षों का सारगर्भित चिन्तन प्रस्तुत किया गया। इसमें कौआ से संबंधित अनुकूल प्रतिकूल प्रसंगों को यहाँ उकेरा गया है। अतीत से वर्त्तमान तक का चिन्तन इसमें प्रस्तुत है। निबंधकार की अनुभव की नवीनता के साथ नित्य नवीन हो जाने वाली विषयवस्तु को निबंध में उठाकर निबंध कला के विकास की अनन्त संभावनाओं को तलाशा एवं तराशा है।
- कथ्य के स्तर पर यह निबंध विचारणीय है। जीवन के भोगे हुए यथार्थ की अभिव्यक्ति इसमें मिलती है। इसमें युगबोध एवं युगीन सन्दर्भ तो है ही सामाजिक संबंधों को खोखलापन, स्वार्थपरता, सत्ता के अत्याचार, मानव मूल्यों के विघटन का भी जगह-जगह सजीब चित्रण

है। इसके बावजूद मनुष्य को सच्चे अर्थों में मनुष्य बनाने की लालसा और मानवतावादी दृष्टि इस निबंध में है और यही 'कौआ' का सत्य भी है। आमतौर पर यह रचना सहज, सरल भाषा में अंकित, आन्तरिक जद्दोजहद और मानवीय कमजोरियों के प्रति आक्रोश को उजागर करती है। जीवन के सभी सोपानों को रचनाकार ने यहाँ एकत्रित किया है। सहज, सरल शब्दों में मन और आसपास के वातावरण को अभिव्यक्ति देने में रचनाकार पूर्णतया सफल रहा है। सहजता एवं सरलता के कारण हीं इनकी रचनाएँ समान्य पाठक के लिए भी सहज सम्प्रेषणीय और उपयोगी बन पड़ी हैं। आज की घुटन और कुहासे में रोशनी की तलाश करती यह रचना विस्तृत सामाजिक सरोकार से जुड़ती है। शिल्प, भाषा आदि के स्तर पर भी इसमें नयापन है।



11.5 विस्तृत जानकारी हेतु पढ़े

1) ठाकुर, नगेन ; *एख बषरर असमिया उपन्यास*
2) गोहाईं, हीरेन ; *साहित्यतर सत्य*

11.6 स्वनिरीक्षण का पुनर्निरीक्षण

प्रश्नोत्तर 1 : 'आवाहन' पत्रिका
प्रश्नोत्तर 2 : लिलावती बरूआ और विजय कुमार बरूआ
प्रश्नोत्तर 3 : कॉटन महाविद्यालय
प्रश्नोत्तर 4 : लंदन विश्वविद्यालय
प्रश्नोत्तर 5 : उपन्यास
प्रश्नोत्तर 6 : 30 मार्च 1964 ई.



11.7 संभावित प्रश्न

प्रश्न 1. डॉ. बिरिंचि कुमार बरूआ का जीवन-वृत्त प्रस्तुत कीजिए।

प्रश्न 2 .कौआ निबंध का कथ्य एवं उद्देश्य लिखिये।

प्रश्न 3. डॉ. बिरिंचि कुमार बरूआ का साहित्य में अवदान पर एक लेख प्रस्तुत कीजिए।

प्रश्न 4 .डॉ. बिरिंचि कुमार बरूआ के साहित्य पर एक समीक्षात्मक लेख प्रस्तुत कीजिए।

प्रश्न 5. कौआ के गुण-दोष पर एक लघु निबंध लिखिये।

*** ***** ***

इकाई 12 : डॉ. राम कुमार वर्मा – कौमुदी महोत्सव

इकाई की रूपरेखा

12.1 उद्देश्य

12.2 प्रस्तावना

12.3 एकांकी की परिभाषा

12.4 एकांकी के तत्व

12.5 डॉ. राम कुमार वर्मा: जीवन एवं साहित्य

12.6 कौमुदी महोत्सव: कथावस्तु

12.6.1 चरित्र चित्रण

12.6.2 संलाप

12.6.3 वातावरण

12.6.4 उद्देश्य

12.6.5 भाषा शैली

12.6.6 रंगमंच निर्देश

12.7 प्रस्तुत अध्याय से हमने सीखा

12.8 विस्तृत जानकारी हेतु पढ़े

12.9 स्वनिरीक्षण का पुनर्निरीक्षण

12.10 सम्भावित प्रश्न

12.1 उद्देश्य

प्रस्तुत अध्याय में आप सीखेंगे–

- एकांकीकार डॉ. राम कुमार वर्मा का जीवन वृत्त
- कौमुदी महोत्सव एकांकी की कथावस्तु, संलाप, वातावरण तथा भाषा शैली से परिचित होगे
- एकांकी के प्रधान चरित्रों से परिचय

12.2 प्रस्तावना

आधुनिक साहित्य में दूसरी विधाओं की भाँति एकांकी को भी विशिष्ट स्थान प्राप्त है। हिन्दी साहित्य में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के समय से ही एकांकी का विकास दृष्टिगोचर होता है। एकांकी के क्रम में विशिष्ट नाटककार राम कुमार वर्मा की एकांकी कौमुदी महोत्सव का अध्ययन करना है।

आधुनिक हिन्दी एकांकी साहित्य मे ंरामकुमार वर्मा का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यद्यापि इन्होंने अनेक सामाजिक, समस्याप्रधान, पौराणिक, भौतिक हास्य व्यंगात्मक तथा भावात्मक एकांकी प्रस्तुत किये हैं- किन्तु ऐतिहासिक नाटककार के रूप में ये सर्वाधिक प्रसिद्ध हैं। इस ऐतिहासिक एकांकी के द्वारा भी वर्माजी ने इतिहास के कुछ बिन्दुओं को साम्प्रतिक परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत किया है।

'कौमुदी महोत्सव' एकांकी के माध्यम से अन्तरंग और बहिरंग सत्य को बड़ी कुशलता से आलोकित किया जा रहा है। इस अध्याय के अध्ययन से एकांकी के रसास्वादन करने तथा युग चेतना से परिचित होने का अवसर मिलेगा। साथ ही एकांकीकार के बहुआयामी व्यक्तित्व तथा कृत्तियों का परिचय भी प्रस्तुत अध्याय के माध्यम से ज्ञात होगा।

12.3 एकांकी की परिभाषा

सामान्यतया एक अंक विशिष्ट नाटक ही एकांकी है। कुछ आलोचकों का मानना है कि बड़े नाटकों का छोटा संस्करण ही एकांकी है। संस्कृत नाट्यपरंपरा में काफी प्राचीन काल से ही रूपक, भाग, व्यायोग, बीथी, अंक, प्रहसन, उपरुपक आदि का प्रचलन रहा है। पर विषयवस्तु, शिल्पविधान, उद्देश्य, भाषाशैली आदि की दृष्टि से आधुनिक एकांकी संस्कृत एकांकी से बिल्कुल भिन्न है। वस्तुत: पाश्चात्य साहित्य जगत में ही आधुनिक एकांकी का उदभव एवं विकास व्यापक रूप में परिलक्षित होता है। इसलिए पाश्चात्य शिक्षा के प्रसार के साथ ही भारत में भी आधुनिक एकांकी साहित्य का विकास होता है।

साम्प्रतिक समय में एकांकी एक अत्यन्त लोकप्रिय साहित्यिक विधा है। हिन्दी साहित्य के कुछ प्रसिद्ध साहित्यकारों की एकांकी संबधी परिभाषाएँ इस प्रकार है-

- **डा. नगेन्द्र :** एकांकी में हमें जीवन परिस्थिति तथा उद्दीप्त रुप का चित्रण मिलता है।
- **रामचरण महेन्द्र :** एकांकी मानव जीवन के पहलू या उद्दीप्त क्षण का चित्र है। प्रत्येक एकांकी एक मूल विचार, समस्या, एक सुनिश्चित सुकल्पित लक्ष्य, एक ही महत्वपूर्ण घटना और विशेष परिस्थिति पर निर्मित हो सकता है।
- **सेठ गोविन्ददास :** एक ही कृत्य के सम्बन्ध में होना एकांकी के लिए अनिवार्य है।
- **पर्सिवल वाइल्ड :** एकांकी कुछ मिनटों से लेकर पूरे एक घन्टे तक नाट्यकार की इच्छानुसार फैलाया जा सकता है। उसमें एक या अनेक दृश्य हो सकते हैं। किन्तु उसका झुकाव ऐक्य की ओर विशेष रूप से रहता है।

12.4 एकांकी के तत्व

एकांकी के निर्माण-तत्वों में से प्रमुख हैं कथावस्तु, चरित्र चित्रण, संलाप, वातावरण, भाषाशैली, उद्देश्य एवं रंगमंच निर्देश।

- **कथावस्तु :** कथावस्तु एकांकी का मूल आधार स्तंभ है। इसे प्लाट, कथानक, इतिवृत्त आदि भी कहा जाता है। वस्तुत: कथावस्तु पूरी एकांकी के घटनाओं का संगठन है। जिसे आधार बनाकर नाटकीय परिक्रमा आगे बढ़ती है। कथावस्तु या विषयवस्तु से ही एकांकी का अलग अलग पहचान बनता है। ऐतिहासिक, पौराणिक, सामाजिक, राजनीतिक समस्यामूलक, धार्मिक, आदि वर्गीकरण भी मूलत: कथावस्तु को ध्यान में रखकर ही किया जाता है। कथावस्तु में जीवन यथार्थ, प्रामाणिकता एवं संवेदनशीलता होना अपेक्षित है।
- **चरित्र :** एकांकी में पात्र या चरित्र का भी विशेष महत्व रहता है। आवश्ययकतानुसार पात्रों को मुख्य पात्र और गौण पात्र के रूप में विभाजित किया जा सकता है। दूसरी ओर पुरुष पात्र और नारी पात्र के रुप में एकांकी के चरित्रों को वर्गीकरण किया जाता है। पात्र या चरित्र के माध्यम से कथावस्तु का विकास होता है और एकांकी की गति में तेजी आती है। नाटककार तथा एकांकीकार अपनी संवेदना को चरित्र या पात्र के माध्यम से श्रोता तथा दर्शक के समक्ष प्रस्तुत करते हैं।
- **संलाप :** संलाप या संवाद एकांकी का अनिवार्य तत्व है। संलाप के द्वारा ही कार्य–व्यापार का विकास, भावों की अभिव्यक्ति, चरित्र चित्रण, वातावरण निर्माण तथा एकांकीकार और सहृदयों के बीच तादात्म्य स्थापित होना संभव है।
- **वातावरण :** वातावरण के द्वारा एकांकी के स्थान तथा समय के बारे में जानकारी मिलती है। हरेक एकांकी में किसी विशेष देश, जाति या समाज तथा उसका परिवेश चित्रित होता है जिसके जरिए तत्कालीन जीवन परिक्रमा के बारे में पाठक–श्रोताओं को संकेत मिलता है।
- **भाषा शैली :** भाषा अभिव्यक्ति का साधन है। एकांकी में भाषा शैली का बड़ा महत्व होता है। क्योंकि इसके द्वारा ही प्रत्येक पात्र की मानसिकता तथा जीवन दृष्टि सामने आती है। भाषा हमेशा सरल, सुबोध तथा पात्रानुकूल होनी चाहिए।
- **उद्देश्य :** हरेक कार्य सोद्देश्य होता है। लेखक व्यक्तिजीवन तथा व्यष्टिजीवन संबधी निजी दृष्टि को कलात्मक ढंग से समाज के समक्ष प्रस्तुत करते हैं। इस प्रकार हरेक एकांकीकार एक विशेष उद्देश्य को सामने रखकर ही अपनी रचना प्रस्तुत करता है।
- **रंगमंच निर्देश :** रंग–निर्देश के द्वारा नाटकीय परिवेश का निर्माण किया जाता है जिससे कथावस्तु और अधिक रोचक प्रभावशाली एवं सजीव बन जाते हैं। इसके अंतर्गत पूरे मंच को भव्य रूप में सजाना, आलोक व्यवस्था, पूर्वकथा आदि भी आते हैं।

12.5 डॉ. राम कुमार वर्मा: जीवन एवं साहित्य

आधुनिक हिन्दी साहित्य के प्रसिद्ध साहित्यकार राम कुमार वर्मा का जन्म मध्यप्रदेश के सागर जिले में 14 सितंबर, सन 1904 ई. में हुआ। इनकी प्रारंभिक शिक्षा अपनी माता से घर

में ही प्राप्त हुई। आप 1922 ई. के असहयोग आन्दोलन में प्रमुख सेनानी रहे। इन्होंने प्रयाग विश्वविद्यालय से हिन्दी विषय में एम.ए. किया। फिर आपको नागपुर विश्वविद्यालय की ओर से ''हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास'' शीर्षक शोध ग्रंथ पर डाक्ट्रेट दी गयी। इसके बाद वर्माजी प्रयाग विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में अध्यक्ष भी रहे।

हिन्दी साहित्य में आधुनिक एकांकी की प्रतिष्ठा से जिन एकांकीकारों की अहम भूमिका रही है, उनमें राम कुमार वर्मा अग्रणी हैं। इन्होंने लगभग सौ एकांकी नाटको का निर्माण किया है। इनके प्रमुख एकांकी संग्रह इस प्रकार हैं–

पृथ्वीराज की आखें (1936), रेशमी टाई (1941), चारुमित्रा (1942), विभूति (1944), सप्तकिरण (1947), रूपरंग (1948), रजन रश्मि (1940), दीपदान (1943), ऋतुराज (1941), रिमझिम (1944), इन्द्रधनुष (1946), पांचजन्य (1947), मयूर पंख, जूही के फूल आदि।

वर्मा द्वारा रचित महत्वपूर्ण एकांकी नाटकों में 'बादल की मृत्यु', 'चारुमित्रा', 'रजनी की रात', 'उत्सर्ग', 'अन्धकार', 'रेशमी टाई', 'विक्रमादित्य', 'कौमुदी महोत्सव', 'प्रतिशोध', 'तैमूर की हार', 'औरंगजेब की आखिरी रात', 'वासवदत्ता', 'राजरानी सीता', 'पृथ्वी का स्वर्ग', 'कलंक रेखा' आदि प्रमुख है। वर्मा के एकांकी नाटकों को विषयवस्तु की दृष्टि से मोटे तौर पर दो वर्गों में बाटा जा सकता है– (1) ऐतिहासिक (2) सामाजिक। इनकी ऐतिहासिक नाटकों के माध्यम से भारतीय जनजीवन का अतीत, गौरव, त्याग और देशप्रेम को साम्प्रतिक परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत किया गया है।

सामाजिक एकांकी नाटकों के माध्यम से वर्माजी ने मध्यवर्गीय पारिवारिक संघात, नारी–पुरुष का संबध, परिवर्तित मानवीय मूल्यवोध तथा वर्गीय संघर्ष को नये रूप रंग के साथ पाठकों के समक्ष उपस्थित किया है।

एक ओर रहस्यवादी कवि व्यक्तित्व दूसरी ओर जीवन यथार्थ पर आधारित नाट्यकार व्यक्तित्व यही राम कुमार वर्मा के साहित्य की विशिष्टता हैं। कविता हो या नाटक हो उनकी समस्त रचना चिंरतन मानवीय भावभूमि पर आधारित है। मानवीय चैतन्य की उदात्तता और की जीवन रहस्य खुलने की प्रबल जिज्ञासा इनकी रचनाओं में कूट कूट कर भरी हुई है। पर सच तो यह है कि राम कुमार वर्मा की ख्याति का मूल आधार कविता नहीं, बल्कि नाटक और एकांकी है। निश्चितरूप से वर्मा जी आधुनिक हिन्दी एकांकी का प्राण प्रतिष्ठाता हैं। इन्होंने संस्कृत और अंग्रेजी साहित्य से प्रभाव तो ग्रहण किया, पर उसे आत्मसात कर सम्पूर्ण देशीय पृष्ठभूमि में एकांकी का पल्लवन किया और परवर्ती साहित्यकारों के लिए भी मार्ग प्रशस्त किया।



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 1 : राम कुमार वर्मा का जन्म कब हुआ था?

.....

प्रश्न 2 : 'पृथ्वीराज की आखें' नामक एकांकी संग्रह कब प्रकाशित हुआ?

.....

12.6 कौमुदी महोस्तव: कथावस्तु

'कौमुदी महोत्सव' एक प्रसिद्ध ऐतिहासिक एकांकी है। नाटककार के अनुसार इस्का समय ईस्वी पूर्व 322। यह काल भारतीय इतिहास एवं राजनीति के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। क्योंकि ग्रीक वीर सिकन्दर के भारत आक्रमण, मगध में नन्दवंश का नाश और चन्द्रगुप्त मौर्य का उत्थान इस समय की विशेष महत्वपूर्ण घटनाएँ हैं। बौद्ध ग्रंथ, अर्थकथा, जैनग्रंथ तथा वायुपुराण में उपलब्ध वर्णन के अनुसार मौर्य चन्द्रगुप्त ने कुशाल राजनीतिक चाणक्य की सहायता से ई. पू. 321 से ई. पू. 297 तक तत्कालीन भारतवर्ष की राजनीतिक सत्ता संभाला था। पुराण में इस बात का स्पष्ट उल्लेख है कि चन्द्रगुप्त के बाद और नौ राजाओं ने मगध में मौर्य-वंश का नाम रोशन किया था। जयशंकर प्रसाद ने पर्याप्त ऐतिहासिक तथ्यों के द्वारा इस बात की पुष्टि की है कि मौर्य कुल की सबसे प्राचीन राजधानी पिप्पली-कानन था। इसके बाद पाटलिपुत्र, उज्जयिनी, धारा महेश्वर, चित्तौर, अर्बुदगिरि आदि में भी राजधानियाँ स्थापित की थीं।

प्रस्तुत एकांकी में एकांकीकार ने एक राजनीतिक षड़यंत्र का पर्दाफाश करने का प्रयास किया है। एकांकी का नायक चन्द्रगुप्त की उदारता और राजनीतिक अनभिज्ञता का फायदा उठाते हुए विरोधी राजनीतिक विषकन्या का प्रयोग करके उनको मौत के घाट पर उतार देने की योजना बनाता है। पर महामंत्री चाणक्य की विलक्षण दूर दृष्टि के सामने ऐसा प्रयास नाकाम हो जाता है।

कुसुमपुर के मौर्यसम्राट चन्द्रगुप्त 'कौमुदी महोत्सव' के बारे में इस प्रकार व्याख्या देते हैं- ''मैं एक महोत्सव का आयोजन करना चाहता हूँ 'कौमुदी महोत्सव'। प्रकृति की इस चन्द्रमयी निर्मलता में जनता के हृदय की समस्त पाप वासनाएँ धुल जावे। कौमुदी महोत्सव इस भाँति, कुसुमपुर का महान राजनीतिक पर्व है।''

बाहरी दृष्टि से यह एक आनन्दोत्सव है। कुसुमपुर के कार्यान्तिक पुष्पदत्त की देखरेख में सोन और गंगा के संगम पर एक सौ नौकाओं को सम्राट के शुभ नाम के आकार में सजाकर उन पर चालीस हाथ ऊपर आकाश-दीपों की व्यवस्था की जाती है। यही नहीं नगर की दीवारों

की चारों ओर सोन नदी की लहर में सहस्र दीप जलाये जाते हैं। ताकि लोगों को लगे कि नगर के चारों ओर दीपों की आकाश गंगा बहती जा रही हैं। इस कार्य के लिए चन्द्रगुप्त अपने व्यक्तिगत 'चन्द्रकोष' से समस्त व्यय करने का आदेश देते हैं। कुसुमपुर के अन्तपाल यशोवर्मन और समाहर्ता वसुगुप्त भी सम्राट चन्द्रगुप्त को साथ देते हैं। इसी बीच वसुगुप्त सौन्दर्य कै इस महामेला में नन्दवंश की अपूर्व सुन्दरी राज-नर्तकी अलका के नृत्यानुष्ठान का प्रस्ताव सामने रखते है। चन्द्रगुप्त सहर्ष इस प्रस्ताव को स्वीकार करते हैं। सम्राट के आदेश पर राजनर्तकी अलका का प्रवेश होता हैं। अलका बड़ी कुशलता से सम्राट को अपनी ओर आकर्षित करने का प्रयत्न करती है। घटनाक्रम आगे बढ़ ही रहा था उसी समय महामंत्री आर्य चाणक्य का मंच पर प्रवेश होता है।

चाणक्य के प्रवेश के साथ ही दृश्यपट बदल जाते हैं। उनके आदेश पर सैनिक द्वारा वसुगुप्त और अलका को बन्दी बनाया जाता है। पर उनका अपराध क्या है ? इस बात को लेकर चन्द्रगुप्त और चाणक्य के बीच मतविरोध भी होता है। चन्द्रगुप्त चाणक्य के इस अवांछित हस्तक्षेप से असन्तुष्ट हो उठते है। चाणक्य बड़ी दृढ़ता और आत्मविश्वास के साथ अपने कदम को सही घोषित करता है। बात यहाँ तक पहुच जाती है कि चाणक्य अपना रास्त्र फेंक कर मंत्रीपद छोड़ने के लिए तैयार हो जाते हैं। चाणक्य संकेत देकर कहते हैं, ''बालक आग पकड़ना चाहता है। उसे आग पकड़ने की सुविधा नही दी जा सकेगी''।

इसके बाद ही असलियत का पर्दा एक के बाद एक खुलने लगता है। चाणक्य के कठिन प्रश्नों के सामने वसुगुप्त यह स्वीकार करने के लिए बाध्य हो जाते है कि वह चन्द्रगुप्त को अनिष्ट करने के लिए ही आये थे। वस्तुत: वसुगुप्त नन्दवंश के प्रवल प्रतापी मंत्री राक्षस के गुप्तचर थे। उसे भरपूर सहयोग दिया था राजनर्त्तकी अलका ने। इस तथ्य को सही साबित करने के लिए चाणक्य एक प्रयोग का सहारा लेते हैं। आर्य चाणक्य के आदेश पर सैनिक बलपूर्वक अलका को मदिरा पिलाता है। इसके बाद अलका के कोमल अधरों से और अधिक मादक बननेवाली शेष मदिरा वसुगुप्त को भी पिलाया जाता है। पर पीने के तुरंत बाद ही वसुगुप्त तड़प तड़पकर मर जाते है। अलका चन्द्रगुप्त के पैर छूकर माफी माँगना चाहती है। पर चाणक्य के इंगित पर अलका चन्द्रगुप्त को स्पर्श कर नही पाती। अलका एक विषकन्या है। मृत्यु और सौन्दर्य का अपूर्व संमिश्रण है। वह बड़ी चालाकी से चन्द्रगुप्त का प्राण लेना चाहती थी। योजना के अनुसार बाते आगे बढ़ भी रही थी। पर प्रवीण राजनीतिज्ञ चाणक्य की दूरदर्शिता एवं ब्यवहारिक बुद्धिमत्ता के कारण एक भयंकर अमंगल से चन्द्रगुप्त के प्राण बच जाती हैं। इस घटना के तुरंत बाद आर्य चाणक्य घटनास्थल से प्रस्थान करते हैं। चन्द्रगुप्त अपनी गलती को सुधारने का प्रयत्न करते हैं। वह चाणक्य को विनीत भाव से वापस बुलाते हैं। पर चाणक्य तेजी से दूर चले जाते हैं। सम्राट चन्द्रगुप्त महामंत्री को खोजते हुए पीछे पीछे जाते हैं। संक्षेप में एकांकी की कथावस्तु यही है।

विषयवस्तु, नाटयशिल्प, संवेदनशीलता और उद्देश्य की दृष्टि से 'कौमुदी महोत्सव' एक सफल एकांकी है। निश्चित रूप से प्रस्तुत एकांकी ऐतिहासिकता और काल्पनिकता का अनोखा संगम है।



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 3 : चन्द्रगुप्त किस राजवंश के सम्राट थे?

.....

प्रश्न 4 : चन्द्रगुप्त के महामंत्री कौन थे?

.....

12.6.1 चरित्र चित्रण

प्रस्तुत एकांकी में कुल छः चरित्र हैं। वे हैं– चन्द्रगुप्त, चाणक्य, वसुगुप्त, यशोवर्मन, पुष्पदत्त और अलका। इनके अलावा सैनिक और दौवारिक आदि गौन चरित्र भी हैं। इनमें से मूल चरित्र चार हैं– चन्द्रगुप्त, चाणक्य, वसुगुप्त और अलका।

- *चन्द्रगुप्त :* चन्द्रगुप्त मौर्य और उनके उत्तर पुरुषों के बारे में पुराण, बौद्धसाहित्य, जैन साहित्य, प्रस्तर लिपि, कौटिल्य का 'अर्थशास्त्र' तथा मेगास्थनिस द्वारा रचित 'इंडिका' से पर्याप्त जानकारी मिलती हैं। ग्रीक इतिहासकार जाष्टिन के अनुसार चन्द्रगुप्त Humble Origin अर्थात साधारण वंशज थे। लेकिन विशाखदत्तके 'मुद्राराक्षस' में उल्लेखित टीका के अनुसार चन्द्रगुप्त नन्द राज की एक दासी मुरा फीसंतान हैं। इसीकारण इनके वंश का नाम मुरा से मौर्यबना। पर जैन और बौद्ध ग्रंथों के अनुसार चन्द्रगुप्त उत्तरप्रदेश के गोरखपुर जिला के अन्तर्गत पिप्पलीबन के मौर्य वंश के सपूत थे। ज्यादतर इतिहासकार इस मत से सहमत हैं। दूसरी बात यह भी है कि कौटिल्य द्वारा इनका राज्यभिषेक भी किया गया था जो सिर्फ एक क्षत्रिय के लिए ही संभव था।

  अस्तु, बचपन से ही क्षत्रिय गुणों के अधिकारी चन्द्रगुप्त को आचार्य चाणक्य तक्षशिला ले आते हैं। वहाँ उन्हें युद्ध, कूटनीति, राजनीति आदि की शिक्षा दी जाती है। इसके बाद मगध के शासक महापद्मनन्द को परास्त करके चन्द्रगुप्त मगध के सम्राट बनते हैं।

  इतिहासकारों का मानना है कि चन्द्रगुप्त मगध राज्य के राजसिंहासन पर 321 ई. पू. आसीन हुआ था। आचार्य रामचन्द्र शुक्लजी के अनुसार चन्द्रगुप्त ने लगभग 24 साल राज्यशासन किया था। चन्द्रगुप्त मौर्य की राज्यसीमा उत्तर दिशा में अफगानिस्तान, वेलूसिस्तान और नेपाल से लेकर दक्षिण में महीशूर तक और

पूर्व में गंगा नदी से लेकर पश्चिम में गुजरात तक विस्तृत था।

चन्द्रगुप्त मौर्य एक निपुण योद्धा थे। उनकी सेना में 6,00,000 पदातिक, 30,000 घोड़ा, 9,000 हाथी और 8,000 रथ थे। इनका एक विशाल नौसेना विभाग भी था। अपनी कार्य कुशलता तथा अदम्य साहस के कारण ही चन्द्रगुप्त इतने बड़े साम्राज्य की प्रतिष्ठा में सफल हुए थे।

एक अच्छे प्रशासक के रूप में भी चन्द्रगुप्त को माना जाता है। आर.टि. भंडारी के अनुसार पाटलिपुत्र की शासन व्यवस्था को सठिक बनाने के लिए छः समितियों का गठन किया था। वे हैं– (1) श्रमशिल्प (2) विदेशी देखभाल, (3) जन्म, मृत्यु का हिसाब रखना, (4) आमदानी–रवर्च का हिसाब रखना, (5) शिल्पजात वस्तुओं के उत्पादन एवं बेचने की व्यवस्था, (6) राज संग्रह की व्यवस्था।

इस प्रकार देखा जाता है कि चन्द्रगुप्त एक महान देशप्रेमी, समरकुशल योद्धा और यशस्वी प्रशासक थे। भारतीय इतिहास में इनको विशिष्ट स्थान प्राप्त है।

- *चाणक्य :* अद्वितीय बुद्धिमता, व्यापक दूरदर्शिता प्रखर शास्त्रज्ञान और देशोद्धार की ऐतिहासिक भूमिका के लिए आचार्य चाणक्य को जाना जाता है।

चाणक्य के और कुछ नाम हैं। यथा: विष्णुगुप्त, कौटिल्य, वात्स्यायन, दामिल इत्यादि। मगध के शासक के रूप में नन्द के स्थान पर चन्द्रगुप्त को अधिष्ठित करने में चाणक्य का बहुत बड़ा योगदान रहा है। ज्यादातर विद्वान इनको तक्षशिला के निवासी मानते है। मगध के शासक महापद्मनन्द ने इन्हें एकबार भरी सभा में अपमानित किया था। उसी समय चाणक्य शिखा खोलकर नन्दवंश नाश करने की प्रतिज्ञा करते हैं। परवर्ती समय में उनका स्वप्न साकार बनता है और मगध में मौर्यवंश की प्रतिष्ठा होती है। इस बात पर कोई सन्देह नहीं कि भारतीय राजनीति में चन्द्रगुप्त के उत्थान में चाणक्य की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। महाभारत में अर्जुन के विजय में श्रीकृष्ण की जो भूमिका थी, वही भूमिका चन्द्रगुप्त के साथ चाणक्य ने भी निभायी थी।

एक महान राजनीति विशारद होने के साथ ही चाणक्य एक प्रतिभावान लेखक भी थे। उनके द्वारा रचित 'अर्थशास्त्र' भारतीय समाज जीवन का एक प्रामाणिक दस्तावेज है। इस प्रसिद्ध ग्रंथ में राष्ट्रनीति, मौर्ययुग की शासन व्यवस्था, दास प्रथा, समाज तत्व, वर्ग विभाजन, अर्थनीति, धर्मनीति आदि का विशद उल्लेख है। प्रसिद्ध इतिहासकार आर, एस, त्रिपाठी के अनुसार 'यह ग्रंथ प्रारंभिक भारतीय साहित्य की अद्वितीय कृति है'। चाणक्य का विशाल व्यक्तित्व, प्रखर राजनीतिज्ञान और दूरदर्शिता अत्यन्त प्रेरणादायक है।

➢ *वसुगुप्त :* वसुगुप्त कुसुमपुर के नवीन समाहर्त्ता हैं। मौर्य चन्द्रगुप्त ने उन्हें यह पद दिया है। एकांकी की प्रारंभिक अवस्था में उनको चन्द्रगुप्त तथा कुसुमपुर के प्रति अनुगत प्रशासक जैसा प्रतीत होता है। पर घटनाक्रम आगे बढ़ने के साथ ही वसुगुप्त का असली स्वरूप धीरे धीरे स्पष्ट हो जाते है। आर्य चाणक्य के सामने वह स्वीकार करता है कि वह कुसुमपुर का नही बल्कि अमरावती का निवासी है। वह नन्दराजा के मंत्री राक्षस का गुप्तचर है। चन्द्रगुप्त को भारी नुकसान करना ही उनका अभीष्ट था। पर चाणक्य की बुद्धिमानी के कारण ऐसा हो न सका। विषकन्या अलका को साथी बनाकर जो मौत का खेल वसुगुप्त खेलना चाहता था, वह खुद उसका शिकार बन जाता है।

वसुगुप्त प्रस्तुत एकांकी का खलनायक है। कथावस्तु में नाटकीयता और तीव्रता लाने में वसुगुप्त का विशेष योगदान है। वसुगुप्त एक विपथगामी पात्र है जिसका अन्तिम अनजाम अत्यन्त दयनीय है।

चन्द्रगुप्त, चाणक्य की भाँति वसुगुप्त ऐतिहासिक पात्र न होकर काल्पनिक पात्र है। पर एकांकीकार ने इस महत्वपूर्ण चरित्र को अत्यन्त जीवन्त और रोचक रूप में प्रस्तुत किया है।

➢ *अलका :* प्रस्तुत एकांकी का एकमात्र नारी पात्र है अलका। अलका भी ऐतिहासिक पात्र नहीं है। पर इस एकांकी में अलका को अत्यधिक महत्व दिया गया है। नन्दवंश की राजनत्तकी, सौन्दर्य की जीवन्त प्रतिमूर्ति अलका एक विषकन्या है। साँप के विष से उसका पूरा शरीर जहरीला बना हुआ है। उसके संस्पर्श में आनेवाले किसी की भी मौत के मुह में ढकेलना उसके लिए एक पल का काम है। कौमुदी महोत्सव की सुविधा लेकर बड़ी कुशलता से अलका सम्राट चन्द्रगुप्त के पास पहुचती है। वाकवैदग्धता और कलानिपुणता से वह सम्राट को अपने प्रति आकर्षित करना जाहती है। पर ऐसी स्थिति में आर्य चाणक्य ने बड़ी सावधानी से चन्द्रगुप्त को बचाता है और अलका का असली स्वरूप खुल जाता है।

अलका इस एकांकी में मध्यभाग से अंत तक उपस्थित है। वाकनैपुण्य और नृत्यपारदर्शिता उसकी दो प्रमुख विशेषताएँ हैं। पर अपने उद्देश्य को साकार करने में वह असफल रहती है। अलका एक स्वार्थी, चालाक, कलानिपुण और विचित्र नारी पात्र है।



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 4 : चन्द्रगुप्त किस राज्य के सम्राट बने थे ?

.....

प्रश्न 6 : चाणक्य (कौटिल्य) द्वारा रचित प्रख्यात ग्रंथ का नाम क्या है ?

.....

12.6.2 संलाप

इस एकांकी का संलाप अत्यन्त सुबोध, रोचक एवं पात्रानुकुल है। पात्रों की मानसिक अवस्था को उन्मोचित करने में संलाप पूरी तरह सक्षम है। खासकर सुक्तिधर्मी संवादों का प्रयोग विशेषरूप से द्रष्टव्य है। जैसे–

- सन्देह पानी का बुलबुला नहीं है जो एक क्षण में भंग हो जाता है। सन्देह तो धूमकेतु की रेखा है जो आकाश में एक छोर से दूसरे छोर तक फैली रहती है।
- गति में अधिकार का आडम्बर नहीं होता उसमें शक्ति की बिजली होती है।

मौर्ययुगीन घटनाओं तथा तत्कालीन पात्रों को सजीव एवं जीवन्त बनाने में इस एकांकी के संलाप प्रयोग अत्यन्त सफल सिद्ध हुए हैं।

12.6.3 वातावरण

'कौमुदी महोत्सव' एकांकी का सम्पूर्ण वातावरण ऐतिहासिक है। मौर्यवंश द्वारा शासित कुसुमपुर के राजनीतिक वातावरण का यहाँ सुन्दर वर्णन हुआ है। यथा– 'जिस समय से कौमुदी महोत्सव का संवाद नागरिकों के समीप पहुचा है, उस समय से प्रत्येक नागरिक ने शुद्र महापद्मनन्द की क्रूरता के उपसंहार में आपकी उदारता का 'भारत वाक्य' जोड़ दिया है। सम्राट ने आर्य चाणक्य की सहायता से शस्त्र, शास्त्र और पृथ्वी का उद्धार किया है। आपका कुसुमपुर में प्रवेश शस्त्र की विजय का सूचक है जिसमें शास्त्र का संतोष और पृथ्वी का कल्याण है।

12.6.4 उद्देश्य

एकांकी का मूल उद्देश्य है वास्तविक सत्य का उदघाटन करना। देश शासन करने के लिए सिर्फ शस्त्रबल और समरकुशलता ही काफी नहीं होता, उसके लिए दूरदृष्टि, बुद्धिमत्ता और राजनीतिक कुशलता भी आवश्यक है। 'कौमुदी महोत्सव' में राजशासन की कठिन चुनौतियाँ तथा उसके सफल निराकरण को दर्शाया गया है। एकांकीकार तत्कालीन राजनीतिक व्यवस्था तथा कुचक्रों का पर्दा हटाकर अनागत समय में बरतने वाली सावधानियों के प्रति सबका ध्यान आकर्षित करना चाहता है।

12.6.5 भाषा शैली

रामकुमार वर्मा की भाषा शैली संस्कृतनिष्ठ है। उनकी भाषा एकांकी के देश

काल को सही रूप में अभिव्यक्त करती है। आदि से अंत तक प्रस्तुत एकांकी की भाषाशैली अत्यन्त रोचक एवं प्रवाहशील हैं। यथा –'नृत्य और संगीत कौमुदी महोत्सव की वह प्रस्तावना है जिसमें उमंग की रूपरेखा मंगल के रंग में सुसज्जित होती है। नृत्य में ऐसी मनोहर भावनाएँ हैं जिनमें सुख का रहस्य जागता है।'

12.6.6 रंगमंच निर्देश

नाटक या एकांकी में रंगमंच निर्देश एक महत्वपूर्ण तत्व है। 'कौमुदी महोत्सव' में वातावरण का वर्णन, पात्रों का संचालन तथा नेपथ्य ध्वनि आदि का स्पष्ट वर्णन मिलता है।

जैसे : 'बाहर चारो ओर कोलाहल हो रहा है। बीच बीच में तुरही का नाद हो उठता है। शंख और घंटों की आवाज भी सुन पड़ती है। राजकक्षा में समाहर्त्ता वसुगुप्त और अन्तपाल यशोवर्मन बाते कर रहे हैं।'



12.7 प्रस्तुत अध्याय से हमने सीखा

- आधुनिक हिन्दी एकांकी साहित्य में रामकुमार वर्मा एक प्रमुख हस्ताक्षर हैं। इन्होंने पूरी हिन्दी एकांकी को एक नया आयाम प्रदान किया। 'कौमुदी महोत्सव' एक ऐतिहासिक एकांकी है। मौर्यवंशीय शासन व्यवस्था तथा अनेक तत्कालीन चुनौतियों को बड़ी कुशलता से एकांकी में चित्रित किया गया है। इस एकांकी के माध्यम से वर्माजी ने इतिहास और कल्पना का अदभुत समन्वय करके अपनी विचित्र प्रतिभा का परिचय दिया है। एकांकीकार ने यह भी संदेश दिया है कि इतिहास एक जीवन्त दस्तावेज है और उससे शिक्षा लेना बहुत जरुरी है।



12.8 विस्तृत जानकारी हेतु पढ़े

1) वर्मा, राम कुमार ; *हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास*
2) महेन्द्र, राम चरण ; *एकांकी और एकांकीकार*

12.9 स्वनिरीक्षण का पुननिरीक्षण

प्रश्नोत्तर 1 : 14 सितम्बर, सन 1904

प्रश्नोत्तर 2 : 1936 ई.

प्रश्नोत्तर 3 : मौर्य

प्रश्नोत्तर 4 : चाणक्य

प्रश्नोत्तर 5 : कुसुमपुर

प्रश्नोत्तर 6 : अर्थशास्त्र

12.10 सम्भावित प्रश्न

प्रश्न 1. राम कुमार वर्मा की एकांकियों की क्या विशेषताएँ हैं ?

प्रश्न 2. एकांकी तत्वों के आधार पर 'कौमुदी महोत्सव' का विश्लेषण कीजिए ?

प्रश्न 3. प्रस्तुत एकांकी का मूल संदेश क्या है ?

प्रश्न 4. चाणक्य का चरित्रांकन कीजिए ?

*** ***** ***

इकाई 13 : जगदीश चन्द्र माथुर – बन्दी

इकाई की रूपरेखा

13.1 उद्देश्य

13.2 प्रस्तावना

13.3 जगदीश चद्र माथुर : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

13.4 बन्दी : एकांकी की कथावस्तु एवं विश्लेषण

13.4.1 चरित्र चित्रण

13.4.2 संवाद

13.4.3 वातावरण

13.4.4 भाषा शैली

13.4.5 उद्देश्य

13.4.6 रंगमंच निर्देश

13.5 प्रस्तुत अध्याय से हमने सीखा

13.6 विस्तृत जानकारी हेतु पढ़े

13.7 स्वनिरीक्षण का पुनर्निरीक्षण

13.8 सम्भावित प्रश्न

13.1 उद्देश्य

प्रस्तुत अध्याय में आप सीखेंगे –

- एकांकीकार जगदीश चंन्द्र माथुर एवं उनके साहित्य के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे
- 'बन्दी' एकांकी की कथावस्तु को
- एकांकी के अन्य तत्वों वारावरण, उद्देश्य, भाषाशैली तथा रंग निर्देश को

13.2 प्रस्तावना

आधुनिक हिंदी साहित्य में एकांकी का महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। एकांकी के क्रम में हमें जगदीश चंन्द्र माथुर की 'बन्दी' एकांकी अध्ययन करना है। आधुनिक हिंदी एकांकी के क्षेत्र में एकांकीकार जगदीश चंन्द्र माथुर को उनकी पैनी सामाजिक दृष्टि एवं उत्कृष्ट शिल्प विधान के लिए विशिष्ट स्थान प्राप्त है। प्रस्तुत एकांकी में शहरी जीवन एवं ग्रामीण जीवन के द्वन्दू को प्रतीकात्मक रूप में चित्रित किया गया है। साथ ही आधुनिक बुद्धिवाद एवं क्षमता लिप्सा के कारण समाज में फैले दुषित मानसिकता को भी यहाँ दर्शाया गया है।

हरेक साहित्य रचनाकार का मानस सन्तान होता है। अत: इस अध्याय में भी एकांकीकार

जगदीश चन्द्र माथुर के जीवन दर्शन एवं कृतियों पर आलोकपात किया गया है।

13.3 जगदीश चन्द्र माथुर : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

आधुनिक हिंदी एकांकी जगत में अपनी प्रयोगधर्मिता और यथार्थवादिता के लिए जगदीश चंन्द्र माथुर को जाना जाता है। कम नाटक लिखने के बाद भी माथुर जी को विशेष ख्याति प्राप्त हुई। इन्होने सन 1936 से आधुनिक ढंग की एकांकी लिखना शुरू किया। पर नाट्यजगत में इन्होंने सन 1929 में ही कदम रखा था। इसी साल में इन्होने 'मूर्खेतर राजा' नामक प्रहसन की रचना की थी। सन 1931-1932 में 'सेवा' नामक पत्रिका में इनके और दो एकांकी – 'लवकुश' और 'शिवाजी' निकली। लेकिन सन 1936 ई में 'सरस्वती' पत्रिका में प्रकाशित 'मेरी बासुरी' नामक एकांकी से ही माथुर जी को हिंदी नाट्यजगत में प्रतिष्ठा मिली। इसके पश्चात इनके द्वारा रचित एकांकी इस प्रकार है : *भोर का तारा (1935) कलिंग विजय (1935), रीढ़ की हड्डी (1939), मकड़ी का जाला (1941), खण्डहर (1943), खिड़की की राह (1949), ओ मेरे सपने (1953), मेरे श्रेष्ठ* एकांकी आदि।

यह बात स्पष्ट है कि माथुर जी पाश्चात्य नाट्यशैली से काफी प्रभावित थे। शेक्सपियर, जेम्स बेरी, मैंटरलिंक आदि महान नाटककारों की रचनाओं का आपने गहन अध्ययन किया, पर किसी लेखक का इन्होने अनुकरण नहीं किया। बल्कि उन लेखकों से प्राप्त अनुभवों को नये रूप रंग के साथ निजी शैली में प्रस्तुत किया।

विषयवस्तु की दृष्टि से जगदीश चंन्द्र माथुर की रचनाएँ सामाजिक धरातल पर आधारित हैं। भारतीय समाज में फैले कुरीतियाँ, अन्धविश्वास, अन्याय आदि को इन्होंने एकांकी के जरिए अभिव्यक्ति दी, साथ ही आधुनिकता और परंपरा की टकराहट को भी इन्होंने वर्ण्य विषय बनाया है। सामाजिक जीवन में आये नये परिवर्तन और मूल्य के विघटन को प्रतीकधर्मिता के साथ माथुर जी ने प्रस्तुत किया। तीखा व्यंग्य और संकेतों के माध्यम से माथुर जी समाज में व्याप्त असन्तुलन और तामसिक प्रवृत्तियों के विरूद्ध पाठकों को सचेत करना चाहते थे।

माथुर जी की एकांकी में नवीन नाट्य कौशल का प्रयोग दृष्टिगोचर होता है। काव्यात्मकता और संगीतात्मकता के माध्यम से नाटककार लोगों के हृदयपक्ष को जगाने का प्रयास करते हैं। इसलिए इनके नाटकों के प्रतिपाद्य में विस्तार कम लेकिन घनत्व ज्यादा है। जीवन के किसी साधारण खंडचित्र को ही वह भव्य नाटकीय रूप देना पसंद करते हैं। क्योंकि माथुर जी का विचार है कि नाटकों के माध्यम से समस्याओं का वर्णन कम, लेकिन समस्या के प्रति जिज्ञासा और जागरूकता पैदा करना ज्यादा जरूरी है।

जगदीश चंन्द्र माथुर एक आस्थावादी एकांकीकार हैं। जीवन और जगत के प्रति अटूट विश्वास, मनुष्यत्व के प्रति गंभीर आस्था और भविष्य के प्रति सकारात्मक दृष्टिभंगी इनकी रचनाओं में कूट कूट कर भरी हुई है।



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 1 : जगदीश चंन्द्र माथुर कब से आधुनिक शैली की एकांकी लिखना शुरू करते हैं।

.....

प्रश्न 2 : किस नाट्यशैली से माथुर जी सर्वाधिक प्रभावित थे ?

.....

13.4 बन्दी : एकांकी की कथावस्तु एवं विश्लेषण

प्रस्तुत एकांकी में शहरी जीवन एवं ग्रामीण जीवन की विपरीत मुखी संस्कृति तथा सत्तालोलुपता को व्यंग्यात्मक ढंग से उपस्थित किया गया है। साथे ही मानवीय मूल्य के विघटन को भी नाटकीयता के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। यहाँ देश के ग्रामीण जीवन में आये परिवर्तन तथा बदलती हुई मानसिकता को सफल रूप से चित्रित किया गया है। इस एकांकी में तीन दृश्य हैं। पहले दृश्य में एकांकी की पृष्ठभूमि में उत्तर भारत का एक गाँव है। इसी गाँव में कई सालों के बाद हाइकोर्ट के जज और गावँ के भूतपूर्व जमीदार रायसाहब अपने कलाकार बेटी हेमलता और उनकी प्रेमी वीरेन के साथ शहर से आकर फिर से निवास करना चाहते हैं। क्योंकि उन्हें लगता था कि गाँव में अब भी ईमानदारी, सरलता, सहृदयता, सच्चाई, मानवता आदि अच्छे गुण उपलब्ध हैं। शहरी अवसाद से मुक्ति और अकृत्रिम हृदयवाले ग्रामीण जनता के साथ सद्भाव स्थापन करने के इरादे से वे एक योजना भी बना लेते हैं। इसके अनुसार गाँववालों की प्रगति के लिए एक ग्रामोद्धार समिति बनायी जाएगी। वीरेन बड़े उत्साह एवं आशा के साथ इस योजना को आगे बढ़ाना चाहता है। रायसाहाब की बेटी हेमलता गावों की हरीयाली, खेत-खलिहान, चाँदनी रात आदि को देखकर अभिभूत हो जाती है। उसे लगता है कि ग्रामीण मिट्टी की महक और अपार्थिव सौन्दर्य को वह अपनी कला के जरिए अमर बना देंगी। भावुक प्रकृति की हेमलता की बातों में हृदय की सरलता और प्रकृति प्रेम निखर उठती है। रायसाहब भी बड़ी उम्मीद के साथ गाँव में शेष जीवन को शान्ति पुर्वक बिताना चाहते हैं।

पर इसके बाद घटनाक्रम में बदलाव आते हैं। रंगीन स्वप्न और वास्तविकता में कितना अंतर हो सकता है – इसका आभास धीरे धीरे स्पष्ट होने लगता है। रायसाहब के बचपन के मित्र चौधरी के भतीजा बालेश्वर उर्फ बी. पी. सिंहा तथा उनके मित्र करमचन्द बशैता उनके पास आते हैं। यहीं वीरेन और बालेश्वर तथा करमचन्द के बीच ग्रामोद्धार समिति के बारे में विस्तृत रूप से चर्चा होती है। बालेश्वर और करमचंन्द शहरी शैली में गावँ में भी एक क्लब खोलना चाहते हैं। इसमें एक प्रेसीडेन्ट, दो वाइस प्रेसीडेन्ट,एक सेक्रेटरी, दो ज्वॉइन्द सेक्रेटरी और पाँच कमेटी मेम्बर रेहेंगे। लेकिन ठाकुरबस्ती के धरमसिंह और किशनकुमार सिंह भी

वाइस प्रेसीडेन्ट बनना चाहते हैं और पूरी कमिटी में भी उपने तीन लोगों को रखना चाहते हैं। इन सारी बातों पर वीरेन के साथ चर्चा करने के बाद दोनों नौ जवान चले जाते हैं। यहीं पहला दृश्य खत्म होता है।

दूसरे दृश्य में घटनाक्रम की दिशा बदल जाती है। ग्रामोद्धार समिति की योजना को साकार रूप देने के लिए वीरेन एक लिखित भाषण तैयार करते हैं तथा जनताओं के पास अपनी भावना को पहुचाना चाहते हैं। लेकिन उसी समय पता चलता है कि वी. पी. सिंहा और करमचन्द बशैता दो गुटों में विभाजित हो जाते हैं। करमचन्द ठाकुरबस्ती के साथ हाथ मिला लेते हैं। दोनों गुटों लोग के हाथ में लाठी लेकर नारे लगाते हुए सभा में जाते हैं। विषम परिस्थिति का अनुमान करते हुए वीरेन भी सभा के लिए रवाना हो जाते हैं। पर दोनों गुटों की लड़ाई को रोकने की कोशिश में वीरेन खुद बुरीतरह घायल हो जाते हैं। वीरेन के कॉलेज के मित्र लोचन सिंह परमार जो इस समय मुसहरों की बस्ती में रहने लगे हैं, उसे बचाकर राय साहव के घर तक ले आते हैं। लोचन की बातों में प्रबल आत्मविश्वास, रहस्यमयता और आत्मसम्मानबोध भरे हुए हैं। देहाती रूप में लोचन को पहले वीरेन पहचान नहीं पाते। लेकिन बाद में दोनों एक दूसरे को जान जाते हैं। इस दृश्य में ही पूरी घटना शीर्ष बिन्दु पर में पहुच जाती है। रायसाहब के मित्र चौधरी साहब भी इस लड़ाई-झगड़े में जखमी हो जाते हैं। इसके बाद घायलों को सेवा करने की उल्लेख मिलता है।

इस दृश्य में गावों की अन्दरूनी राजनीति, सत्तालोलुपता और हिंसक वातावरण का नग्न सरप उभर कर आया है। शहरी लोगों के मन में गाव अब भी सौंदर्य और सादगी का अनोखा नमूना है। पर कटु सत्य यह है कि आजकल गाव में शहर से कहीं ज्यादा राजनीतिक बोलबाला चलता है। इसलिए वीरेन तथा हेमलता की प्रगति का स्वप्न गाव में आकर विराट स्वप्नभंग में बदल जाते हैं। आधुनिकता के विकास के फल स्वरूप पूरे देश में नये विचार उत्पन्न होने लगे हैं। लेकिन अर्धशिक्षित लोगों के लिए आधुनिकता का मतलब सिर्फ दिखावा है। इसी वजह से बालेश्वर तथा करमचन्द जैसे नौजवान गाव में शहरी ढंग के क्लव खोलकर अपने आपको आधुनिक तथा प्रगतिशील साबित करना चाहते हैं। पर सत्ता को हासिल करने के लिए वे आपस में लड़ जाते हैं और उनके असली स्वरूप का पता सबको लग जाता है। आजकल के गावों की यही वास्तविक चित्र एकांकी के इस दृश्य में प्रकट हो उठा है। गावों को नये रूप में सजाने के वीरेन का स्वप्न ऐसे ही चकनाचूर हो जाता है। ग्रामीण जीवन की इसी विडम्बना को एकांकी के दूसरे दृश्य में अत्यन्त रोचक ढ़ंग से उतारा गया है।

तीसरे दृश्य में शहर से आये हुए रायसाहब, हेमलता और वीरेन फिर शहर तक वापस चले जाने की तैयारी करते हैं। नौकर चेतु और आया पूरे परिवार से बोड़िया-बिस्तर बांधने में लग जाते हैं। इसी समय फिर लोचन सिंह रायसाहब के परिवार से मिलने के लिए आते है। लोचन सिंह रायसाहब, वीरेन और हेमलता से गाव में रूक जाने के लिए आग्रह करते है। पर यह आग्रह स्वीकार नहीं किया जाता। क्योंकि रायसाहब का मानना है कि वे जैसे इस गाव से

निर्वासित हो गए हैं। बरसों पहले की दुनिया उजड़ गयी और वह समाज ख्वाव हो चला। वीरेन का विचार है कि देहात की मध्ययुगीन उसर भूमि अभी क्रान्ति के लिए तैयार नहीं है। उसके लिए जरूरत है शहर और कारखानों की सजग और चेतनशील भूमि की। जाते जाते रायसाहब की बेटी हेमलता यह महसूस करती है कि उनकी जड़े कट चुकी हैं, वे गाव के लिए बिराने हो चुके हैं। लोचन सारे सवालों के जवाब देना चाहते हैं, पर इसे सुनने और सोचने के लिए किसी के पास समय नहीं है।

एकांकी के अंत में यह देखा जाता है कि सभी लोग अपनी अपनी दुनिया में बन्दी बन जाते हैं। इसलिए उस अदृश्य दुनिया के शिकंजे से कोशिश करने पर भी बाहर निकल आना मुश्किल है। खासकर शहरी जीवन शैली में लालित पालित रायसाहब के परिवार मानों उस वातावरण के बन्दी हैं जहाँ से निकलकर गाव में निवास करना उनके लिए असंभव सा हो जाता है। पर ऐसे में लोचन सिंह ओर चेतुराम जैसे मेहनती लोग गरीबी और गन्दगी के साथ संघर्ष करते हुए स्वतंत्र रूप से जीना चाहते हैं। इसलिए प्रतिकूलता का सामना करते हुए भी वे अपनी भूमि और गाव से नहीं भाग रहे हैं। बल्कि एक सन्तुलित और सुरक्षित भविष्य के निर्माण के लिए वे लोग इज्जत के साथ मेहनत करने के लिए तैयार हैं जहाँ वे बन्दी न होकर स्वतंत्र हैं।

पूरी कथावस्तु में कुछ अत्यन्त महत्वपूर्ण बिन्दुएँ निहित हैं। पहली बात यह है कि नींव के बिना जिस प्रकार इमारत की कल्पना बेकार है उसी प्रकार वास्तविकता को जाने बिना प्रगति की योजना बनाना भी हास्यास्पद है। वीरेन ग्रामोद्धार समिति बनाकर ग्रामीण समाज को उन्नति के शिखर तक ले जाना चाहते हैं। यही नहीं समिति के पुस्तकालय में मार्क्स, लेलिन से लेकर स्पेंग्लर, रसेल इत्यादि के ग्रंथों के अध्ययन द्वारा मानसिक मंथन यानी इंटलेकचुअल फरमेंट लाने की भी योजना तैयार की जाती है। पर जिस गाव के आम लोंगों के पास खाने के लिए रोजी रोटी के अभाव है उनके लिए इस प्रकार के बौद्धिक अनुशीलन कोरी काल्पनिकता मात्र है। हेमलता के लिए गाँव और देहाती जिन्दगी रंग और चित्र के लिए सबसे सही स्थान है। पकते हुए गेहूँ के खेत में चकित सी किसान वाला, रंग बिरंगी बाँस की टोकरिया बनाता हुआ मजदूर, सबेरे की किरण में धुली धुली सी गाय को दुहता हुआ ग्वाला आदि को स्केच एवं पेन्टिंग में खीचने के लिए हेमलता योजना बनाती है। इस प्रकार की योजना में एक प्रकार की रोमांचधर्मी कल्पना छिपी हुई है जो वास्तविकता से बहुत दूर है।

इस एकांकी में दूसरा महत्वपूर्ण बिन्दु यह है कि यहाँ बदलते हुए गाँवों के ढाँचे और राजनीतिक जागरूकता को चित्रित किया गया है। एकांकी में दिखाया गया है कि आज गावों में पूर्ववत सरलता, सादगी तथा अकृत्रिम मानसिकता उपलब्ध नहीं है। स्वतंत्रता के बाद शहरीकरण तथा उद्द्योगीकरण के कारण गाँव के काफी लोग आजीविका की खोज में नगर शहर में आकर बसने लगे हैं। इसका परिणाम यह हुआ कि ग्रामीण समाज में भी शहरी संस्कृति की हवा चलने लगी। फलस्वरूप देश के गावों में भी दूषित वातावरण की भूमि तैयार हो गई। कठिन सच का साक्षात्कार एकांकी में बार बार होता है।

प्रस्तुत एकांकी का तीसरा महत्वपूर्ण विषय यह है कि प्रतिकूलता का सामना न करते हुए रायसाहब का परिवार गाव से शहर तक भाग रहे हैं। आज के समाज में इस प्रकार की पलायनवादिता एक परिचित दृश्य है। जीवन संघर्ष का सामना न कर वास्तविकता से मुँह मोड़ना अत्यन्त निराशाजनक है। एकांकीकार ने इस युग-यथार्थ के प्रति भी हमारा ध्यान आकर्षित किया है।

'बन्दी' एकांकी में चौथी ध्यानयोग्य बात यह है कि सभी लोग अपनी जंजीर से बंधे होने पर भी लोचन और चेतुराम जैसे मेहनती व्यक्ति अब भी जीवन तथा समाज के प्रति आस्थाशील हैं। इसलिए वे तलहटीवाली जमीन पर खुदाई का काम शीघ्र ही शुरू करना चाहते हैं।



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 3 : जमींदार की बेटी का नाम क्या है ?

.....

प्रश्न 4 : वीरेन के गावनिवासी कॉलेज-जीवन के मित्र कौन हैं ?

.....

प्रश्न 5 : प्रस्तुत एकांकी में किन दो पृष्ठ भूमियों को दर्शाया गया है ?

.....

13.4.1 चरित्र चित्रण

बन्दी एकांकी में शहरी और ग्रामीण पात्रों का चित्रण हुआ हे। शहरी चरित्रों के अन्तर्गत रायसाहब,हेमलता और वीरेन तथा आया आते हैं। ग्रामीन चरित्रों में लोचनसिंह परमार, चेतुराम, बालेश्वर, करमचन्द आदि प्रमुख हैं। हरेक पात्र अपनी विशिष्टताओं से सम्पन्न है।

- *रायसाहब :* हाइकोर्ट के जज और गाँव के भूतपूर्व जमींदार रायसाहब इस एकांकी का एक महत्वपूर्ण चरित्र है। वह अपनी बेटी हेमलता और वीरेन के साथ शहर से आकर गाव में निवास करना चाहते हैं। वे गाँव में निवास करने के लिए मन में योजना बनोते हैं। पत्नी के गुजार जाने के बाद बेटी के साथ ही वह सुख-दुख की बातें करते हैं। बीते हुए दिनों को याद करके भावविभोर हो उठते हैं। गाँव की संकीर्ण राजनीति और सत्ता लोलुपता से रायसाहब परेशान हो जाते हैं। वह महसूस करते हैं कि गाँव से उनका जड़ कट चुका है। इसलिए उसे फिर से जुड़ना संभव नहीं है। अंत में रायसाहब फिर शहर में वापस चले जाते हैं।

  रायसाहब के चरित्र में अभिजात्य और सांस्कृतिक बोध स्पष्ट है। आप

शिक्षित एवं कर्म निपुण व्यक्ति है। गाँव में पैदा होकर उच्चशिक्षा के लिए बाहर चले जाते है और जीवन के विविध अनुभव हासिल करते हैं। पर अंत में रायसाहब ग्रामीण वातावरण के साथ संघर्ष के साथ जीना पसंद न कर अपनी पलायनवादी मानसिकता को ही अपने आप उन्मोचित करते हैं।

- *हेमलता :* रायसाहाब की एकलौती प्यारी बेटी है हेमलता। वह पिता के साथ गाँव आकर वहाँ के मनोरम दृश्य देखकर अभिभूत हो जाती है। कलाकार होने के नाते वह हर चीजों में सुन्दरता खोजती है। ग्रामीन जीवन के यथार्थ स्वरूप को समझने की कोशिश करती है। उच्च शिक्षित होने पर भी वह शहर से गाव आकर बसना चाहती है। इतना ही नही गाव में सुधार लाने के लिए प्रेमी वीरेन को साथ भी देती है। उसके अन्दर सरलता, भावुकता और संवेदनशीलता कूट कूट कर भरी हुई है– '''कलकत्ते' में चैत की चाँदनी और ईद के चांद में कोई अन्तर नहीं होता। लेकिन यहाँ झोपड़ियों बास के झुरमुटो में खेत खलिहान पर, बेहिसाव, बे जुवान, वेझिझक चाँदनी की दौलत बिखरी पड़ रही है। ओह, पापा।''
- *वीरेन :* हेमलता के प्रेमी वीरेन एक उच्चशिक्षित तथा प्रगतिवादी विचार के युवक है। वह भी रायसाहाब के साथ गाव आकर ग्रामीण जनता के बीच प्रगति लाने के लिए ग्रामोद्धार समिति बनाने की योजना बनाता है। उसके एक एक बात में बौद्धिकता भरी हुई है। पर नींव को मजबूत किये बिना जिस प्रकार आलिशान महल बनाना एक अति काल्पनिक विचार है, उसी प्रकार गाव की हकीकत को जाने बिना वहाँ विकास का स्वप्न देखना भी अवास्तविक है। वीरेन की बातों में नूतन वैचारिकता तो है। यथा – 'मैं समिति के पुस्तकालय में मार्क्स, लेनिन से लेकर स्पेंग्लर, रसेल इत्यादि सभी ग्रन्थों का अध्ययन कराउंगा। एक नयी रोशनी एक नया मानसिक मन्थन, इंटलैक्चुअल फरमेंट।'

  यही कारण है कि वीरेन का स्वप्न स्वप्नभंग में बदल जाता है। ग्रामोद्धार समिति की सभा में दो गुटों की लड़ाई में वीरेन बुरी तरह घायल हो जाता है। कम समय के अन्दर उसके शरीर की चोट तो ठीक हो जाती है पर इस घटना से उसका मन टूट जाता है। गाँव छोड़कर वीरेन शहर चले जाने के लिए तैयार हो जाता है। जाते समय वह कालेज के मित्र लोचन से कहता है – 'मैं भूल गया था कि देहात की मध्ययुगीन ऊसर भूमि अभी क्रान्ति के लिए तैयार नहीं है।'

  वीरेन के चरित्र में स्पष्टवादिता, वाकनिपुणता, वैचारिकता, क्रान्तिकारिता और मानवता आदि गुण परिलक्षित होते हैं।
- *लोचन सिंह परमार :* प्रस्तुत एकांकी में लोचन एक महत्वपूर्ण पात्र हैं। वह उच्चशिक्षित होने पर भी ग्रामीण परिवेश के साथ छुल मिल जाता है। वह मेहनत

और ईमानदारी से गाव में विश्वास का माहौल तैयार करना चाहता है। उसका मानना है कि ग्रामीण समाज को बाहर से नहीं बल्कि भीतर से विकसित करना चाहिए। लोचन के चरित्र में आत्मविश्वास, आत्मसन्मानबोध और दृढ़ता दृष्टिगोचर होता है। वह अपनी जान को खतरे में डालकर वीरेन को बचाता है –'इनकी जान उन गरीब मुसहरों ने बचायी है जिनसे जमीन छीनकर वीरेन बाबू ग्रामोद्धार समिति का भवन बनबा रहे हैं। जब समिति के क्रान्तिकारी नौजवान आपस में लाठी चला रहे थे तब यही गरीब वीरेन बाबू को बचाने के लिए मेरे साथ बढ़े। क्रान्ति का दीपक बच गया।'

लोचन हरेक बातों को कलात्मक और रहस्यपूर्ण ढंग से प्रस्तुत करता है। खासकर रायसाहब और हेमलता के साथ हुए बातचीत में लोचन सिर्फ संकेतो के द्वारा अपने विचार को सामने रखता है। जब रायसाहब परिबार सहित शहर वापस जाने के लिए तैयार हो जाते हैं तब भी उनको रोकने के लिए प्रयास करता है। लोचन इस एकांकी के सबसे सकारात्मक विचार का पात्र है। इसलिए रायसाहब के परिवार गाँव से चले जाने के बाद लोचन चेतुराम के साथ मिलकर तलहटीवाली जमीन पर खुदाई शुरू करता है। कन्धे पर कुदाल और बगल में चेतराम को लेकर वह प्रतिज्ञा करता है– 'हम रोज सांझ को अपने पसीने के दर्पन में कभी न मिटनेवाली झाँकी देखेंगे।'

13.4.2 संवाद

संवाद योजना की दृष्टि से 'बन्दी' सफल एकांकी साबित हुए है। प्रस्तुत एकांकी का संलाप पात्रानुकुल, विचार प्रधान तथा प्रभावशाली है। कथावस्तु के विकास तथा वातावरण के वर्णन में संलाप महत्वपुर्ण भूमिका निभाती है। बन्दी एकांकी में संवाद योजना के द्वारा एकांकीकार ने ग्रामीण और शहरी जीवन की टकराहट तथा परिवर्तित मानवीय मूल्य को अत्यन्त सजीव रूप में प्रस्तुत किया है। आवश्यकतानुसार संलाप कहीं संक्षिप्त और कहीं लम्बा है। यथा –

लोचन: एक दिन मैंने तुमलोगों को छोड़ा था और आज तुम जा रहे हो।

वीरेन: परमार मैं जा रहा हूँ चूकि मैं अपने आदर्श को खंडित होने नही देख सकता।

लोचन: आदर्श ? कोन सा आदर्श है जिसे गाँव खंडित कर देगा ?

वीरेन: क्रान्ति का आदर्श परमार, मै भूल गया था कि देहात की मध्ययुगीन ऊसर भूमि अभी क्रान्ति के लिए तैयार नहीं है। उसके लिए जरूरत है शहर और कारखानों की सजग और चेतनशील भूमि की।



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 6 : 'मैं अपने आदर्श को खंडित होते नहीं देख सकता' – किसका कथन है ?

.....

प्रश्न 5 : गाँव की प्रगति के लिए कौन सी समिति बनाने की योजना बनायी जाती है ?

.....

13.4.3 वातावरण

इस एकांकी में मूलत: ग्रामीण ओर शहरी वातावरण का स्पष्ट चित्रण देखने को मिलता है। पूरी एकांकी की पृष्ठभूमि उत्तर भारत का एक गाँव है। पर कथानक के आगे बढ़ने के साथ साथ शहरी एवं ग्रामीण दोनों परिवेशों की छवि निखर उठती है। वस्तुत: स्वतंत्रता के बाद देश के ग्रामजीवन में आये परिवर्तन तथा नयी दृष्टिभंगी को यहाँ अभिव्यक्ति मिली है। अब गाँव में पूर्ववत सरलता, सहृदयता तथा सादगी का अभाव है। क्योंकि अर्धशिक्षित और सत्ता लालची एक वर्ग अब भी गाव में बसे हैं जो हरेक मुद्दे को राजनीतिक रंग देना चाहते हैं। स्वातंत्रोत्तर भारत के समाजिक जीवन में आये इस नये रूप को एकांकीकार ने बड़ी कुशलता से अभिव्यंजित किया है। देश के साम्प्रतिक वातावरण को एकांकीकार ने अपनी अर्न्तदृष्टि से सामने लाया है।

13.4.4 भाषा शैली

बन्दी एकांकी की भाषा सहज, भाव प्रधान एवं सुव्यवस्थित है। पात्रों की मानसिक स्थिति को उजागर करने में भाषा शैली सम्पूर्ण सक्षम है। तत्सम और उर्दू तथा अंग्रेजी शब्दों का व्यापक प्रयोग यहाँ दृष्टिगोचर होता है। तत्सम तथा तदभव शब्दों में से पृष्ठभूमि, सन्ध्या, स्निग्ध, सुखानुभूति, किसान, रंगबिरंग, भंगिमा, बाला, मनमोहक, स्वर, धरातल आदि उल्लेखनीय हैं। अंग्रेजी तथा उर्दू शब्दों में – कल्चर, कालेज, क्लब, पालिटिक्स, प्रेजीडेण्ट, सेक्रेटरी, मेम्बर, ट्रांसपोर्टेशन, लाइफ, इन्तजार, तूफान, दिलचस्प, मस्ती, दुनिया, वीराना, इन्तजाम, खबर, दफ्तर, सिफारिश, तसबीर आदि प्रधान हैं। शैली की दृष्टि से देखें तो मूलत: वर्णनात्मक एवं विचारात्मक कथनभंगी परिलक्षित होती है। नारेबाजी और संगीतों का प्रयोग भी इस एकांकी में देखा जाता है।

13.4.5 उद्देश्य

सामाजिक यथार्थ और मानवीय मूल्य के विघटन को नयी दृष्टि से परखना

तथा उसके प्रति सबका ध्यान आकर्षित करना ही एकांकीकार का प्रमुख उद्देश्य है। साथ ही दो पीढ़ियों की दरार को भी यहाँ अंकित किया गया है। लेखक इस एकांकी के माध्यम से यह सन्देश देना चाहता है कि समय के साथ समाज में बदलाव आता है और वह बहुत स्वाभाविक है, पर बदलाव का परिणाम विघटनमुखी न हो कर रचनात्मक होना सबके लिए मंगलजनक है। टकराव से समाज को तोड़ा जा सकता है। देश तथा समाज में सन्तुलन और प्रगति लाने के लिए सामाजिक समन्वय और पारस्परिक सूझ-बूझ बहुत जरूरी है।

13.4.6 रंगमंच निर्देश

प्रस्तुत एकांकी में रंगनिर्देश अत्यन्त स्पष्ट एवं सफल है। कथा वस्तु के महत्व को प्रकट करने तथा सामग्रिक वातावरण को उजागर करने में रंगनिर्देश विशिष्ठ भूमिका निभाता है। एकांकीकार ने अलग अलग पृष्ठभूमि को रंगनिर्देश के जरिए सबके समक्ष उपस्थित किया है: यथा:

- वही स्थान। एक हफ्ते बाद 'समय सन्ध्या'। नौकर लोग मकान के बगीचे में होकर बाहर की और सामान लाने नजर पड़ते है। कभी कभी आया की दबंग आवाज सुन पड़ती है। कभी चेतु की, कभी और लोगों की।
- 'कन्धे पर कुदाल और बगल में चेतराम को लेकर प्रस्थान करता है। नेपथ्य में वाद्य संगीत जो ओजस्विनी लय में परिवर्तित हो जाती है।



13.5 प्रस्तुत अध्याय से हमने सीखा

इस अध्याय के अध्ययन से आपने सीखा –

- एकांकीकार जगदीश चन्द्र माथुर के व्यक्तित्व एवं कृतित्व।
- बन्दी एकांकी के कथानक तथा वहाँ निहित सत्य से परिचित होगे
- एकांकीकार के उद्देश्य के बारे में।
- भारतीय जीवन के परिवर्तित दृश्य पटल को ।



13.6 विस्तृत जानकारी हेतु पढ़े

1) मिश्र और पांडे ; *हिंदी साहित्य का इतिहास*
2) सिंह डॉ० शुकदेव(सम्पा:) ; *छोटे नाटक*
3) कुमार सिद्धनाथ ; *हिंदी एकांकी*

13.7 स्वनिरीक्षण का पुनर्निरीक्षण

प्रश्नोत्तर 1 : सन 1936
प्रश्नोत्तर 2 : पाश्चात्य नाट्यशैली से
प्रश्नोत्तर 3 : हेमलता
प्रश्नोत्तर 4 : लोचन सिंह परमार
प्रश्नोत्तर 5 : शहरी और ग्रामीण
प्रश्नोत्तर 6 : वीरेन
प्रश्नोत्तर 5 : ग्रामोद्धार समिति



13.8 सम्भावित प्रश्न

प्रश्न 1. प्रस्तुत एकांकी का नाम 'बन्दी' रखना कहाँ तक संगत है ?
प्रश्न 2. ''कैसी भयानक है यह खाई जिसने हमारे तन, हमारे व्यक्तित्व को दो टुक कर दिया है'' -- विश्लेषण कीजीए।
प्रश्न 3. वीरेन का चरित्रांकन कीजिए।
प्रश्न 4. रायसाहब और हेमलता के स्वप्न कैसे मोहभंग में बदल जाता है ?

*** ***** ***

इकाई 14 : हिन्दी रचना

इकाई की रूपरेख

14.1 उद्देश्य

14.2 प्रस्तावना

14.3 हिन्दी रचना

14.3.1 निबन्ध

14.3.2 कहानी

14.3.3 नाटक

14.3.4 एकांकी

14.4 प्रस्तुत अध्याय से हमने सीखा

14.5 विस्तृत जानकारी हेतु पढ़ें

14.6 सम्भावित प्रश्न

14.1 उद्देश्य

प्रस्तुत अध्याय से आप सीखेंगे –

- हिन्दी रचना क्या है
- हिन्दी रचना के विविध भेदोपभेद क्या हैं
- हिन्दी रचना किस प्रकार लिखी जाय।

14.2 प्रस्तावना

प्रस्तुत अध्याय का लेखन विशेष रूप से आप विद्यार्थियों के लिये किया गया है। इस अध्याय को बार-बार पढ़ें तथा इसका निरन्तर अनुशीलन करें। इसका जितना ही अनुशीलन करेंगे उतना ही आप न केवल हिन्दी रचना में बल्कि हिन्दी सम्बन्धी विभिन्न भूलों से बचेंगे साथ ही हिन्दी में पारंगत हो सकेंगे। आप इसका निरन्तर अभ्यास करें। आपसे यह भी अनुरोध है कि इससे सम्बन्धित सभी नियमों का पालन पूरे मनोयोग से करें।

आपको यहाँ यह भी बताते चलें कि हिन्दी रचना के भेदोपभेद अधिक है किन्तु यहाँ कुछ महत्वपूर्ण हिन्दी रचनाओं को आपके लिए परोसा गया है। आपसे अनुरोध है कि रचनाओं के विभिन्न विधाओं को भी पढ़े एवं उसे आत्मसात् करें।

14.3 हिन्दी रचना

हिन्दी रचना का इतिहास बहुत पुराना है। आप जिस समाज, परिवेश, परिस्थिति में रहते हैं, उसका निर्माण कई कारणों के मेल से हुआ है। आप जानते हैं साहित्य समाज का दर्पण होता है, तो आप यहाँ यह भी मानें कि समाज भी साहित्य का दर्पण है। कहने का तात्पर्य यह कि जो समाज जितना उन्नत होगा, उसका साहित्य भी उतना ही उन्नत होगा या जिस समाज का साहित्य उन्नत होगा, वह समाज भी उन्नत होगा। यह सर्वविदित है कि यदि आप किसी समाज को जानना चाहते हैं तो उस समाज के साहित्य को पढ़ें और आप अनुमान लगा लेंगे कि वह समाज कैसा है। अर्थात् साहित्य और समाज एक दूसरे के पूरक हैं।

साहित्य भी एक रचना है। किन्तु साहित्य के इतर भी रचनायें होती हैं। यथा पत्र-पत्रिकाओं की रचनाएँ, पत्रकारिता, अन्य प्रकार के लेखन आदि। रचना लिखते समय विषयानुरूप शब्दों के चयन के साथ ही साथ इसकी दीर्घता एवं लघुता पर भी ध्यान दिया जाना आवश्यक है। अत: आपको यहाँ विविध रचनाओं, उनके नियम आदि की चर्चा यहाँ की जायेगी। आप इनका पालन करें, आपमें दक्षता निश्चित रूप से आयेगी।

14.3.1 निबन्ध

अंग्रेजी शब्द 'एसे' का हिन्दी में 'निबन्ध' शब्द पर्यायवाची है। 'एसे' फ्रांसीसी भाषा का शब्द है। विदेशी विद्वानों के मतानुसार सब प्रकार के बन्धनों से मुक्त, स्वच्छन्द रचना को निबन्ध कहते हैं। लेकिन निबन्ध शब्द का शाब्दिक अर्थ होता है- ठीक तरह से बँधा हुआ। जो रचना ठीक रूप से व्यवस्थित हो उसे निबन्ध कहा जाता है। निबन्ध की कोई सीमा निश्चित नहीं की जा सकती है। निबन्ध छोटे-से-छोटा हो सकता है और कई पृष्ठों का बड़े-से-बड़ा हो सकता है। निबन्ध लिखने में दो चीजों की जरूत होती है- (1) सामग्री, (2) शैली। सामग्री के अन्दर विषय की जानकारी आती है और शैली के अन्दर निबन्ध लिखने का तरीका आता है। सामग्री और शैली दोनों का रहना उत्तम निबन्ध की पहली कसौटी है।

मुख्य रूप से निबन्ध तीन प्रकार के होते हैं -वर्णनात्मक, विवरणात्मक और विचारात्मक।

- *वर्णनात्मक* - इस प्रकार के निबन्धों में वस्तु-विशेष का सजीव वर्णन किया जाता है। रचनाकार पाठक को वर्णन के द्वारा ही वस्तु के दर्शन कराने का प्रयत्न किया जाता है। इस प्रकार के निबन्ध लेखन में सूक्ष्म निरीक्षण शक्ति तथा कुशल अभिव्यक्ति की आवश्यकता होती है।
- *विवरणात्मक* - इन निबन्धों में बीती हुई घटनाओं, युद्ध-कथाओं, जीवनियों,

पौराणिक वृत्तान्तों आदि के दर्शन होते हैं। इन निबन्धों में क्रमबद्धता बनी रहनी चाहिए। वर्णन सरस और आकर्षक हो जिसमें पाठकों की रुचि निबन्ध पढ़ने में आदि से अन्त तक ज्यों-की-त्यों बनी रहे।

- *विचारात्मक*- इन निबन्धों में विचार अथवा बुद्धित्व का आधिक्य रहता है। विचारात्मक निबन्ध लिखने के लिए विषय-सम्बन्धी यथोचित ज्ञान और लिखने की योग्यता अत्यन्त आवश्यक है। गम्भीर अध्ययन और चिन्तन के अभाव में विचारात्मक निबन्ध नहीं लिखे जा सकते। फलस्वरूप भाषा स्वत: कुछ कठिन और गूढ़ हो जाती है।

- *निबन्ध की शैली* - निबन्ध लिखने के लिए दो बातों की आवश्यकता है- भाव और भाषा। दोनों समान रूप से महत्त्वपूर्ण हैं। बिना संयत भाषा के अभिप्रेत भाव व्यक्त नहीं होता। लिखने के लिये जिस तरह परिमार्जित भाव की आवश्यकता है, उसी तरह परिमार्जित भाषा की भी।

  भाव और भाषा को समन्वित करने के ढंग को 'शैली' कहते हैं। वस्तुत:, जहाँ परिमार्जित भाव और परिमार्जित भाषा का मेल होता है, वहीं शैली बनती है।

- *निबन्ध की विशेषताएँ*
  - निबन्ध रचना का प्रथम लक्ष्य है- व्यक्तिव का प्रकाशन। निबन्ध में निबन्धकार अपने सहज स्वाभाविक रूप से पाठक के सामने प्रकट होता है। वह पाठकों से मित्र की तरह खुलकर सहज संलाप करता है।
  - निबन्ध की दूसरी विशेषता है- संक्षिप्तता। निबन्ध जितना छोटा होता है, जितना अधिक गठा होता है, उसमें उतनी ही सघन अनुभूतियाँ होती हैं और अनुभूयिों में गठाव-कसाव के कारण तीव्रता रहती है।
  - श्रेष्ठ और सरल निबन्ध की तीसरी विशेषता है- एकसूत्रता। आचार्य शुक्ल के शब्दों में, ''व्यक्तिगत विशेषता का मतलब यह नहीं कि उसके प्रदर्शन के लए विचारों की शृंखला रखी ही न जाय या जान बूझकर उसे जगह-जगह से तोड़ दिया जाय; भावों की विचित्रता दिखाने के लिए अर्थयोजना की जाय, जो अनुभूति के प्रकृत या लोकसामान्य स्वरूप से कोई सम्बन्ध ही न रखे, अथवा भाषा से सरकसवालों की-सी कसरतें या हठयोगियों के-से आसन कराये जायँ, जिनका लक्ष्य तमाशा दिखाने के सिवा और कुछ न हो।''
  - निबन्ध की अन्तिम विशेषता है- अन्विति का प्रभाव (Effect of Totality)। ''जिस प्रकार एक चित्र की अनेक असम्बद्ध रेखाएँ आपस में मिलकर एक सम्पूर्ण चित्र बना पाती हैं अथवा एक माला के अनेक पुष्प एकसूत्रता में ग्रथित होकर ही माला का सौन्दर्य ग्रहण करते हैं, उसी प्रकार निबन्ध के

प्रत्येक विचार-चिन्तन, प्रत्येक भाव तथा प्रत्येक आवेग आपस में अन्वित होकर सम्पूर्णता के प्रभाव की सृष्टि करते हैं।''

- *निबन्ध, प्रबन्ध और लेख में अन्तर* - कुछ लोग निबन्ध, प्रबन्ध और लेख- इन तीनों में कोई अन्तर नहीं मानते। ''प्रबन्ध में व्यक्तित्व उभरकर नहीं आता। लेखक परोक्ष रूप में रहकर अपनी ज्ञानचातुरी, दृष्टिसूक्ष्मता, प्रकाशन-पद्धति और भाषाशैली उपस्थित करता है। निबन्ध में निजी अनुभूति और विचार का प्राधान्य रहता है और प्रबन्ध में समाजशास्त्र, लोकसंग्रह और पुस्तकीय ज्ञान का।'' प्रबन्धकार अपने बारे में कुछ नहीं कहता, किन्तु निबन्धकार अपनी पसन्दगी-नापन्दगी, आचार-विचार के सम्बन्ध में खुलकर पाठकों से विचार-विमर्श करता है। प्रबन्ध की भाषा और शैली प्रौढ़, गम्भीर और नपी-तुली होती है, किन्तु निबन्ध की लेखनशैली रमणीक और स्वच्छन्द होती है। प्रसादगुण निबन्ध की आत्मा है। प्रबन्ध के विषय गम्भीर और ज्ञानपूर्ण होते हैं, किन्तु निबन्ध का विषय कोई प्रसंग, भावना या कोई क्षुद्र वत्तु या स्थल बनता है; क्योंकि यहाँ विषय की अपेक्षा विषयी (निबन्धकार) अधिक महत्त्वपूर्ण होता है।

  'निबन्ध' और 'प्रबन्ध' की तरह 'निबन्ध' और 'लेख' में भी अन्तर है। 'लेख' को अँगरेजी में 'Article' कहते हैं और पत्र, समाचारपत्र, विश्वकोश इत्यादि में पायी जानेवाली वह रचना, जो विषय का स्पष्ट और स्वतन्त्र निरूपण करती है, 'लेख' कहलाती हैं।



अनुशीलन

प्रस्तुत शीर्षक पर निबन्ध लिखें

स्वतन्त्रता

(1) भूमिका (2) स्वतन्त्रता की परिभाषा (3) स्वतन्त्रता और स्वेच्छाचारिता में अन्तर (4) स्वतन्त्रता एक महान सुख (5) पशु-पक्षियों में स्वतंत्रता की भावना (6) मनुष्य स्वतन्त्र रहना क्यों चाहता है ? (7) स्वतन्त्रता के द्वारा ही मनुष्य समाज, देश की उन्नति सम्भव (8) स्वतन्त्र देश में बौद्धिक, शैक्षणिक आर्थिक तथा सांस्कृतिक विकास की सुविधा (9) स्वतन्त्रता और परतन्त्रता में अन्तर (10) पराधीनता का एक भीषण अभिशाप (11) संसार के कुछ स्वतन्त्रताप्रेमी व्यक्ति (12) स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए प्रत्येक प्रकार से कटिबद्ध रहना आवश्यक (13) उपसंहार।

रेडियो

(1) भूमिका (2) वैज्ञानिक युग का आविर्भाव (3) विज्ञान के विविध आविष्कार (4) रेडियो-विज्ञान की महत्त्वपूर्ण देन (5) प्राचीन युग के आकाशवाणी और रेडियो में समता (6) रेडियो-मनोरंजन का एक प्रमुख साधन (7) रेडियो से अन्य बहुत लाभ

(क) व्यापारिक विज्ञापन (ख) शिक्षा-सम्बन्धी प्रचार (ग) ग्रामीणों के लिए विभिन्न कार्यक्रम (8) सरकार और रेडियो (9) रेडियो के द्वारा सरकारी कार्यक्रमों तथा सिद्धांतों का प्रचार (10) रेडियो विविध प्रार के समाचार जानने का एक आवश्यक साधन (11) रेडियो के द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध में वृद्धि (12) अन्य लाभ (13) रेडियो का दिनानुदिन प्रचार (14) उपसंहार।

14.3.2 कहानी

साहित्य की विभिन्न विधाओं में कहानी-लेखन भी एक साहित्यिक विधा है। यह एक प्रचलित एवं लोकप्रिय विधा है। अपने देश में कहानी-लेखन की एक लंबी परम्परा रही है। कहानी स्वस्थ मनोरंजन का सबसे लोकप्रिय साहित्यिक माध्यम बन गयी है। कहानी (गल्प) एक रचना है, जिसमें जीवन के किसी एक अंग या मनोभाव को प्रदर्शित करना ही कहानीकार का उद्देश्य होता है। अत: हम कह सकते हैं कि कहानी जीवन की प्रतिच्छाया है।

- आवश्यक बातें :
  - कहानी का प्रारंभ आकर्षक ढंग से करना चाहिए।
  - कहानी की भाषा सरल और बोधगम्य होनी चाहिए।
  - कहानी के बीच-बीच में संवादों का पुट होना चाहिए।
  - संवाद चुटीले और स्पष्ट होने चाहिए।
  - कहानी का क्रमिक विकास होना चाहिए।
  - उपयुक्त शीर्षक केन्द्रीय भाव से संबंधित होना चाहिए।
  - कहानी का अंत स्वाभाविक होना चाहिए।
- *प्रारूप के आधार पर कहानी लिखना* - प्रारूप में कहानी के अधूरे संकेत दिए रहते हैं। इन संकेतों के द्वारा कहानी की प्रमुख घटनाओं की ओर इशारा भर किया जाता है। इन घटनाओं के बीच तालमेल बैठाकर एक कहानी बना लेना छात्रों की कल्पना-शक्ति पर निर्भर करता है।

  उदाहरण- एक गरुड़ और एक लोमड़ी में मैत्री-सदा साथ रहना-लोमड़ी का गरुड़ को निमन्त्रण-गरुड़ का लोमड़ी के घर पहुँचाना-गरुड़ का भूखे रहना-लोमड़ी का थाली चाटकर खाना-गरुड़ का निमन्त्रण-लोमड़ी का पहुँचना-लोमड़ी को सुराही में भोजन देना-लोमड़ी का मुँह ताकते रह जाना।

  साधारणत: कहानी के छह तत्त्व माने गये हैं- (क) कथावस्तु, (ख) चरित्र-चित्रण, (ग) संवाद, (घ) देशकाल या वातावरण, (ङ) उद्देश्य (च) शैली।
  - *कथावस्तु*- कथावस्तु के बिना कहानी की कल्पना ही नहीं की जा सकती।

यह उसका अनिवार्य अंग है। कथावस्तु जीवन की भिन्न-भिन्न दिशाओं और क्षेत्रों से ग्रहण की जाती है। इसके विभिन्न स्रोत हैं- पुराण, इतिहास, राजनीति, समाज आदि।

- चरित्र - कहानी किसी व्यक्ति ही होती है। यह व्यक्ति ही कहानी में चरित्र कहलाता है। लेकिन इसकी संख्या कम-से-कम होनी चाहिए। तभी कहानीकार उस एक चरित्र के अन्तर और बाह्य पक्षों का अधिकाधिक मनोविश्लेषण कर सकता है। मूल घटना से उसका गहरा सम्बन्ध होना चाहिए।
- संवाद - पहले संवाद कहानी का अभिन्न अंग माना जाता था, अब उसकी अनिवार्यता समाप्त हो गयी है। ऐसी अनेकानेक कहानियाँ लिखी गयी हैं, या लिखी जाती हैं, जिनमें संवाद का एकदम अभाव रहता है। सारी कहानी वर्णनात्मक या मनोविश्लेषणात्मक शैली में लिख दी जाती है। संवाद की कहीं भी आवश्यकता नहीं पड़ती। लेकिन संवाद से कहानी के पात्र सजीव और स्वाभाविक बन जाते हैं।
- देशकाल- कहानी देशकाल की उपज होती है, इसलिए हर देश की कहानी दूसरे देशों से भिन्न होती है। भारत में या इस देश के किसी भूभाग में लिखी कहानियों का अपना वातावरण होता है, जिसकी संस्कृति, सभ्यता, रूढ़ि, संस्कार का प्रभाव उन पर स्वाभाविक रूप से पड़ता है। वास्तव में, देशकाल कहानी का कोई तत्त्व नहीं है। यह अपने-आप आ उपस्थित होता है। यह तो आधार है, जिस पर सारा कार्यकलाप होता है।
- उद्देश्य - यह कहानी का एक तत्त्व माना जाता है, लेकिन सच तो यह है कि साहित्य की किसी भी विधा की रचना निरुद्देश्य नहीं होती। हम निरुद्देश्य जीवन जीना नहीं चाहते। कहानी की रचना भी निरुद्देश्य नहीं होती। कहानीकार का कोई-न-कोई प्रयोजन हर कहानी की रचना के पीछे रहता है। यह उद्देश्य कहानी के आवरण में छिपा रहता है; प्रकट हो जाने पर उसका कलात्मक सौन्दर्य नष्ट हो जाता है।
- शैली - शैली कहानी के कलेवर को सुसज्जित करनेवाला कलात्मक आवरण होती है। इसका सम्बन्ध कहानीकार के आन्तरिक और बाह्य पक्षों से रहता है। कहानी-लेख अपनी कहानी अनेक प्रकार से कहना चाहता है। वह उसे वर्णनात्मक, संवादात्मक, आत्मकथात्मक, विवरणात्मक, पत्रात्मक किसी भी रूप में लिख सकता है। उसकी शैली ऐसी हो जो पाठकों के मन को अपनी ओर आकृष्ट करे। यह काम भाषा-शक्ति द्वारा होता है। कहानीकार की भाषा में इतनी शक्ति हो, जो साधारण पाठकों को भी अपने मोह-पाश में बाँध ले।

14.3.3 नाटक

आचार्य धनंजय ने नाटक की परिभाषा इस प्रकार बतायी है- अवस्था की अनुकृति नाटक है। यह परिभाषा सार्थक, व्यावहारिक और उपयोगी है। नाटक में अनुकरण तत्त्व की प्रधानता है। साहित्य की सभी विधाओं में नाटक ही वह विधा है, जिसमें अनुकरण पर सर्वाधिक बल दिया या है। यह अनुकरण किसका होता है? उत्तर है- कार्य अर्थात् मानवीय जीवन के क्रियाशील कार्यों का। मनुष्य अनेक परिस्थितियों से हर क्षण गुजरता है। उसकी विभिन्न अवस्थाएँ होती हैं। भिन्न-भिन्न अवस्थाओं में रहने के कारण उसके जीवन-रंगमंच पर अनेक दृश्य (स्थितियाँ) आते-जाते रहते हैं। नाटककार नाटक की रचना करते समय इन्हीं स्थितियों का अनुकरण करता है।

- *स्वरूप*- नाटक में जीवन का यथार्थमूलक अनुकरण होते हुए भी नाटककार सर्जनात्मक कल्पना करता है। यही कल्पना नाटक को साहित्य की विधा प्रदान करती है। इसलिए नाटक एक ऐसी कला है, जिसमें अनुकरण और कल्पना दोनों का योग रहता है। इसका उद्देश्य पहले शिक्षण और मनोरंजन था। अब इसका लक्ष्य जीवन की विविध समस्याओं का उद्‌घाटन करना और मानवीय संवेदनाओं को प्रकाश में लाना है। यही कारण है कि प्राचीन काल के नाटकों से आज के नाटक बिलकुल भिन्न हो गये हैं।
- *नाटक के तत्त्व*- भारतीय दृष्टि से नाटक के तीन तत्त्व माने गये हैं- वस्तु, नेता और रस। वस्तु नाटक की कथा को कहते हैं, जिसके दो प्रकार होते हैं- आधिकारिक कथा और प्रासंगिक कथा। आधिकारिक कथा वह है, जो नाटक में आरम्भ से अन्त तक पाई जाती है और प्रासंगिक कथाएँ लघु होती हैं, जो नाटकीय कथावस्तु की धारा में कुछ दूर चलकर समाप्त हो जाती हैं। प्राचीन काल के नाटकों की कथा दुहरी होती थी- आधिकारिक और प्रासंगिक। दोनों प्रकार की कथावस्तुओं का उपयोग होता था। आज के नाटकों की कथावस्तु इकहरी होती है, अर्थात केवल आधिकारिक कथा का प्रयोग हाता है। आज नाटक आदर्शवादी से अधिक यथार्थवादी हो गये हैं, ऐतिहासिक-पौराणिक से अधिक सामाजिक-राजनीतिक हो गये हैं।

नेता चरित्र को कहते हैं। यह नाटक की कथावस्तु का नेतृत्व करता है, इसे नायक कहते हैं। लेकिन 'नेता' में नाटक के सभी प्रकार के चरित्रों का समावेश होताहै- नायक, नायिका, विदूषक, प्रतिनायक, लघु चरित्र इत्यादि। नाटकशास्त्र के अनुसार नायक को सर्वगुण सम्पन्न होना चाहिए। नायिका को भी उसी के अनुरूप होना चाहिए। प्राचीन नाटकों के अन्त में नायक-नायिका की विजय और प्रतिनायक

की पराजय दिखायी जाती थी। इस प्रकार के नाटक को सुखान्त नाटक कहते हैं। किन्तु, आज दु:खान्त नाटक भी लिखे जा रहे हैं, जिनमें नायक-नायिका का दु:खद अन्त या उनकी मृत्यु भी हो जाती है।

- *रस* - यह काव्य और नाटक दोनों की आत्मा है। प्राचीन दृष्टि से नाटक में श्रृंगार, करुण और वीर- तीन रसों में से कोई एक प्रदान हो, ऐसी व्यवस्था है। नाटक के अन्त में सत्य की जीत होती थी, इसलिए दर्शकों को आनंद की प्राप्ति होती थी। वास्तव में, रस नाटक के अन्त में सारभूत प्रभाव होता था।
- *रंगमंच*- नाटक का रंगमंच से सीधा सम्बन्ध माना जाता है। इसीलिए, नाटक को दृश्यकाव्य कहते हैं। नाटक की रचना तभी सफल होती है, जब वह रंगमंच पर सफलतापूर्वक अभिनीत किया जाता है। साहित्य की अन्य विधाओं में रंगमंच या अभिनय की अनिवार्यता आवश्यक नहीं मानी जाती। सभी प्रकार के अभिनयों में सात्त्विक अभिनय को सर्वश्रेष्ठ माना गया है।
- *भाषा*- नाटक की भाषा सामान्यत: सरल, सुबोध और व्यावहारिक होनी चाहिए। इसकी भाषा कविता की भाषा नहीं होनी चाहिए। यह पात्रानुकूल हो और देश-काल के अनुरूप हो।

14.3.4 एकांकी

एकांकी एक ऐसी पूर्ण नाटकीय रचना है, जिसमें मानव-जीवन के किसी एक पक्ष, एक चरित्र, एक समस्या और एक भाव की अभिव्यक्ति होती है। एकांकी का साधारण अर्थ है एक अंकवाला नाटक। नाटक से एकांकी की कला और शैली भिन्न है। दोनों में अनुकरण तत्त्व की प्रमुखता है, दोनों में वस्तु, चरित्र, संवाद आदि रहते हैं, किन्तु इनके प्रस्तुतीकरण में अन्तर होता है।

- *प्रकार*- एकांकी दो प्रकार के होते हैं। एक प्रकार के एकांकी ऐसे होते हैं, जिनमें एक ही दृश्य रहता है और एक ही दृश्य-पट पर सारा एकांकी अभिनीत होता है। दूसरे प्रकार के एकांकी वे हैं, जिनमें अनेक दृश्यों की योजना रहती है। किन्तु, आज पहले प्रकार के एकांकी ही अधिक प्रचलित है।
- *कथावस्तु*- एकांकी में कथावस्तु की लघुता रहती है, विस्तार नहीं। यहाँ केवल आधिकारिक कथा होती है और वह भी अत्यन्त संक्षिप्त। यह कथा किसी घटना के मार्मिक स्थल से आरम्भ होकर जिज्ञासा और कौतूहल को जगाती हुई विस्मयपूर्ण स्थिति में समाप्त हो जाती है। एकांकी की कथा साधारणत: जिज्ञासा जगाती हैं। नाटक की कथा में ऐसी बात नहीं होती। इसकी सारी कथा किसी एक स्थान की होती है। आरम्भ से अन्त तक स्थान की एकता बनी रहती है। इसका अन्त

आकस्मिक होता है।

- *चरित्र*– नाटक की तरह एकांकी में चरित्र अधिक नहीं होते। यहाँ पाँच–छह से अधिक चरित्र नहीं होते। चरित्रों में भी केवल नायक की प्रधानता रहती है, अन्य चरित्र उसके व्यक्तित्व को अग्रसर करते हैं। नायक स्वयं अपने उत्थान–पतन के लिए उत्तरदायी है। एकांकी में विदूषकों कल्पना नहीं की जाती, क्योंकि एकांकी की कथावस्तु में इसके लिए स्थान ही नहीं होता। हास्य, व्यंग्य और विनोद का काम उसके चरित्रों के संवादों से ही चल जाता है। एकांकी के चरित्र को सजीव, व्यक्तिवादी और प्रभावशाली होना चाहिए। यहाँ चरित्र एक ऐसा बिन्दु है, जो अपनी चारों ओर वृत्त या घेरा बनाता जाता है। घटनाओं के उत्थान–पतन की कोई आवश्यकता नहीं पड़ती। चरित्र का निर्माण उसके संस्कार, मनोविज्ञान और वातावरण के अनुसार होता है। वह तो एक साधारण व्यक्ति है, जो साधारण की लोगों की तरह सुख–दु:ख के बीच जीवन बिताता है। अधिकतर एकांकियों में चरित्र की मानसिक स्थिति द्वन्द्वात्मक होती है। ऐसे चरित्र बड़े स्वाभाविक और जीवन्त होते हैं।
- *संवाद* – यह एकांकी का प्राण है। इसके सहारे एकांकी की कथावस्तु और चरित्र का निर्माण होता है। कुशल एकांकी–लेखक यदि संवाद लिखने में प्रवीण न हुआ, तो एकांकी का कोई प्रभाव पाठकों या दर्शकों पर नहीं पड़ेगा। इसके संवाद स्वाभाविक, सक्षिप्त, वाग्वैदग्ध्यपूर्ण, रोचक और प्रभावोत्पादक होने चाहिए।
- *भाषा* – एकांकी की भाषा कविता की भाषा नहीं होती। भाषा पात्रों की मनोवृत्ति और कथा की प्रकृति के अनुसार होनी चाहिए। लेकिन, साधारणत: इसे सरल, सुबोध और प्रवाहपूर्ण होना चाहिए। वाक्यों की रचना में कृत्रिमता या अलंकृति नहीं चाहिए।
- *अभिनेयता* – चूँकि एकांकी की कला नाटक की तरह अनुकरणत्मक है, इसलिए एकांकी को अभिनेय होना चाहिए।
- *एकांकी के तत्त्व* – प्रधानत: एकांकी के तीन तत्त्व हैं, जिनकी सहायता से इनकी रचना होती है। वे हैं– कथा, चरित्र और संवाद। इनका विवेचन ऊपर किया जा चुका है।



अनुशीलन

विद्यार्थियों से अनुरोध है कि आप हिन्दी के अलग–अलग कहानी एकांकी, नाटक आदि पढ़ें उसके आधार पर एक अलग कहानी, नाटक एवं एकांकी लिखने का प्रयास करें।



14.4 प्रस्तुत अध्याय से हमने सीखा

- प्रस्तुत अध्याय में हमने हिन्दी रचना के विविध पक्षों को देखा। मानव समाज का जिस क्रम से बौद्धिक विकास हुआ, उसी क्रम से उसका साहित्यिक गतिविधियों से ओत-प्रोत भावनाओं का भी विकास हुआ। हिन्दी रचना का भेदाभेद या विविध पक्ष इसी के परिणाम हैं। रचना जीवन की अभिव्यक्ति है।
- प्रस्तुत अध्याय में हिन्दी रचना लिखने का ज्ञान अर्जन किया। निबंध, कहानी आदि को समझने-बुझने का अवसर मिला। इस आधार पर या इसके निरन्तर अनुशीलन से हिन्दी रचना लिखने एवं मौखिक रचना करने के क्षेत्र में पारंगत हो सकेंगे।



14.5 विस्तृत जानकारी हेतु पढ़े

1) जोगलेकर, काशीनाथ गोबिन्द ; *समाचार और सवाददाता* ; चौक वराणसी : विश्वविद्यालय प्रकाशन विशालाशी भवन।
2) प्रसाद, वासुदेव नन्दन ; *आधुनिक हिन्दी व्याकरण और रचना* ; पटना :भारती भवन।

14.6 सम्भावित प्रश्न

प्रश्न 1. नीचे लिखे गद्यांश को ध्यान से पढ़िए और उसके नीचे लिखे प्रश्नों के उत्तर हिन्दी में लिखिए। उत्तर यथासंभव आपके अपने शब्दों में होने चाहिए :

बड़े होने पर नानकदेव जी ने हिन्दू और इस्लाम दोनों धर्मों की अच्छी - अच्छी बातें चुन लीं। उन्होंने सबको सीधी-सरल भाषा में उपदेश देना शुरू किया। उन्होंने विश्वासपूर्वक बाताय कि ईश्वर एक है और पृथक्-पृथक् धर्म मात्र उसे पाने के मार्ग हैं।

उपदेश देने के लिए गाँव-गाँव जाते थे और किसी भक्त के यहाँ ठहरते थे। एक बार वे एमनाबाद पहुँचे और अपने भक्त लालू बढ़ई के यहाँ ठहरे। वह बड़े प्रेम

से भोजन बनाता और नानकदेव जी को खिलाता। नानक जी दिनभर तो गाँव में उपदेश देते फिरते और रात होने पर लालू के घर आ जाते।

एक दिन एमनाबाद के एक धनी व्यक्ति ने लोगों को भोजन का निमंत्रण दिया। नानकदेव जी के पास भी निमंत्रण पहुँचा, लेकिन वे भोजन करने नहीं गए। इस पर उस धनी व्यक्ति को बहुत दु:ख हुआ। उसने बड़े आग्रह से नानकदेव जी को अपने घर पर बुलाया और पूछा, 'आप बढ़ई के यहाँ साधारण भोजन कर लेते हैं, परन्तु मेरे यहाँ बढ़िया भोजन भी नहीं करते। इसका क्या कारण हो सकता है?'

उसी समय लालू उनके लिए भोजन लेकर वहाँ पहुँचा। नानकदेव जी ने अमीर के घर से एक रोटी मँगवायी। एक हाथ में लालू द्वारा लायी गयी रोटी और दूसरे हाथ में अमीर के घर से मँगवायी गयी रोटी दबायी। देखने वालों के आश्चर्य का ठिकाना ना रहा क्योंकि लालू की रोटी से दूध की बूँदें और अमीर की रोटी से रक्त की बूँदे टपक पड़ी। नानकदेव जी ने बताया कि धनी की रोटी गरीबों का रक्त चूस-चूस कर बनायी हुई है तथा लालू की रोटी सच्चे परिश्रम की कमाई है।

नानकदेव जी ने सबकों समझाते हुए कहा, 'भाइयो, परिश्रम करके सच्ची कमाई करो। द्वेष, निन्दा आदि छोड़कर शुद्ध हृदय से दीन-दुखियों की सेवा करो। यही भगवान की सच्ची सेवा है।'

(क) नानकदेवजी ने क्या चुना और उन्होंने लोगों को क्या उपदेश दिया?

(ख) लालू कौन था? उसके घर कौन ठहरा हुआ था और क्यों?

(ग) दु:ख किसको हुआ और क्यों हुआ?

(घ) धनी व्यक्ति ने नानकदेव जी को क्या पूछा और कब पूछा?

(ङ) आश्चर्य किनको हुआ, कब हुआ और क्यों हुआ?

(च) भगवान की 'सच्ची सेवा' किसको कहा गया है?

प्रश्न 2. निम्नलिखित विषयों पर निबन्ध लिखिए।

(क) बाढ़ (ख) तुलसीदास (ग) सिनेमा।

*** ***** ***

इकाई 15 : हिन्दी व्याकरण

इकाई की रूपरेखा

15.1 उद्देश्य
15.2 प्रस्तावना
15.3 कारक और विभक्ति
15.4 लिंग
15.5 वाक्य विचार
15.6 लोकोक्ति और मुहावरा
15.7 प्रस्तुत अध्याय से हमने सीखा
15.8 विस्तृत जानकारी हेतु पढ़ें
15.9 स्वनिरीक्षण का पुनर्निरीक्षण
15.10 सम्भावित प्रश्न

15.1 उद्देश्य

प्रस्तुत अध्याय में आप सीखेंगे --

- हिन्दी के कारक और विभक्ति के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे
- हिन्दी भाषा की लिंग व्यवस्था के विषय में सीख सकेंगे
- वाक्य की परिभाषा तथा वाक्य भेद जानेंगे
- हिन्दी के लोकोक्ति और मुहावरा की भी जानकारी हासिल करेंगे।

15.2 प्रस्तावना

भाषा को सुव्यवस्थित करने और सही रास्ता दिखाने में व्याकरण महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। हमारे देश में हिन्दी का अध्ययन न केवल प्रथम भाषा के रूप में किया जाता है बल्कि द्वितीय भाषा के रूप में भी वह व्यापक रूप से प्रचलित है। अत: हिन्दी की सही भाषिक व्यवस्था को जानने के लिए व्यकरण मानदंड निर्धारक के रूप में काम करता है। प्रस्तुत अध्याय में कारक और विभक्ति, लिंग, वाक्य के भेद, लोकोक्ति, मुहावरे आदि विषयों पर विचार किया गया है।

15.3 कारक और विभक्ति

कारक संज्ञा या सर्वनाम की वह स्थिति है जो वाक्य में क्रिया के साथ उसका संबंध

बतलाती है। साधारण तौर पर कारक शब्द का अर्थ है करनेवाला। हिन्दी में कारक आठ प्रकार के हैं। प्रत्येक कारक के लिए ही कुछ निर्दिष्ट कारक चिह्न होते हैं। उन्हें विभक्ति चिह्न या परसर्ग कहते हैं।

हिन्दी के कारक और विभक्ति इस प्रकार हैं --

कारक	**विभक्ति चिह्न**
कर्ता	ने
कर्म	को
करण	से
सम्प्रदान	को, के लिए, वास्ते
अपादान	से
संबंध	का, के, की, रा, रे, री,
अधिकरण	में, पर, पै
सम्बोधन	हे, ओ, अजी, अरे, आदि।

- **कर्ता कारक :** वाक्य में जो कारक क्रिया का कार्य करता है ,उसे कर्ता कारक कहा जाता है। कर्ता कारक का चिह्न 'ने' है। हिन्दी में सकर्मक क्रिया के भूतकालिक कृदंत से बननेवाली रचनाओं में कर्ता के साथ 'ने' परसर्ग आता है। ध्यान देने की बात है कि वर्तमान काल या भविष्यत काल के कर्ता के साथ 'ने' विभक्ति का प्रयोग नहीं होता। 'ने' विभक्ति के कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं:
  (क) मैंने खा लिया है।
  (ख) उसने घड़ी खरीदी है।
  (ग) आपने मुझे बताया ?
- **कर्म कारक :** वाक्य में जिस वस्तु या व्यक्ति पर क्रिया के प्रयोग का परिणाम निर्भर करता है, उसे कर्म कारक कहते हैं। सामान्यत: 'को' कर्म कारक के साथ आनेवाला विभक्ति चिह्न है। जहाँ कर्म के साथ 'को' का व्यवहार होता है वहॉ कर्म के लिंग-वचन का क्रिया पर प्रभाव नहीं पड़ता। उसी प्रकार अगर कर्ता के साथ 'को' का प्रयोग किया जाता है वहाँ कर्ता के लिंग और वचन का प्रभाव क्रिया पर नहीं पड़ता। जैसे -
  (क) राम जानकी को पढ़ाता है।
  (ख) मोहन को अंग्रेजी आती है।
- **करण कारक :** कार्य सम्पन्न करने में सहायता करनेवाला कारक ही करण कारक है। इस कारक का चिह्न 'से' है। अलग अलग रुपों में करण का प्रयोग हो सकता है। साधनवाचक शब्द, प्रेरित कर्ता, रीतिवाचक क्रिया विशेषण, कर्म, तुलना, समयवाचक क्रिया विशेषण आदि के साथ 'से' विभक्ति का प्रयोग होता है। यथा:

(क) आप कलम से लिखते है।

(ख) हम सबसे बेहतर हैं।

(ग) मैं नौ बजे से तुम्हारा इंतजार कर रहा हूँ।

- **सम्प्रदान कारक :** जिसको कुछ सम्प्रदान किया जाता है या कुछ दिया जाता है, उसे सम्प्रदान कारक कहते है। इसका संकेत को, के , लिए, के वास्ते हैं। उदाहरण के तौर पर

(क) रामू को कुछ पैसे दे दो।

(ख) आपके लिए यह उपहार दिया गया है।

- **अपादान कारक :** वाक्य में संज्ञा या सर्वनाम के उस रूप को अपादान कारक कहा जाता है जिससे किसी चीज के अलग होने का भाव स्पष्ट होता है। इसका चिह्न 'से' है। पर करण कारक के लिए प्रयुक्त 'से' और अपादान के 'से' में स्पष्ट अंतर है। अपादान के कुछ उदाहरणों से बात साफ होगी –

(क) आग से धुआँ निकलता है।

(ख) वह अपने परिवार से अलग हो गया।

- **संबंध कारक :** जब संज्ञा या सर्वनाम के साथ किसी दूसरा शब्द या पद जुड़ जाता है, तब वह संबंध कारक कहलाता हैं। इस कारक की विभक्ति संकेत है -- का, के, की तथा रा, रे, री। यथा :

(क) यह आपका घर है।

(ख) तुम्हारी अदा बहुत खूबसूरत है।

- **अधिकरण कारक :** हिन्दी वाक्य में जब संज्ञा या सर्वनाम के किसी क्रिया के आधार का बोध होता हैं, उसे अधिकरण कारक कहते है। इसके संकेत चिह्न हैं – में, पर, पै। उदाहरण स्वरुप :

(क) मैदान में बच्चे खेल रहे हैं।

(ख) मेज पर किताब है।

(ग) वह गुवाहाटी में रहता है।

- **सम्बोधन कारक :** किसी को पुकारने या बुलाने में सम्बोधन कारक का प्रयोग होता है। हम बोलचाल में ऐसा प्रयोग अक्सर करते हैं। सम्बोधन कारक के विभक्ति चिह्न हैं–हे, जी, अरे, ओ। जैसे : (क) हे भगवान, मुझे बचा लेना।

(ख) अरे ओ नालायक, तुरंत निकल जा यहाँ से।



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 1 : हिन्दी में कारक कितने प्रकार के हैं ?

.....

प्रश्न 2 : कर्म और करण कारक के विभक्ति चिह्न क्या हैं ?

.....

15.4 लिंग

परिभाषा : संज्ञा, सर्वनाम या क्रिया के जिस रूप से पुरुष या स्त्री आदि का बोध हो, उसे लिंग कहते हैं। हिन्दी में लिंग के दो भेद हैं – (क) पुलिंग और (ख) स्त्रीलिंग।

जबकि अनेक भाषाओं में तीन लिंग माने जाते हैं –– पुलिंग, स्त्रीलिंग और नपुंसक लिंग।

पुरुष जाति के बोध से पुलिंग होता हैं। जैसे – राजा, लड़का, घोड़ा आदि।

स्त्री जाति के बोध से 'स्त्रीलिंग' होता है – जैसे – रानी, घोड़ी, लड़की आदि।

जड़त्व के बोध से 'नपुंसक' लिंग होता है। जैसे – कलम, नमक, पत्थर आदि।

प्राणीवाचक शब्दों के लिंग निर्णय में परेशानी नहीं होती। हिन्दी में दो ही लिंग हैं। अत: अप्राणिवाचक शब्दों के लिंग निर्णय में परेशानी हो सकती है। क्योंकि हिन्दी में अप्राणीवाचक शब्द कुछ पुलिंग माने जाते हैं, तो कुछ स्त्रीलिंग। जैसे – रास्ता पुलिंग है, किन्तु राह – स्त्री जबकि दोनों शब्दों का अर्थ एक ही है।

हिन्दी में क्रिया कर्ता के लिंग से प्रभावित होती है जैसे – लड़का आता है। (पु.) लड़की आती है। (स्त्री.)

अप्राणीवाचक शब्दों के लिंग निर्णय के लिए यदि निम्नलिखित नियमों पर ध्यान दिया जाएतो सुविधा होगी।

(अ) नीचे लिखे अप्राणीवाचक शब्द पुलिंग होते हैं–

(1) पहाड़ों के नाम : जैसे – हिमालय, विन्धाचल आदि।

(2) वृक्षों के नाम : आम, कटहल, पीपल।
अपवाद : नीम, इमली, जामुन आदि शब्द स्त्रीलिंग है।

(3) ग्रहों के नाम : सूर्य, चन्द्र, मंगल।
अपवाद : पृथ्वी स्त्रीलिंग है।

(4) दिन और महीनों के नाम : रविवार, सोमवार, चैत, वैसाख, जेठ आदि।

(5) अनाजों के नाम : धान, चावल, गेहूँ।
अपवाद : दाल, अरहर, मटर, मूंग आदि स्त्रीलिंग हैं।

(6) धातुओं के नाम : सोना, लोहा, ताँम्बा। अपवाद – चाँदी स्त्रीलिंग है।

(7) रत्नों के नाम : हीरा, मोती, मुंगा,
अपवाद : मणि स्त्रीलिंग है।

(8) वे भाववाचक संज्ञाएँ जिसके अंद में ना, आव, त्व, पन, पा हो।

जैसे- गाना, बहाव, मनुष्यत्व, लड़कपन, बूढ़ापा।

(9) आन अन्तवाली कृदन्त संज्ञाएँ -

जैसे - लगान, मिलान, नहान।

(10) शरीर के अवयव : सिर, मुँह, मस्तक, कान, गाल

अपवाद : आँख, नख, जीभ आदि शब्द स्त्रीलिंग हैं।

(11) आकारान्त शब्द : आटा, कपड़ा, चमड़ा, पैसा।

अपवाद : हवा, दवा, सजा, पुरिया आदि शब्द स्त्रीलिंग हैं।

(12) द्रव्य पदार्थों के नाम : तेल, पानी, शर्बत।

(13) जल और स्थल के भागों के नाम : जैसे - देश, नगर, समुद्र, आकाश, पाताल।

(आ) स्त्रीलिंग शब्द :

(1) इकारान्त तथा ईकारान्त शब्द : रुति, गति, मति, टोपी, विनती, रोटी गली आदि।

अपवाद : पानी, जी, दही, जी और मोती शब्द पुलिंग होते हैं।

(2) संस्कृत आकारान्त शब्द : आशा, कृपा, माला, प्रार्थना।

(3) ऊकारान्त शब्द : बालू, लू।

(4) जिन शब्दों अन्त में आई, ता, वट, हट, आवट, आस, आहट, इया, ई न, नी री ली इत्यादि प्रत्यय लगते हों -

आई : महँगाई, भलाई, बुराई।

ता: मित्रता, मनुष्यता।

वट: बनावट, सजावट।

आहट या हट : चिकनाहट, कपराट, बुलाहट।

आवट : मिलावट, रुकावट।

आस : प्यास, मिठास।

इया : डिबिया, टिकिया।

ई : गरीबी, अमीरी, गुलामी।

त : चाहत, रंगत।

अपवाद खेत, गात - पुलिंग हैं

नी : चटनी, खैनी, चलनी

री : गठरी, छतरी, कोठरी।

ली : टिकली, डफली।

वटकारन्त शब्द : हाट, बाट।

अपवाद : पेट, घूँघट, जमावाट, छाट आदि शब्द पुलिंग हैं।

(5) नदियों के नाम : गंगा, यमुना, काबेरी।

अपवाद : सिंधु, ब्रह्मपुत्र तथा सोन नदी के नाम पुलिंग हैं।

(6) जिन संज्ञाओं के अन्त में ख हो – मुख, ईख, राख, देख।

अपवाद : ऊस शब्द पुलिंग हैं।

(7) कृदन्त नकारान्त संज्ञाए : जलन, पहचान, सूजन चलन।

(8) तिथियों के नाम : दूज, तीज।

(9) नक्षत्रों के नाम : अश्वनी, भरनी, रोहिणी।

(10) मसालों के नाम : लौंग, इलायची।

अपवाद : धनिया, जीरा, कपूर आदि पुलिंग है।

(11) समूहवाचक संज्ञा : भीड़, फौज, सभा।

अपवाद : समूह, झूठ, परिवार, दल, कुटुम्ब आदि शब्द पुलिंग हैं।

कुछ समासिक शब्दों का लिंग निर्णय अन्तिम पद के अनुसार होता हैं – माँ–बाप (पु.) कर्मशाला (स्त्री.), रसाईघर (पु.) बैलगाड़ी (स्त्री.)।

हिन्दी में कुछ ऐसे भी शब्द हैं जिनके दो अर्थ होते हैं और अर्थ के अनुसार उनमें लिंग भेद होता है। जैसे :

शब्द	अर्थ	लिंग
टीका	तिलक	पु.
टीका	टिप्पणी	स्त्री.
हार	माला	पु.
हार	पराजय	स्त्री.
धूप	सूर्य का प्रकाश	स्त्री.
धूप	सुगन्धित धुआँ	पु.
कोटि	करोड़	पु.
कोटि	श्रेणी	स्त्री.

इस प्रकार के और अनेक शब्द हैं। संस्कृत (तत्सम) के अकारान्त जैसे – अल, स्तंभ, लाभ, सवर्ण आदि पुलिंग हैं। जबकि शिक्षा, मिक्षा, निद्रा, संध्या, परीक्षा आदि शब्द स्त्री. हैं।

हिन्दी के तद्‌भव शब्द संस्कृत के अपने तत्सम रूप के लिंग के अनुसार होते हैं।

तत्सम	लिंग	हिन्दी
आश्चर्य	पु.	अचरज
स्नान	,,	नहान

आम्र	''	आम
पौत्र	''	पोता
कर्पट	''	कपड़ा
दुग्ध	''	दूध
संध्या	''	साँझ
निद्रा	''	नींद
भिक्षा	''	भीख
शिक्षा	''	सीख
लौह	''	लोहा

पुलिंग से स्त्रीलिंग बनाने के कुछ मुख्य नियम

(1) अकारान्त तथा आकारान्त शब्दों को ईकारान्त बना करा स्त्रीलिंग बनते हैं-

पु.	**स्त्री**
देव	देवी
पुत्र	पुत्री
बेटा	बेटी
घोड़ा	घोड़ी
नाना	नानी

(2) अकारान्त तता आकारान्त शब्दों को अन्त को इया में बदल कर स्त्रीलिंग बनाया जाता है-

पु.	**स्त्री**
खाट	खटिया
कुत्ता	कुत्तिया
बन्दर	बन्दरिया
डिब्बा	डिबिया

(3) कुछ व्यावसायवाचक शब्दों में 'इन' लगाकर स्त्रीलिंग बनाए जाते हैं--

पु.	**स्त्री**
तेली	तेलिन
सुनार	सुनारिन
धोबी	धोबिन

(4) कुछ शब्दों में 'इका' लगाकर --

पु.	**स्त्री**
सेवक	सेविका
गायक	गायिका

याचक	याचिका

(5) कुछ शब्दों में 'नी' अथवा 'आनी' लगाकर स्त्रीलिंग बनाते हैं –

पु.	**स्त्री**
शेर	शेरनी
ऊँट	ऊँटनी
हाथी	हथिनी
नौकर	नौकरानी
सेठ	सेठानी

(6) उपाधिवाचक शब्दों में 'आइन' लगाकर –

पु.	**स्त्री**
बाबु	बबुआइन
पंडा	पंडाइन
पंडित	पंडिताइन
ठाकुर	ठकुराइन

(7) कुछ पुलिंग शब्दों के स्त्रीलिंग रूप विशेष प्रकार के होते हैं। जैसे–

पु.	**स्त्री**
पति	पत्नी
बैल	गाय
बाप	माँ
पुरुष	स्त्री
राजा	रानी
भाई	बहन
मर्द	औरत
पिता	माता
ससुर	सास
बर	वधू
विद्वान	विदुषी
बालक	बालिका
भैंसा	भेंस
प्रिय	प्रिया
विद्यार्थी	विद्यार्थिनी
सदस्य	सदस्या

महशय	महाशया
कवि	कवयत्री
स्वामी	स्वामिनी
बहनोई	बहन
साहब	साहिबा
मर्द	औरत
सुनार	सुनरिन

टिप्पणी :

कुछ विद्वानों के अनुसार 'पुलिंग' शब्द की वर्तनी में भेद भी है। जैसे- पुंलिंग, पुलिंग तथा पुलिंग। यहाँ 'पुलिंग' शब्द का प्रयोग किया गया है।



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 3 : निम्नलिखित वाक्यों में गलत या सही का निर्णय कीजिए- (क) हिन्दी में लिंग के तीन भेद हैं।

.....

15.5 वाक्य विचार

सामान्यत: वाक्य सार्थक पदों का समूह है। आचार्य पतंजलि ने वाक्य की परिभाषा इस प्रकार दी है -- ''पूर्ण अर्थ की प्रतीति करानेवाले शब्द-समूह को वाक्य कहते हैं।'' आचार्य विश्वनाथ ने ''आकांक्षा, योग्यता और आसत्ति से युक्त पद समूह को वाक्य माना है।''

निश्चितरूप से वाक्य के कुछ अनिवार्य तत्व होते हैं। एक वाक्य बनने के लिए इन तत्वों का होना जरुरी है। आचार्य कुमारिल भट्ट और विश्वनाथ ने वाक्य में तीन तत्वों को अनिवार्य बताया है -- 1. आकांक्षा, 2. योग्यता, 3. आसत्ति। आकांक्षा का अर्थ है अपेक्षा या जिज्ञासा। कर्ता को कर्म और क्रिया की अपेक्षा रहती है; कर्म को कर्ता एवं क्रिया की तथा क्रिया को कर्ता एवं कर्म की आकांक्षा के कारण वाक्य में पद परस्पर सम्बद्ध होते हैं। यथा: मैं विद्यालय जाता हूँ। यहाँ मैं 'क्या करता है' बोलने से जवाब मिलेगा 'जाना है'। फिर 'कहाँ बोलने से उत्तर होगा 'विद्यालय'। ये तीनों पद एक दूसरे पर निर्भरशील और अपेक्षायुक्त हैं। योग्यता का अर्थ है पदों में पारस्परिक सबंध की योग्यता। खासकर अर्थ और व्याकरणिक दृष्टि से एकरुपता होनी चाहिए। आसत्ति का मतलब है समीपता। वाक्य में समय की समीपता अपेक्षित है।

- **वाक्य के भेद :** वाक्य के भेद दो आधार पर हो सकते है। वे हैं - 1.अर्थ; 2. संरचना।
- **अर्थ के आधार पर वाक्य के भेद :** अर्थ की दृष्टि से वाक्य आठ प्रकार के हो सकते हैं

- *विधानार्थक :* विधानार्थक वाक्य में किसी कार्य के होने की या किसी बात की सूचना होती है। जैसे :
  1. वह घर चला गया।
  2. सूरज उगने से सबेरा होता है।
- *नकरार्थक या निषेधवाचक :* नकारार्थक या निषेधवाचक वाक्यों से किसी बात की अस्वीकृति की सूचना मिलती है या निषेध पाया जाता है। यथा:
  1. मैं आपसे सहमत नहीं हूँ।
  2. आपका प्रस्ताव स्वीकार करना संभव नहीं है।
- *प्रश्नवाचक :* ऐसे वाक्यों में प्रश्न किया जाता है। उदाहरण
  1. वह कौन था?
  2. तुम मुझ पर क्यों इतना नाराज हो?
- *संदेहवाचक :* इसमें कार्य होने में सन्देह या संभावना का आभास होता है। जैसे:
  1. शायद, वह आनेवाले हैं।
  2. हो सकता है यह नौकरी मिल जाए।
- *इच्छावाचक :* इस प्रकार की रचना से इच्छा, कामना, सुझाव, सलाह, किसी बात का आग्रह, अनुरोध या माँग प्रकट की जाती है।ऐसे वाक्यो में क्रिया के विशेष रुपों का प्रयोग किया जाता है। उदाहरण :
  1. मेरा आपसे निवेदन है कि आप मेरी सहायता करें।
  2. ईश्वर करे कि डिम्पी जल्दी ठीक हो जाए।
- *विस्मयवाचक :* इसमें आश्चर्य, हर्ष, शोक , घृणा, क्रोध आदि के भाव प्रकट होते है।यथा :
  1. हाय! यह क्या हो गया!
  2. ओह! तुम कितना सुन्दर हो!
- *आज्ञार्थक :* आज्ञार्थक वाक्यों में किसी को कार्य करने के लिए आज्ञा, आदेश, उपदेश, प्रेरणा दी जाती है। उदाहरण :
  1. तुम पिता के पास चले जाओ।
  2. तू आज घर जा।
- *संकेतवाचक :* ऐसे वाक्यों की क्रिया से किसी कार्य के बारे में शर्त या संकेत की सूचना मिलती है। जैसे :
  1.. तुम मेहनत करोगे तो अच्छा अंक पाओगे।
  2. तुम मुझे जितना दोगे मैं भी उतना ही दूँगा।

- **संरचना के आधार पर वाक्य के भेद :** बनावट या संरचना की दृष्टि से वाक्य तीन प्रकार के होते हैं –

- *सरल वाक्य :* जिस वाक्य में एक उद्देश्य, एक विधेय और एक समापिका क्रिया हैं उसे सरल या साधारण वाक्य कहते हैं। यथा :

  1. मैं सिनेमा देखता हूँ।
  2. आप क्या लेंगे ?

- *संयुक्त वाक्य :* दो या दो से अधिक स्वतंत्र वाक्यों के मेल से बने वाक्य को संयुक्त वाक्य कहते हैं। संयुक्त वाक्य में प्रयुक्त होनेवाले योजक सामान्यत: किन्तु, या, और, यानी, एवं, अथवा, अत:, नहीं तो, फिर, परंतु आदि है। जैसे :

  1. मेरा भाई आगे बढ़ गया और मैं पीछे रह गया।
  2. शाम हुई तो अंधेरा छाने लगा।

- *मिश्र वाक्य :* जिस वाक्य में एक प्रधान उपवाक्य और एक या एकाधिक गौण या आश्रित उपवाक्य होते हैं उसे मिश्र वाक्य कहते हैं। उदाहरण :

  1. मैं उस लड़की को भूल नहीं सकता जिसको कल मैने देखा था।
  2. श्याम आज नहीं आयेगा क्योंकि वह बीमार है।



स्वनिरीक्षण

प्रश्न 4 : वाक्य के अनिवार्य तत्व क्या क्या हैं ?

.....

प्रश्न 5 : संरचना के आधार पर वाक्य के कितने भेद हैं ?

.....

15.6 लोकोक्ति और मुहावरा

- **लोकोक्ति :** 'लोक' और 'उक्ति' से संयोग से लोकोक्ति शब्द बना है। लोक शब्द का अर्थ है जन, लोग, समाज आदि। उक्ति का मतलब है कही हुई या प्रचलित बात। इस प्रकार लोकोक्ति शब्द का अर्थ हुआ समाज में प्रचलित कहावत। हरेक भाषिक समाज में लोकोक्ति का प्रचलन है। दुनिया की हरेक भाषाओं में लोकोक्ति का प्रयोग मिलता है। लोकोक्ति के जरिए बोलचाल में चमत्कार और सरसता आते हैं। इसके द्वारा उस समाज की सोच तथा रीति-रिवाज के बारे में अनुमान लगाया जा सकता है।

  संस्कृत में लोकोक्ति को सुभाषित या सुक्ति कहते हैं जिसका अर्थ है सुन्दर रीति से कहा गया कथन। डॉ कृष्ण प्रसाद उपाध्याय ने लोकोक्ति के बारे में इसप्रकार कहा है -- 'लोकोक्तियाँ अनुभव सिद्ध ज्ञान की निधि है। मानव ने युग युग से जिन तथ्यों का साक्षात्कार किया है उनका प्रकाशन इनके माध्यम से होता है। ये चिरकालीन अनुभूत ज्ञान के सूत्र हैं।'

समास शैली का प्रयोग, अनुभूति और निरीक्षण, सरलता, गीली मीट्टी की महक, उक्ति चमत्कार आदि लोकोक्ति की विशेषताएँ हैं।

विद्वानों ने लोकोक्तियों का वर्गीकरण निम्नलिखित रूप में किया है --

1. स्थान-सम्बन्धी, 2. जाति सम्बन्धी, 3. प्रकृति तथा कृषि संबन्थी,
4. पशु-पक्षी संबन्धी, 5. प्रकीर्ण।

➢ *कुछ प्रसिद्ध लोकोक्तियाँ* :

लोकोक्ति		**अर्थ**
अँधों में काना राजा	--	बहुत मूर्खो के बीच अल्प बुद्धिवान का भी सम्मान होना।
अपना उल्लू सीधा करना	--	अपना मतलब निकलना
आम के आम गुठली के दाम	--	दोहरा लाभ होना।
कटे पर नमक छिड़कना	--	चिढ़े हुए को और चिढ़ाना
कहॉ राजा भोज कहॉ गंगू तेली	--	अनमेल बात
चार दिन की चाँदनी, फिर अंधेरी रात	--	क्षणिक सुख
आगे कुआँ पीछे खाई	--	दोनों ओर से विपत्ति होना
अपना हाथ जगन्नाथ	--	स्वच्छन्द और आत्म निर्भरशील बनना
एक अंडा वह भी गंदा	--	किसी वस्तु के न होने का बराबर होना
गधा खेत खाय जुलाहा मारा जाए	--	अपराध एक करे, दंड दूसरा भोगे
घर की मुर्गी दाल बराबर	--	घर की चीजों का कद्र नहीं होना।
चोर पर मोर	--	एक चालाक को दूसरे चालाक द्वारा ठगना।
जिसकी लाठी उसकी भैंस	--	शक्तिमान हमेशा विजयी होते हैं।
दूध का दूध पानी का पानी	--	इंसाफ करना
धोबी का कुत्ता न घर का न घाट का	--	जिसका एक ओर भी स्थायित्व न हो।

● **मुहावरे :** मुहावरा शब्द मूलत: अरबी भाषा का है। इसका मतलब है -- परस्पर बातचीत और सवाल जवाव करना। मुहावरा की परिभाषा देते हुए त्रिपाठी जी ने लिखा है: ''मुहावरा किसी बोली या भाषा में प्रयुक्त होनेवाला वह अपूर्ण वाक्यखंड है जो अपनी उपस्थिति से समस्त वाक्य को सबल, सतेज, रोचक और चुस्त बना देता है। संसार में मनुष्य ने अपने लोक व्यवहार में जिन जिन वस्तुओं और विचारों को बड़े कौतूहल से देखा और समझा और बार-बार उसका अनुभव किया उन्हीं को उन्होंने शब्दों में बाँध दिया है। वे ही मुहावरे कहलाते हैं।''

मुहावरा गद्यात्मक होते है। यह हमेशा वाक्य का अंगीभूत बन कर रहता है यानी मुहाबरा स्वतंत्र नहीं होता। इसका प्रयोग हमेशा मूल रूप में ही होता है। मुहाबरे का सम्बन्ध वाच्यार्थ से न होकर लक्ष्यार्थ से होता है।

➢ *कुछ प्रसिद्ध मुहावरे :*

मुहावरे		**अर्थ**
अंग अंग ढीला होना	--	थक जाना
अंधे की लकड़ी	--	एकमात्र सहारा
अँख खोलना	--	होश आना
आँखों का तारा	--	अति प्रिय
ईद का चाँद होना	--	बहुत दिनों के बाद दर्शन होना
कलेजा फटना	--	दुखी होना
काम तमाम करना	--	मार डालना
खून का प्यासा	--	जानी दुश्मन
गागर में सागर भरना	--	विस्तृत को संक्षिप्त बनाना
घाव पर नमक छिड़कना	--	दुखी को और दुख देना
चल बसना	--	मरना
छक्के छुड़ाना	--	परास्त करना
ठोकरे खाना	--	भूल करके तकलीफ उठाना
दाँत तोड़ना	--	परास्त करना
पानी फेर देना	--	बिगाड़ देना



15.7 प्रस्तुत अध्याय से हमने सीखा

- हिन्दी के कारक एवं विभक्ति के बारे में।
- लिंग-निर्णय के सम्बन्ध में।
- विशेष अप्रणिवाचक शब्दों के लिंग निर्णय की जटिलता को आसानी से समझने के कुछ महत्वपूर्ण नियम भी सीखे हैं।
- हिन्दी के वाक्य प्रकरण पर जानकारी मिली।
- हिन्दी साहित्य के लोकोक्ति और मुहाबरा के विषय में।



15.8 विस्तृत जानकारी हेतु पढ़े

1) डॉ कृष्णदेव उपाध्याय : *लोकसाहित्य की भूमिका*
2) डॉ कपिलदेव द्विवेदी : *भाषाविज्ञान एवं भाषाशास्त्र*
3) डॉ बहादुर चन्द्र शास्त्री : *लोकोक्तियाँ और मुहावरे*
4) डॉ वासुदेवनन्दन प्रसाद : *सरल हिन्दी व्याकरण और रचना*
5) डॉ भोलानाथ तिवारी : *हिन्दीभाषा*
6) राजेन्द्रप्रसाद सिन्हा : *शुद्ध हिन्दी कैसे सीखे*

15.9 स्वनिरीक्षण का पुनर्निरीक्षण

प्रश्नोत्तर 1 : आठ

प्रश्नोत्तर 2 : को और से

प्रश्नोत्तर 3 : गलत

प्रश्नोत्तर 6 : जब दो या दो से अधिक शब्द अपनी विभक्तियों को छोड़कर एक जगह मिलते हैं, तब उस मेल को समास कहते हैं।

प्रश्नोत्तर 7 : तीन – आकांक्षा, योग्यता, आसक्ति



15.10 सम्भावित प्रश्न

प्रश्न 1 : हिन्दी के कारक और विभक्ति के वारे में विस्तार से लिखिए।

प्रश्न 2 : वाक्यों का वर्गीकरण किन किन आधारों पर किया जाता है? अर्थ आधारित वर्गीकरण के बारे में लिखिए।

प्रश्न 3 : लोकोक्ति और मुहावरे के साथ जनजीवन का कैसा संबंध हैं?

प्रश्न 4 : हिन्दी के संज्ञा, सर्वनाम, क्रिया, विशेषण और अव्यय के विषय पर एक लेख प्रस्तुत कीजिए।

प्रश्न 5 : हिन्दी में अप्राणिवाचक शब्दों का लिंग निर्णय कैसे किया जाता है ?

*** ***** ***



सन्दर्भ ग्रन्थ

1) अमृत राय : *प्रेमचन्द : कलम का सिपाही*
2) अमृत राय : *विविध प्रसंग (तीन खण्ड)*
3) अली सरदार जाफरी : *कबीर वाणी*
4) अशोक चक्रधर : *मुक्तिबोध की काव्य प्रक्रिया*
5) आचार्य रामचन्द्र शुक्ल : *हिन्दी साहित्य का इतिहास*
6) आचार्य रामचन्द्र शुक्ल : *सूरदास*
7) आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी : *हिन्दी साहित्य उद्‌भव एवं विकास*
8) आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी : *हिन्दी साहित्य की भूमिका*
9) आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी : *कबीर*
10) आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी : *सूरदास*
11) डॉ. उदयभानु सिंह (सं.) : *तुलसीदास*
12) डॉ कपिलदेव द्विवेदी : *भाषाविज्ञान एवं भाषाशास्त्र*
13) कुमार कृष्ण : *कहानी के नये प्रतिमान*
14) कुमार सिद्धनाथ ; *हिंदी एकांकी*
15) डॉ कृष्णदेव उपाध्याय : *लोकसाहित्य की भूमिका*
16) डॉ. केदारनाथ सिंह : *आधुनिक हिन्दी कविता में बिम्ब विधान*
17) गोहाईं, हीरेन ; *साहित्यतर सत्य*
18) जोगलेकर, काशीनाथ गोबिन्द ; *समाचार और सवाददाता* ; चौक वराणसी : विश्वविद्यालय प्रकाशन विशालाशी भवन।
19) गणपतिगुप्त : *हिंदी साहित्य का इतिहास*
20) गोपाल राय : *हिन्दी उपन्यास का इतिहास*
21) तिवारी, विश्वनाथ (सं): *प्रेमचन्द*
22) तिवारी, रामचन्द्र ; *आचार्य रामचन्द्र शुक्ल*; विश्वविद्यालय प्रकाशन चौक वाराणसी
23) तिवारी, रामचन्द्र ; *हिन्दी गद्य साहित्य* ; विश्वविद्यालय प्रकाशन, चौक वाराणसी
24) तिवारी, रामचन्द्र ; *आचार्य रामचन्द्र शुक्ल और उनके समकालीन आलोचक*; विश्वविद्यालय प्रकाशन, चौक, वाराणसी
25) ठाकुर, नगेन ; *एख बषरर असमिया उपन्यास*
26) दिनकर : *पंत, प्रसाद, मैथिलीशरण*
27) डॉ. धीरेन्द्र वर्मा : *हिन्दी साहित्य कोश*
28) डॉ. नगेन्द्र (सं) : *हिन्दी साहित्य का इतिहास*
29) नलिन विलोचन शर्मा : *हिन्दी उपन्यास : तथा प्रेमचन्द*
30) नवलकिशोर नवल : *निराला और मुक्तिबोध*
31) निरुपमा सेवती : *खामोशी को पीते हुए*
32) डॉ. नामवर सिंह : *छायावाद*
33) डॉ. नामवर सिंह : *वाद-विवाद सम्वाद*
34) डॉ. नामवर सिंह (सं.) : *आलोचना (नागार्जुन विशेषांक)*

35) डॉ. प्रभाकर माचवे : *नागार्जुन*
36) प्रसाद, वासुदेव नन्दन ;*आधुनिक हिन्दी व्याकरण और रचना* ; पटना :भारती भवन।
37) वर्मा, राम कुमार ; *हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास*
38) डॉ वासुदेवनन्दन प्रसाद : *सरल हिन्दी व्याकरण और रचना*
39) डॉ. विजय बहादुर सिंह : *नागार्जुन का रचना संसार*
40) डॉ. बच्चन सिंह : *हिन्दी साहित्य का दूसरा इहास*
41) डॉ. बच्चन सिंह : *क्रान्तिकारी कवि निराला*
42) डॉ बच्चन सिंह (सं) : *अंथेरे में : इतिहास, संरचना और संवेदना*
43) डॉँ बहादुर चन्द्र शास्त्री : *लोकोक्तियाँ और मुहावरे*
44) डॉ. महावीर अग्रवाल (सं.) : *सापेक्ष (नागार्जुन विशेषांक)*
45) मूर्ति, मंगल ; *शिवपूजन सहाय* ; दिल्ली : साहित्य अकादमी।
46) महेन्द्र, राम चरण ; *एकांकी और एकांकीकार*
47) मिश्र और पांडे ; *हिंदी साहित्य का इतिहास*
48) डॉ. मैनेजर पाण्डेय : *भक्ति आन्दोलन और सूरदास का काव्य*
49) डॉ भोलानाथ तिवारी : *हिन्दीभाषा*
50) राजराणी शर्मा : *हिन्दी उपन्यासों में रुढ़िमुक्ति नारी*
51) राज योगी ब्रह्मकुमार : *महिला सशक्तीकरण*
52) राजेन्द्रप्रसाद सिन्हा : *शुद्ध हिन्दी कैसे सीखे*
53) राजीव सक्सेना : *मैथिलीशरण गुप्त : एक मूल्यांकन*
54) डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी : *प्रसाद, 'निराला', अज्ञेय*
55) डॉ. रामविलास शर्मा : *निराला की साहित्य-साधना*
56) डॉ. रामविलास शर्मा : *महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिंदी नवजागरण*
57) डॉ.रामविलास शर्मा : *प्रेमचन्द*
58) डॉ. रामविलास शर्मा : *प्रेमचन्द और उनका युग*
59) रामदरश मिश्र : *हिन्दी उपन्यास*
60) रामदरश मिश्र : *हिंदी कहानी : अंतरंग पहचान*
61) रेवती रमण : *मैथिलीशरण गुप्त*
62) डॉ ललन राय : *मुक्तिबोध का साहित्य-विवेक और उनकी कविता*
63) डॉ लक्ष्मीनारायण लाल : *आधुनिक हिन्दी कहानी*
64) शिशिर, कर्मेन्दू ; *शिवपूजन सहाय*; दिल्ली: प्रभात प्रकाशन।
65) सिंह डॉ० शुकदेव(सम्पा:) ; *छोटे नाटक*
66) डॉ. सुभाष चन्द्र : *दलित मुक्ति आन्दोलन, सीमाएँ और संभावनाएँ*
67) डॉ. हरवंश लाल शर्मा (सं.) : *सूरदास*
68) डॉ हरदयाल : *हिन्दी कहानी परम्परा और प्रगति*

